इकाई-1

समाज कार्य अनुसंधान

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य (Objectives)
1.1 प्रस्तावना (Introduction)
1.2 समाज कार्य अनुसंधान (Social Work Research)
1.3 सारांश (Summary)
1.4 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)
1.5 सन्दर्भ ग्रन्थ (Reference Books)

1.0 उद्देश्य (Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- समाज कार्य अनुसंधान का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- समाज कार्य अनुसंधान के उद्देश्यों से परिचित हो सकेंगे।
- समाज कार्य अनुसंधान के वर्गीकरण से परिचित हो सकेंगे।
- समाज कार्य अनुसंधान के पिछडे होने के कारणों तथा विकास हेतु आवश्यक सुझावों के प्रस्तुतीकरण में सक्षम हो सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना (Introduction)

मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है वह अज्ञात तथ्यों की खोज करने में निरन्तर आगे बढ़ता रहा है। सर्वप्रथम उसने प्राकृतिक घटनाओं को और बाद में सामाजिक घटनाओं को समझने का भरसक प्रयत्न किया है। सामाजिक घटनायें भी अपने आप में अत्यन्त जटिल हैं। एक ही घटना के पीछे अनेक कारण हो सकते हैं और इन सभी कारणों की खोज करना आसान नहीं है। मनुष्य ने सामाजिक जीवन की अनेक जटिलताओं को समझने का अथक प्रयास किया है। उसने मानव व्यवहार के प्रेरकों को जानने का प्रयास किया है कि ऐसे कौन से नियम हैं जो मनुष्य की प्रेरणाओं एवं मनोवृत्तियों के आधार हैं। उसने अपने सामाजिक पर्यावरण को जानने की दिशा में अधिकांश खोज की हैं। मनुष्य क्यों और कैसे आदि प्रश्नों का उत्तर खोजने के प्रयास में व्यस्त रहा है।

1.2 समाज कार्य अनुसंधान (Social Work Research)

अर्थ (Meaning)

समाज कार्य अनुसंधान के अर्थ को स्पष्ट करने के पहले सामाजिक अनुसंधान, समाज कार्य अनुसंधान और समाज विज्ञान अनुसंधान के अन्तरों को स्पष्ट करना आवश्यक होगा। समाज कार्य के साहित्य का अध्ययन करने से पता चलता है कि प्रारम्भ में सामाजिक अनुसंधान शब्दावली प्रयोग में लाई जाती थी । 1922 में **मेरी रिचमण्ड (Mary Richmund)** ने 'समाज कार्य इअर बुक' में, सामाजिक अनुसंधान, शब्द का प्रयोग किया । 1933 में प्रकाशित समाज कार्य इअर बुक में 'समाज

कार्य अनुसंधान' शब्दावली का प्रयोग किया गया। काफी लम्बी अवधि तक समाज कार्य अनुसंधान तथा सामाजिक अनुसंधान कार्य दोनों अवधारणाएँ बदल-बदल कर प्रयोग में लायी जाती रहीं। परन्तु अब समाज कार्य अनुसंधान को एक अधिक विस्तृत अवधारणा मान लिया गया है। **ईवान क्लेग (Evan Kleg)** के अनुसार ''समाज कार्य में अनुसंधान'' तथा सामाजिक अनुसंधान' प्रायः एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग में लाये गये हैं, तथा दोनों शब्दों का प्रयोग इतनी ढिलाई के साथ किया गया है कि उनकी विषय वस्तु अनिश्चित परिलक्षित हो रही है।अमेरिका में एक ''वर्कशाप आन रिसर्च इन सोशल वर्क'' आयोजित की गई जिसमें जनवरी 1948 में कहा गया कि समाज कार्य और सामाजिक अनुसंधान ''मौलिक सामाजिक विज्ञानों में से किसी गति की ओर निर्देशित होता है जबकि समाज कार्य में अनुसंधान व्यावसायिक कार्यकर्ताओं एवं समुदाय द्वारा समाज कार्य करते समय अनुभव की जाने वाली समस्याओं से सम्बन्धित है।''वर्कशाप प्रतिवेदन में ''सामाजिक अनुसंधान'' और ''समाज विज्ञान अनुसंधान'' अवधारणाओं को समानार्थक समझा गया है जो उपयुक्त नहीं है। इस बात को और भी स्पष्ट किया जा सकता है-

(1) ''अनुसंधान'' में अर्थपूर्ण प्रश्नों और समस्याओं का उत्तर या समाधान ढूंढ़ने के लिए वैज्ञानिक प्रणालियों और कार्यविधियों का प्रयोग किया जाता है;

(2) सामाजिक अनुसंधान शब्द का अभिप्राय ज्ञान की वृद्धि सुधार अथवा जांच करने के लिये सामान्यीकरण के उद्देश्य से सामाजिक घटनाओं पर ''अनुसंधान'' अर्थात् वैज्ञानिक प्रणालियों एवं कार्यविधियों के प्रयोग से है, चाहे वह ज्ञान सिद्धान्त के निर्माण या कला के प्रयोग में सहायता दे। इस प्रकार सामाजिक शोध शब्द को अधिक विस्तृत मानना चाहिये, क्योंकि समाज विज्ञान शोध और समाज कार्य शोध दोनों ही इसमें सम्मिलित हैं।

समाज कार्य अनुसंधान की परिभाषाएं (Definitions of Social Work Research)

समाज कार्य अनुसंधान को विभिन्न विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है-

फ्लेचर (Joan Fletcher) ने समाज कार्य में अनुसंधान को''समाज कार्य के कार्यों एवं प्रणालियों की वैधता की वैज्ञानिक जांच'' कहकर परिभाषित किया है।''

क्लीन (Klien) के अनुसार, "ज्ञान का संग्रह जो समाज कार्य में चेतन प्रयोग के लिए और अभ्यासकर्ताओं में निपुणता के विकास के लिए उपलब्ध है वह कुछ तो सामाजिक एवं प्राणिशास्त्रीय विज्ञानों से लिया गया है और कुछ कार्य क्रियाओं की वास्तविक सम्पादन से, इस प्रकार किये हुए तथ्यों को जब संगठित एवं नियमबद्ध किया जाता है तो समाज कार्य के विज्ञान का निर्माण होता है। जब यह तथ्य ज्ञात किये जाते हैं तो संकेत एवं ज्ञान इन नियमों द्वारा नियमबद्ध किये जाते हैं और उन्हें सामान्य सिद्धान्तों का रूप दिया जाता है तब समाज कार्य अनुसंधान की उत्पत्ति होती है"।

मैक्डोनाल्ड (Mac Donald) के अनुसार, "समाज कार्य अनुसंधान के अन्तर्गत वे प्रश्न सम्मिलित होते हैं जो समाज कार्य सेवाओं के नियोजन या प्रशासन के बीच उठते हैं, जो समाज कार्य तत्वावधानों के अन्तर्गत अन्वेषण के लिए उपयुक्त होते हैं"।

फ्रीडलैण्डर (Friedlander) के अनुसार, "समाज कार्य में अनुसंधान समाज कार्य ज्ञान एवं निपुणता की जाँच, सामान्यीकरण और विस्तार करने के लिए समाज कार्य संगठन, कार्य एवं प्रणालियों की वैधता की आलोचनात्मक पूँछताछ एवं वैज्ञानिक परीक्षण है।''

समाज कार्य अनुसंधान के उद्देश्य (Objectives of Social Work Research)

समाज कार्य शोध का प्रमुख कार्य समाज कार्य के उद्देश्यों को पूरा करने, नवीन ज्ञान की खोज करने एवं सेवार्थियों की समस्याओं के कारणों आदि को जानने में समाज कार्य की सहायता करना है। समाज कार्य के अन्तर्गत शोध को समाज कार्य व्यवसाय की प्रकृति के कारण ही ऐसा ज्ञान अवश्य प्रस्तुत करना चाहिए जिसे समाज कार्य समस्याओं के साथ कार्य करते हुए वास्तविक प्रयोग में प्रयुक्त किया जा सके। इस आधार पर समाज कार्य शोध के निम्नलिखित उद्देश्यों का वर्णन किया जा रहा है:

(1) समाज कार्य शोध का प्रमुख उद्देश्य समाज कार्य के सिद्धान्त और व्यवहार में सम्बन्ध स्थापित करना,
(2) नवीन ज्ञान की प्राप्ति और विकास करना, समाज कार्य के क्षेत्र में इसका उपयोग करना ताकि व्यक्ति, समूह और समुदाय लाभान्वित हो सकें,
(3) समाज कार्य की अवधारणाओं का परीक्षण करना एवं मान्यता प्राप्त अवधारणाओं का विकास करना,
(4) सामाजिक नीतियों, क्रियाओं एवं विधानों को सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति एवं समस्याओं के समाधान से सम्बद्ध करना,
(5) वैयक्तिक एवं सामाजिक विघटन के कारणों की खोज करना एवं संगठनात्मक शक्तियोंको प्रोत्साहित करना,
(6) विभिन्न अनुसंधान प्रविधियों को अधिक परिष्कृत एवं परिमार्जित करना, तथा
(7) समाज कार्य की प्रणालियों में अधिकतम सहयोग की स्थापना एवं विकास हेतु समन्वय के क्षेत्रों का पता लगाना एवं इनके पारस्परिक योगदान की स्पष्ट व्याख्या करना।

समाज कार्य अनुसंधान के अन्य कुछ विशिष्ट उद्देश्य इस प्रकार हैं-

(1) समाज कार्य के लिए आवश्यक ज्ञान के स्रोत को परिवर्द्धित करना तथा उसके उद्देश्यों साधनों, निपुणताओं एवं दर्शन सम्बन्धी पुनर्विचार करने की दिशा में पहल करना।
(2) समाज कार्य अवधारणाओं का परीक्षण करते हुए मान्यता प्राप्त समाज कार्य शब्दावली का विकास करना।
(3) मानवीय जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में समाज कार्य सेवा की आवश्यकताओं का पता लगाना, प्रदान की जाने वाली समाज कार्य सेवा का गुणात्मक एवं परिमाणात्मक विश्लेषण करना और उन्हें दिशा प्रदान करने का सुझाव देना।
(4) विभिन्न सामाजिक परिस्थितियां के लिए विभिन्न नीतियों, योजनाओं और कार्यक्रमों आदि की प्रभावपूर्णता का मूल्यॉंकन करना और उन्हें लागू करने के लिए समाज कार्य के विभिन्न तरीकों के गुणों एवं दोषों का पता लगाकर उनमें आवश्यक संशोधन करना।

समाज कार्य शोध का वर्गीकरण (Classification of Social Work Research)

समाज कार्य शोध का प्रमुख उद्देश्य सेवार्थियों को उनकी अपनी संस्कृति एवं पर्यावरण से अलग किये बिना उनको अपनी सामाजिक परिस्थितियों में ही समायोजित करने में सहायता प्रदान करना है। समाज कार्य शोध को कला एवं विज्ञान दोनों के रूप में स्वीकार किया जा चुका है। इसकी वैज्ञानिकता का परीक्षण क्रमबद्ध सुव्यवस्थित ढंग से किया जा सकता है और इसकी कला

उत्तरदाताओं से पूछे जाने वाले प्रश्नों के तरीके से स्पष्ट होती है। समाज कार्य शोध मुख्यतः इन दोनों को अपने में समाहित किए है।

किसी भी शोध के लिए वैज्ञानिक विधि का उपयोग शोध को अत्यधिक प्रभावशाली, स्पष्ट एवं नवीन ज्ञान की खोज के लिए किया जाता है। समाज कार्य शोध विशेषतया मनुष्य एवं उसके सामाजिक पर्यावरण के मध्य अन्तःसम्बन्धों को विकसित करने एवं नवीन जानकारी उपलब्ध कराने का एक प्रयास है, जोकि सेवार्थियों को उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायता करता है और एक अच्छे वातावरण का निर्माण करता है, साथ ही शोध कार्यों के माध्यम से सामाजिक समस्याओं के कारणों की खोज करते हुए उनका निदान करता है। इस दृष्टि से समाज कार्य के शोध का क्षेत्र हम उन सामाजिक परिस्थितियों, घटनाओं एवं समस्याओं को मान सकते हैं जोकि वैयक्तिक एवं सम्पूर्ण समाज के विकास में बाधक हैं।

ग्रीन वुड (Greenwood) ने समाज कार्य शोध को वर्गीकृत करते हुए इसे दो भागों में विभक्त किया है:

(1) मौलिक समाज कार्य शोध (Fundamental Social Work Research)

(2) परिचालनात्मक समाज कार्य शोध (Operational Research)

ग्रीन वुड के अनुसार, ''समाज कार्य ज्ञान का ऐसा शोध जो तत्कालीन लाभ हेतु कम उपयोगी है, को मौलिक समाज कार्य शोध कह सकते हैं।'' सामान्यतः समाज कार्य शोध व्यावहारिक एवं परिचालनात्मक है, इसकी सापेक्ष मौलिकता है।

1. मौलिक समाज कार्य शोध (Fundamental Social Work Research)

(i) ऐतिहासिक समाजशास्त्रीय ज्ञान

(ii) समाज कार्य इतिहास

(iii) समाज कार्य दर्शन

(iv) समाज कार्य संस्कृति

(v) परिमापन सिद्धान्त

(vi) प्रयोग सिद्धान्त या अभ्यास सिद्धान्त

2. परिचालनात्मक शोध (Operational Research)

(अ) विवरणात्मक सांख्यिकी

(ब) नियोजन सम्बन्धी सूचना

(स) प्रशासकीय सूचना

समाज कार्य शोध के विभिन्न क्षेत्रों का वर्गीकरण अमेरिका की **वेस्टर्न रिजर्व यूनिवर्सिटी के स्कूल आफ अप्लाईड सोशल साइंसेज** द्वारा 1947 में कराई गई 'वर्कशाप आन रिसर्च इन सोशल वर्क' के प्रतिवेदन द्वारा निम्नलिखित रूप में किया गया:

(1) प्रशासकीय उद्देश्यों के लिए शोध

(i) धन का व्यय

(ii) वित्तीय अभिलेखों के स्वरूप एवं कार्यरीतियाँ

(iii) सेवा लेखा

(iv) कर्मचारीगण
(v) सेवा के प्रकार एवं सीमा का परिमापन
(vi) नीति के कार्यान्वयन से सम्बन्धित समस्याएँ
(vii) कोष एकत्रीकरण के ढंगों की निपुणता
(viii) विकास हेतु जन-सामान्य के सम्बन्धों की समस्याएँ

(2) नियोजन सम्बन्धी उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए शोध

(i) मौलिक अनुसंधान
(ii) परीक्षण की आवश्यकता सुनिश्चित करने वाली समाज कार्य अभ्यास की मान्यताएँ
(iii) मनो-सामाजिक समस्याओं की प्रकृति, निदान एवं उपचार की प्रक्रिया
(iv) शोध प्रणालियाँ
(v) निजी एवं सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य कार्यों का विभाजन

उपर्युक्त वर्गीकरणों के अध्ययन एवं अवलोकन से स्पष्ट होता है कि समाज कार्य शोध के क्षेत्र समाज कार्य के क्षेत्रों से पृथक नहीं हैं वरन् लगभग एक समान ही हैं क्योंकि समाज कार्य शोध का उद्देश्य समाज कार्य की प्रभावपूर्णता में विकास करना है। उपरिवर्णित वर्गीकरण के आधार पर समाज कार्य शोध के कुछ अन्य क्षेत्रों को निम्नलिखित रूप से वर्गीकृत किया जा सकता है:

(i) समस्या-समाधान के लिए आवश्यकताओं का निर्धारण
(ii) आवश्यकताओं की प्रभावशीलता का मूल्यांकन
(iii) आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वांछित क्षमता की खोज
(iv) समाज कार्य की अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों की वैधता का अन्वेषण
(v) शोध पद्धतियों एवं उपकरणों का निर्माण
(vi) विभिन्न समाज विज्ञानों से प्राप्त अवधारणाओं एवं सिद्धान्तों का अन्वेषण
(vii) सेवार्थियों यथा व्यक्ति, समूह या समुदाय के मूल्यों, परम्पराओं एवं मनो-सामाजिक समस्याओं का अन्वेषण।

सुगत दास गुप्ता ने समाज कार्य शोध के क्षेत्रों को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है:

(i) श्रम परिस्थितियाँ,
(ii) कर्मचारीगण प्रबन्ध एवं औद्योगिक मनोविज्ञान,
(iii) जनजातीय कल्याण,
(iv) ग्रामीण सामुदायिक विकास,
(v) नगरीय सामुदायिक विकास,
(vi) शोषित समूहों का कल्याण,
(vii) सामुदायिक संगठन,
(viii) समाज कार्य एवं कल्याण सेवाएँ,
(ix) समाज कार्य एवं आर्थिक कल्याण,
(x) परिवार कल्याण,
(xi) महिला कल्याण,
(xii) निराश्रितों का कल्याण,

(xiii) बाल कल्याण,

(xiv) विकलांगों का कल्याण,

(xv) अपराध शास्त्र, बाल अपराध एवं सुधारवादी प्रशासन,

(xvi) चिकित्सकीय समाज कार्य,

(xvii) मनोचिकित्सकीय समाज कार्य, तथा

(xviii) संस्थाओं का सर्वेक्षण।

अमेरिकन सोसोलाजिकल सोसाइटी (American Sociological Society) ने सामाजिक शोध के क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित अध्ययन विषयों को सम्मिलित करने के पक्ष में राय दी है।

1. मानव प्रकृति तथा व्यक्तित्व का अध्ययन (Study of Human Nature and Personality)
2. जनसमूह तथा सांस्कृतिक समूह का अध्ययन (Study of Public Groups & Cultural Groups)
3. परिवार की प्रकृति, अन्तनिर्हित नियम, संगठन एवं विघटन का अध्ययन
4. संगठन तथा संस्थाओं का अध्ययन
5. जनसंख्या एवं प्रादेशिक समूहों का अध्ययन, जिनके अन्तर्गत एक क्षेत्र विशेष में निवास करने वाली जनसंख्या तथा उस क्षेत्र में विद्यमान सामुदायिक परिस्थितियों का अध्ययन सम्मिलित है।
6. ग्रामीण समुदायों का अध्ययन, इसके अन्तर्गत ग्रामीण जनसंख्या, ग्रामीण परिस्थिति, ग्रामीण व्यक्तित्व एवं व्यवहार-प्रतिमानों और उसमें अन्तर्निहित धारणाओं तथा नियमों एवं ग्रामीण संगठन और संस्थाओं का अध्ययन सम्मिलित है।
7. सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन इसके अन्तर्गत समाचार पत्र, मनोरंजन, त्यौहारों का मनाना, प्रचार, पक्षपात, जनमत, चुनाव, युद्ध आदि सामूहिक व्यवहारों का अध्ययन आता है।
8. समूहों में पाए जाने वाले संघर्ष तथा व्यवस्थापन का अध्ययन। इसके अन्तर्गत धर्म का समाजशास्त्र, शिक्षा तथा अधिनियम, सामाजिक परिवर्तन तथा सामाजिक विकास का अध्ययन आता है।
9. सामाजिक समस्याओं, सामाजिक व्याधियों तथा सामाजिक अनुकूलन का अध्ययन। इसके अन्तर्गत निर्धनता तथा अपराध व बाल अपराध, स्वास्थ्य, मानसिक व्याधि स्वास्थ्य रक्षा इत्यादि आते हैं।
10. सिद्धान्त तथा पद्धतियों में नवीन सामाजिक नियमों की खोज पुराने सिद्धान्त तथा विधियों की पुनः परीक्षा, सामाजिक जीवन में अन्तर्निहित सामान्य नियम व प्रक्रियाएं तथा नवीन पद्धतियों की खोज शामिल है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि समाज कार्य का क्षेत्र अत्याधिक व्यापक है।

समाज कार्य अनुसंधान के पिछडे होने के कारण (Reasons of Insufficient Research in Social Work)

समाज कार्य अनुसंधान की वर्तमान स्थिति को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता है। केवल कुछ ही समाज कार्य के विश्वविद्यालय ऐसे हैं जो पी-एच. डी. की उपाधि के लिए पाठ्यक्रमों का आयोजन

सुचारू रूप से कर रहे हैं। इन यूनिट प्रबन्धों में भी अधिकतर अन्वेषणात्मक एवं विवरणात्मक होते हैं। प्रयोगात्मक प्ररचना का प्रयोग करते हुए पूर्ण किये गये अनुसंधान नहीं के बराबर हैं।

अधिकतर समाज कार्य के विद्यालयों में स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी एक परियोजना रिपोर्ट तैयार करता है। रिपोर्ट अधिकतर पहले से किये गये कार्यों से मिलती-जुलती हुई होती है।

समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा भी समाज कार्य अनुसंधान को उचित प्रोत्साहन नहीं प्रदान किया जाता है क्योंकि निजी क्षेत्र की समाज कल्याण संस्थाओं की अर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है तथा सार्वजनिक समाज कल्याण संस्थाओं में नियम एवं कार्यरीतियाँ इतनी कठोर हैं कि अनुसंधान के लिए आवश्यक स्वतंत्र वातावरण उपलब्ध नहीं हो पाता है।

समाज कार्य अनुसंधान के पिछडे होने के अन्य कारण इस प्रकार हैं-

1. प्रजातांत्रिक समाजवाद के लक्ष्य का दम भरने के बावजूद हमारी राष्ट्रीय समाज कल्याण नीति समाज कल्याण को उचित प्रोत्साहन एवं संरक्षण प्रदान करने वाली नहीं रही है। इसका परिणाम यह है कि केवल कुछ विश्वविद्यालय एवं वैज्ञानिक तथा निजी संस्थाओं को छोड़कर संघीयसूची के अन्तर्गत स्वास्थ्य, शिक्षा तथा समाज कल्याण को सम्मिलित नहीं किया गया है।
2. सरकार द्वारा समाज कार्य की स्नातकोत्तर डिग्री को समाज कल्याण सेवाओं के लिए अनिवार्य शर्त के रूप में भी पूर्ण स्वीकृती प्राप्त नहीं है। जिससे समाज कार्य अनुसंधान तथा समाज कार्य व्यवसाय के विकास को गम्भीर रूप से क्षति हुई है।
3. सरकारी अधिकारी विशेष रूप से आई.ए.एस. तथा पी.सी.एस. अधिकारी समाज कार्य को सही रूप में पहचानने में असमर्थ रहते हुए राजकीय संस्थाओं के सहयोग से होने वाले समाज कार्य अनुसंधान में अवरोध बनते हैं।
4. सार्वजनिक समाज कल्याण संस्थाओं के अन्तर्गत नियमों एवं कार्यरीतियों पर अधिक बल देने से समाज कार्य अनुसंधान की सही स्थापना नहीं हो पाती है
5. समाज कार्य स्कूल में शोधकार्य (विद्यार्थियों द्वारा) मध्यम स्तर का करके येन केन प्रकारेण उपाधि प्राप्त करना चाहते हैं।
6. समाज कार्य स्कूल में शोध निर्देशित करने वाले अधिकतर शिक्षकों का सांख्यिकी में उच्च स्तरीय ज्ञान तथा विशेष रूप से समाज कार्य अनुसंधान में सांख्यिकी के प्रयोग से सम्बन्धित ज्ञान की कमी का अनुभव होता है।
7. विश्वविद्यालयों के एक विभाग के रूप में कार्य करने वाले समाज कार्य के छात्र विश्वविद्यालय के सामान्य नियम एवं कार्यरीतियों से बंधे होने के कारण उन्हें समाज कार्य अनुसंधान के लिए उपयुक्त वातावरण नहीं मिल पाता है।
8. स्वतंत्र रूप से कार्य करने वाले समाज कार्य स्कूल के पास से प्राप्त होने वाली सहायता उपयुक्त एवं आवश्यकता के समय उपलब्ध नहीं हो पाती है।
9. समाज कार्य स्कूल को विभिन्न सहायता प्रदान करने वाली संस्थाओं द्वारा निर्धारित परियोजनायें इन संस्थाओं के अनावश्यक हस्तक्षेप के कारण समुचित रूप से नहीं चल पाती हैं।
10. निजी क्षेत्र में पाई जाने वाली संस्थायें कुछ गिने चुने चंद सदस्यों कथित ऐच्छिक समाज सेवियों के हाथ में हैं जो इसका उपयोग अपने स्वार्थ हेतु ज्यादा करते हैं।

11. समाज कल्याण संस्थाओं में समाज कार्य में अप्रशिक्षित कर्मचारियों के सेवारत होने के कारण समाज कार्य अनुसंधान के लिए आवश्यक अभिमुखीकरण नहीं हो पाता है।
12. समाज कार्य शब्दावली का समुचित विकास न हो पाने के कारण अनुसंधान में प्रमाणिकता एवं तुलनात्मकता की कमी है।

समाज कार्य अनुसंधान के विकास हेतु आवश्यक सुझाव (Suggestions for Development of Social Work Research)

1. सरकार को चाहिए कि वह समाज कल्याण कार्यक्रमों के आयोजन का अधिकतम उत्तरदायित्व स्वयं वहन करें तथा योजनाओं के अन्तर्गत सम्पूर्ण धनराशि का पर्याप्त रूप से बड़ा प्रतिशत कल्याण कार्यक्रमों के लिए निर्धारित किया जाये।
2. सरकार को चाहिए कि वह विशेषीकृत समाज कल्याण संस्थानों में केवल प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं को नियुक्त करें।
3. समाज कल्याण विभागों में सर्वोच्च अधिकारी को रूप में आई.ए.एस. तथा पी.सी.एस. अधिकारियों की नियुक्त न करें उनके स्थान पर समाज कार्य व्यवसाय में प्रशिक्षित समाज कार्यकर्ताओं की ही नियुक्त करें।
4. सार्वजनिक समाज कल्याण संस्थाओं के तत्वावधान में किये जाने वाले समाज कार्य अनुसंधान के लिए नियमों एवं कार्यरीतियों को लचीला बनाया जाय ताकि उपयुक्त एवं स्वतन्त्र वातावरण की स्थापना हो सके।
5. समाज कल्याण के क्षेत्र को अधिक विस्तृत एवं व्यापक बनाया जाये ताकि समाज कार्य के विद्यार्थियों को सेवायोजन के अवसर स्पष्ट परिलक्षित होने के साथ-साथ उनमें उच्च स्तरीय अनुसंधान के लिए आवश्यक संप्रेरणा जागृति हो।
6. विश्वविद्यालय के अधीन कार्य करने वाले समाज कार्य विभागों को अपने विषय में नीतियों के निर्धारण के क्षेत्र में विभागों की तुलना में अधिक स्वतन्त्रता प्रदान की जाए।
7. स्वतन्त्र रूप से कार्य करने वाले सहायता प्राप्त समाज कार्य विभाग को वित्तीय सहायता उपयुक्त समय पर प्रदान की जानी चाहिए।
8. निजी क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं को अनुदान देने की एक अनिवार्य शर्त के रूप में इस बात का प्रावधान किया जाय कि इनकी कार्यकारिणी के अन्तर्गत आधे से अधिक प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्ता अवश्य हों तथा कर्मचारियों के रूप में नियुक्त केवल समाज कार्य व्यवसाय में प्रशिक्षित समाज कार्य के कार्यकर्ता ही हो।
9. समाज कार्य स्कूल एवं समाज कल्याण संस्थाओं के बीच प्रभावपूर्ण संचार का विकास किया जाना चाहिए।
10. समाज कार्य अनुसंधान को अधिक से अधिक विषयात्मकता के साथ संचालित किया जाए तथा अनुसंधान समस्या से सम्बन्धित यथासम्भव सभी तथ्यों को एकत्रित किया जाये।
11. समाज के अन्तर्गत समस्याओं का चुनाव पर्याप्त सोच विचार के पश्चात् व्यवसाय के विकास को दृष्टि में रखते हुए किया जाना चाहिए तथा अनावश्यक रूप से अन्य विद्या विशेषज्ञों में अपनी कुशलता को प्रमाणित करने हेतु अनुसंधान कार्य नहीं किया जाना चाहिए।
12. स्पष्ट रूप से एवं सूक्ष्मता के साथ परिभाषित समाज कार्य शब्दावली का विकास किया जाए।

13. अमरीका की काउन्सिल आफ सोशल वर्क एजूकेशन (Council of Social Work Education) की भाँति अखिल भारतीय स्तर पर भारतीय समाज कार्य शिक्षा परिषद की स्थापना की जाए जो एक सलाहकारी एवं समन्वयकारी संस्था के रूप में कार्य कर सके।
14. समाज कार्य अनुसंधान की प्रशासकीय व्यवस्था पर्याप्त रूप से लचीली तथा अनुसंधान को प्रोत्साहन प्रदान करने वाली होनी चाहिए।
15. विभिन्न समाज कार्य विद्यालयों को अपने-अपने क्षेत्र में कार्य करने वाली समाज कल्याण संस्थाओं को उनकी सामान्य क्रिया तथा विशेष रूप से समाज कार्य अनुसंधान के क्षेत्र में सलाह मसविरा प्रदान करना चाहिए।
16. समाज कार्य विद्यालयों में प्राध्यापकों के अध्यापन एवं क्षेत्रीय कार्य अधीक्षण सम्बन्धी कार्य भार कम करने के लिए अतिरिक्त अध्यापकों की नियुक्ति की जाए।
17. स्वतंत्र रूप से कार्य करने वाले सहायता प्राप्त समाज कार्य विद्यालयों को वित्तीय सहायता उपयुक्त समय पर प्रदान की जानी चाहिए, और आर्थिक सहायता प्रदान करके शोध करवाने वाली विभिन्न संस्थाओं को चाहिए कि वे इन विद्यालयों द्वारा किए जाने हवाले अनुसंधान कार्य में अनावश्यक हस्तक्षेप न करें तथा अपने नियमों एवं कार्यरीतियों को इतना सरल एवं लचीला बनाएँ कि इन परियोजनाओं को स्वीकार करने वाले समाज कार्य प्राध्यापकों में अनुसंधान के लिए आवश्यक उत्साह एवं सक्रियता बनी रहे।

1.3 सारांश (Summary)

प्रस्तुत इकाई के द्वारा सामाजिक अनुसंधान की अवधारणा, परिभाषा, उद्देश्य, वर्गीकरण, पिछडे होने के कारण तथा विकास हेतु सुझाव दिये गये हैं। सामाजिक महत्व को बताया गया है कि किस प्रकार सामाजिक अनुसंधान सामान्य जन-मानस के लिये उपयोगी हो सकता है। सामाजिक अनुसंधान के द्वारा विद्यार्थियों में वैज्ञानिक तथा प्रमाणिक अध्ययन के प्रति अभिरूचि पैदा करना है।

1.4 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

1. समाज कार्य अनुसंधान को परिभाषित कीजिए तथा उसके उद्देश्यों को बताइए।
2. समाज कार्य अनुसंधान से आप क्या समझते हैं? इसके पिछडे होने के कारणों का वर्णन कीजिए।
3. समाज कार्य अनुसंधान के विकास हेतु आवश्यक सुझावों को प्रस्तुत कीजिए।

1.5 सन्दर्भ ग्रन्थ (References)

- P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research, 1960
- Burgess, E.W., Social Survey, A Field for constructive service by development for sociology, 1916
- Kleg, Evan, Research in Social Work, Social Work Year Book, ASWA, 1935
- Lundberg, Social Research

- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 2

सामाजिक अनुसंधान

इकाई की रूपरेखा :

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सामाजिक अनुसंधान की अवधारण
2.3 सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य
2.4 सामाजिक अनुसंधान के प्रकार
2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्न
2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सामाजिक अनुसंधान के अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति को समझ सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
- सामाजिक अनुसंधान के कार्य एवं प्रकारों से परिचित हो सकेंगे

2.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सामाजिक अनुसंधान का अर्थ, परिभाषा, विशेषता, प्रकृति, उद्देश्य एवं प्रकार के बारे में बताया गया है। विद्यार्थियों में शोध के प्रति अभिरूचि पैदा करना भी इस इकाई का मुख्य विषय है। सामाजिक विज्ञान में भी शोध का विशेष महत्व है क्योंकि शोध के द्वारा ही सामाजिक समस्याओं का निराकरण अच्छी तरह से किया जा सकता है।

2.2 सामाजिक अनुसंधान की अवधारण (Concept of Social Research)

अर्थ (Meaning)

मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है वह अज्ञात तथ्यों की खोज करने में निरन्तर आगे बढ़ता रहा है। सर्वप्रथम उसने प्राकृतिक घटनाओं को और बाद में सामाजिक घटनाओं को समझने का भरसक प्रयत्न किया है। सामाजिक घटनायें भी अपने आप में अत्यन्त जटिल हैं। एक ही घटना के पीछे अनेक कारण हो सकते हैं और इन सभी कारणों की खोज करना आसान नहीं है। मनुष्य ने सामाजिक जीवन की अनेक जटिलताओं को समझने का अथक प्रयास किया है। उसने मानव व्यवहार के प्रेरकों को जानने का

प्रयास किया है कि ऐसे कौन से नियम हैं जो मनुष्य की प्रेरणाओं एवं मनोवृत्तियों के आधार हैं। उसने अपने सामाजिक पर्यावरण को जानने की दिशा में अधिकांश खोज की हैं। मनुष्य क्यों और कैसे आदि प्रश्नों का उत्तर खोजने के प्रयास में व्यस्त रहा है।

वर्तमान समय में मनुष्य सामाजिक अनुसंधान का प्रयोग करते हुए अनेक नवीन तथ्यों की खोज करने में लगा है। आज समाज में अनेक प्रकार की समस्याओं के कारणों का पता लगाने के लिए अनुसंधान के विभिन्न प्रकारों का उपयोग किया जा रहा है। अनुसंधान कार्यों द्वारा उन प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास किया जाता है जिनका उत्तर साहित्य में उपलब्ध नहीं है अथवा मनुष्य के संज्ञान में नहीं है। उन समस्याओं का समाधान खोजने का प्रयत्न किया जाता है जिनका समाधान उपलब्ध नहीं है और न ही मनुष्य के संज्ञान में है।

अनुसंधान एक प्रक्रिया है जिसमें प्रदत्तों के विश्लेषण के आधार पर किसी समस्या की विश्वसनीयता को ज्ञात किया जाता है। अनुसंधान एक व्यवस्थित तथा सुनियोजित प्रक्रिया है जिसके द्वारा मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है और मानव जीवन को सुखी एवं समृद्ध बनाया जाता है। अनुसंधान में नवीन तथ्यों का सत्यापन किया जाता है। शोध कार्यों द्वारा प्राचीन प्रत्ययों तथा तथ्यों का नवीन निर्वचन किया जाता है। ऐसी परिस्थितियों की जानकारी की जाती है जिनमें विशिष्ट तथ्य क्रियाशील होते हैं तथा अन्य क्रियाशील नही होते, जबकि वे तथ्य समान प्रतीत होते हैं।

जब सामाजिक प्रघटना के सम्बन्ध में खोज की जाती है तो उसे सामाजिक अनुसंधान कहते हैं। यह अनुसंधान या शोध सामाजिक जीवन, समाज से सम्बन्धित घटनाओं एवं सामाजिक संरचना तथा सामाजिक जटिलताओं से सम्बन्धित हो सकता है। सामाजिक अनुसंधान एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से समाज में होने वाली किसी भी घटना के कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज की जाती है तथा उसके परिणामो के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया जाता है | सरल शब्दों में हम कह सकते हैं, सामाजिक अनुसंधान अथवा शोध वैज्ञानिक पद्धतियों के अनुसरण के द्वारा सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति करने एवं विद्यमान ज्ञान का सत्यापन करने की प्रक्रिया है।

सामाजिक अनुसंधान की परिभाषाएँ(Definitions of Social Research)

विद्वानो ने सामाजिक अनुसंधान की परिभाषाएँ दी हैं, कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं:

व्हिटनी (Whitney) के अनुसार, ''समाजशास्त्रीय अनुसंधान में मानव-समूहों के सम्बन्धों का अध्ययन होता है।'

बोगार्डस के अनुसार, ''साथ-साथ रहने वाले व्यक्तियों के जीवन में क्रियाशील अंतर्निहित प्रक्रियाओं की जानकारी प्राप्त करना ही सामाजिक अनुसंधान है।''

मोजर (Moser) के अनुसार, ''व्यवस्थित जानकारी,जो सामूहिक घटनाओं और समस्याओं के सम्बन्ध में दी जाती है, सामाजिक अनुसंधान कहलाती है।''

यंग (Young) के अनुसार, ''सामाजिक तथ्य की परस्पर सम्बन्धित प्रक्रियाओं की विधिवत् खोज और विश्लेषण ही सामाजिक अनुसंधान है।''

कुक (Cook) के अनुसार, ''किसी समस्या के सन्दर्भ में ईमानदारी, विस्तार तथा बुद्धिमानी से तथ्यों, उनके अर्थ तथा उपयोगिता की खोज करना ही अनुसंधान है''

क्राफोर्ड (Crawford) के अनुसार, ''अनुसंधान किसी समस्या के अच्छे समाधान के लिए क्रमबद्ध तथा विशुद्ध चिन्तन एवं विशिष्ट उपकरणों के प्रयोग की एक विधि है।''

मानरो (Munro) के अनुसार, ''अनुसंधान उन समस्याओं के अध्ययन की एक विधि है जिनका अपूर्ण अथवा पूर्ण समाधान तथ्यों के आधार पर ढूंढना है।''

गुडे (Goode) के अनुसार, ''आदर्श रूप में अनुसंधान एक समस्या का सावधानीपूर्वक और निष्पक्ष भाव से किया गया अध्ययन होता है जो तथ्यों की भिन्नता, उनके स्पष्टीकरण तथा सामान्यीकरण पर निर्भर करता है।''

फिशर (Fisher) के अनुसार, ''किसी समस्या को हल करने अथवा एक परिकल्पना की परीक्षा करने अथवा नयी घटना या नये सम्बन्धों को खोजने के उद्देश्य से सामाजिक परिस्थितियों में उपयुक्त कार्यविधि का प्रयोग करना ही सामाजिक शोध है।''

संक्षेप में, सामाजिक अनुसंधान सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों के सम्बन्ध में नवीन ज्ञान की प्राप्ति या पुराने तथ्यों के सत्यापन की वह विधि है जिससे वैज्ञानिक पद्धतियों के अनुसरण के द्वारा सामाजिक जीवन की घटनाओं व समस्याओं के कारणों, उनके अन्तःसम्बन्धों तथा उनमें अन्तर्निहित प्रक्रियाओं एवं नियमों का अध्ययन एवं विश्लेषण किया जाता है।

सामाजिक अनुसंधान की विशेषताएँ(Characteristics of Social Research)

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से सामाजिक अनुसंधान की विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं:-

1. सामाजिक अनुसंधान का सम्बन्ध वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग द्वारा सामाजिक प्रघटनाओं के सूक्ष्म रूप से अध्ययन से है।
2. सामाजिक अनुसंधान अपने को विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों, प्रविधियों एवं पद्धतियों के प्रयोग तक ही सीमित नहीं रखता बल्कि नवीन प्रविधियों के विकास पर भी जोर देता है।
3. सामाजिक अनुसंधान में विभिन्न सामाजिक घटनाओं तथा समस्याओं का वैज्ञानिक या व्यवस्थित अध्ययन ही नहीं किया जाता बल्कि नवीन ज्ञान का सृजन भी किया जाता है।
4. सामाजिक अनुसंधान विभिन्न सामाजिक तथ्यों या घटनाओं के बीच पाए जाने वाले कार्य-करण सम्बन्धों की खोज करता है। इसका कारण यह है कि सामाजिक घटनाएं एक-दूसरे से स्वतन्त्र नहीं होकर एक-दूसरे से सम्बन्धित होती हैं।
5. सामाजिक अनुसंधान में जहां नये तथ्यों की खोज की जाती हैवहीं पुराने तथ्यों या पूर्व स्थापित सिद्धान्तों की पुनर्परीक्षा एवं सत्यापन का कार्य भी सम्पन्न किया जाता है।
6. मूलतः सामाजिक अनुसंधान अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को सिद्धान्तों के रूप में प्रयुक्त करने का एक वैज्ञानिक तरीका है,अर्थात् इसके अन्तर्गत नये सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है।
7. सामाजिक अनुसंधान एक ऐसी विधि है जिसमें परिकल्पना की उपयुक्तता की जांच अथवा परीक्षण किया जा सकता है।
8. सामजिक अनुसंधान का मुख्य लक्ष्य सामाजिक जीवन,सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों के सम्बन्ध में व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त करना है।
9. सामजिक शोध जहां विशुद्ध ज्ञान की खोज पर बल देता है वहां साथ ही इसका प्रयोग व्यवहारिक समस्याओं को हल करने के लिये भी किया जा सकता है।

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति(Nature of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान की दि गयी परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति मुख्य रूप से वैज्ञानिक है। लेकिन इसके विपरीत यदि हम किसी भी व्यक्ति से वार्तालाप करें तो वह यह बतायेगा कि प्राकृतिक विज्ञान ही विशुद्ध विज्ञान है, इस परिपेक्ष्य में वैज्ञानिक **नाब** ने लिखा है,''यह स्वीकार किया जाता है कि प्राकृतिक विज्ञान की प्रकृति वैज्ञानिक है,कुछ लोग इस बात में सन्देह व्यक्त करते हैं कि समाज विज्ञान को उन्हीं अर्थों में वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता, जिन अर्थों में प्राकृतिक विज्ञानों की प्रकृति वैज्ञानिक है।'' **कार्ल पियर्सन** ने लिखा है, ''समस्त विज्ञानों की एकता उसकी पद्धतियों में है, न केवल उसकी विषय-वस्तु में।''

सामाजिक अनुसंधान की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि यह सामाजिक तथ्यों या घटनाओं के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों को खोज निकालने पर जोर देता है। सामाजिक जीवन में सभी स्थानों पर अन्तःसम्बद्धता तथा अन्तःनिर्भरता पायी जाती है। सामाजिक जीवन के सभी पक्ष एक-दूसरे के साथ घनिष्ठ रूप से अन्तर्सम्बन्धित हैं। सामाजिक जीवन को भली-भांति समझने के लिये इन सम्बन्धों का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है। यही कार्य सामाजिक अनुसंधान द्वारा किया जाता है।

सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति की एक विशेषता यह भी है कि इसका अध्ययन क्षेत्र काफी व्यापक है। सामाजिक अनुसंधान के क्षेत्र में सम्पूर्ण सामाजिक जीवन और उससे सम्बद्ध सामाजिक प्रक्रियाएं आ जाती हैं। सामाजिक अनुसंधान के लिए सामाजिक जीवन से सम्बन्धित किसी भी घटना को चुना जा सकता है। सामाजिक अनुसंधान अपने क्षेत्र को केवल नवीन अध्ययन-विषय तक ही सीमित नहीं रखता, उसमें ऐसे विषयों को भी अध्ययन के लिए चुना जा सकता है जिनके विषय में पहले शोध कार्य हो चुका हो। इसका कारण है कि सामाजिक अनुसंधान का लक्ष्य नवीन तथ्यों की खोज के साथ-साथ पुराने तथ्यों की पुनः परीक्षा भी है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में यह भी आवश्यक है।

आज अनेक कारणों से सामाजिक जीवन के विभिन्न पक्षों में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। अतः पुराने नियमों,सिद्धान्तों एवं ज्ञान की पुनर्परीक्षा अत्यन्त आवश्यक है। आज शोध कार्यो ने सामाजिक जीवन से सम्बन्धित अनेक भ्रान्तिपूर्ण धारणाओं को दूर करने में काफी योगदान दिया है। सामाजिक अनुसंधान की प्रकृति समाज की विघटनकारी एवं व्याधिकीय समस्याओं के अध्ययन की है। यदि ये समस्यायें सामाजिक जीवन, सामाजिक संरचना, मानव व्यवहार, सामाजिक प्रक्रियाओं आदि को प्रभावित करती हैं तो सामाजिक अनुसंधान के माध्यम से इन समस्याओं का विस्तारपूर्वक अध्ययन कर यह जानने का प्रयास किया जाता है कि समस्यायें किसी सीमा तक सामाजिक जीवन को प्रभावित करती हैं तथा किसी सीमा तक विघटनकारी स्थितियों का निर्माण करती हैं।

2.3 सामाजिक अनुसंधान के उद्देश्य (Objectives of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान के विभिन्न उद्देश्यों को दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

1. प्रथम-सैद्धान्तिक अथवा ज्ञान सम्बन्धी उद्देश्य, तथा द्वितीय-व्यावहारिक अथवा उपयोगितावादी उद्देश्य। सामाजिक अनुसंधान अथवा अन्य किसी भी अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य ज्ञान की वृद्धि करना होता है। ज्ञान की जिज्ञासा के कारण अनेक अनुसंधान ऐसी दशा में भी हुए हैं जबकि उनसे किसी प्रकार के भौतिक लाभ की कोई सम्भावना न थी। इस प्रकार सामाजिक अनुसंधान का प्रधान उद्देश्य मानव समाज के संगठन, उनकी विभिन्न क्रियाओं,

उनको संचालित करने वाले नियमों तथा विभिन्न तथ्यों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध ज्ञात करना होता है।

2. सामाजिक अनुसंधान का दूसरा उद्देश्य उपयोगितावादी है। यंग के मतानुसार, "सामाजिक अनुसंधान का प्रमुख उद्देश्य निकट अथवा दूरस्थ सामाजिक जीवन को समझना तथा उसके द्वारा सामाजिक व्यवहार पर अधिक नियन्त्रण प्राप्त करना है।" सामाजिक अनुसंधान सामाजिक जीवन के अध्ययन करने में, विश्लेषण एवं निष्कर्ष निकालने की एक पद्धति है जिससे कि किसी सिद्धान्त के निर्माण अथवा कला के अभ्यास में योगदान देने हेतु ज्ञान का विकास, सुधार अथवा परीक्षण किया जाता है।

उपरोक्त उद्देश्यों के अतिरिक्त सामाजिक अनुसंधान के निम्नलिखित उद्देश्य भी है:

1. नवीन तथ्यों की खोज करना।
2. पुराने तथ्यों,नियमों एवं सिद्धान्तों का पुनःपरीक्षण कर उनका सत्यापन करना।
3. सामाजिक घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज करना।
4. उन परिस्थितियों का पता लगाना, जिनके अन्तर्गत सामाजिक घटनायें घटती हैं।
5. सामाजिक घटनाओं एवं तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन कर उनके सम्बन्ध में सामान्यीकरण एवं वैज्ञानिक अवधारणाओं का निर्माण करना।
6. सामाजिक व्याधिकीय समस्या का समाधान एवं निदान ढूंढना।
7. किसी भी समस्या के समाधान को खोजने से पूर्व उसकी प्रकृति, विस्तार, कारण, अन्तर्निहित क्रियाओं एवं उसके परिणामों एवं प्रभावों का वैज्ञानिक अध्ययन करना।
8. सामाजिक तथ्यो के सम्बन्ध में प्रचलित भ्रांतियों से उत्पन्न सामाजिक तनाव की स्थिति को दूर करना।
9. सामाजिक प्रगति एवं विकास हेतु योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन में सहयोग करना।
10. सामाजिक नियन्त्रण को बढ़ावा देना।
11. सामाजिक संगठन को दृढ़ता एवं स्थिरता प्रदान करना।

2.4 सामाजिक अनुसंधानके प्रकार (Types of Social Research)

सामाजिक अनुसंधान को उसकी प्रकृति विशेषताओं, उद्देश्य तथा उनके संगठन को दृष्टिगत करते हुये निम्नलिखित प्रकारों में विभाजित किया जा सकता हैः

1. मौलिक अथवा विशुद्ध अनुसंधान(Fundamental or Pure Research)

सामाजिक शोध का यह वह प्रकार है जिसका सम्बन्ध सामाजिक जीवन एवं घटनाओं के सन्दर्भ में मौलिक सिद्धान्त तथा मूलभूत नियमों की रचना करना होता है। मौलिक अनुसंधान का सम्पादन निम्नलिखित दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया जाता है –

1)पूर्व स्थापित नियमों की जांच या सत्यापन, तथा

2)सामाजिक जीवन और घटनाओं से सम्बन्धित नवीन ज्ञान की खोज करना।

इस प्रकार का शोध सामान्यतः ज्ञान प्राप्ति के लिये होता है इसकी प्रकृति सैद्धान्तिक होती है।

विशुद्ध अनुसंधान सामान्य सिद्धान्तों को विकसित करके अनेक व्यावहारिक समस्याओं का समाधान कर देता है। इसका तात्पर्य यह है कि जब अनुसंधानकर्ता नये सिद्धान्तों अथवा नियमों का प्रतिपादन करता है तब इसकी सहायता से भविष्य में उत्पन्न होने वाली समस्याओं के बारे में सरलतापूर्वक भविष्यवाणी की जा सकती है। इसकी सहायता से समस्याओं के निराकरण में मदद मिलती है। गुडे तथा हॉट ने इसी सम्बन्ध में लिखा है कि वास्तव में यह कहा जा सकता है कि रोग निदान या रोग के उपचार के लिये और कोई प्रयत्न उतना व्यावहारिक नहीं है जितना कि एक सैद्धान्तिक अनुसंधान कार्य ।

मौलिक अनुसंधान किसी विशेष समस्या से सम्बन्धित मुख्य कारकों को ज्ञात करने में भी सहायक सिद्ध होता है। साधारणतया जो व्यक्ति किसी समस्या को सामान्य अवलोकन के द्वारा ही समझाने का प्रयत्न करते हैं वे अक्सर उससे सम्बन्धित मुख्य कारकों को समझने में असफल रह जाते हैं। इस स्थिति को और अधिक स्पष्ट करते हुये गुडे तथा हाट लिखते हैं कि यदि किसी क्षेत्र में प्रजातीय भेदभाव हो तो एक खेल संगठक विभिन्न प्रजातियों में लड़कों को अलग-अलग मैदानों में भिन्न-भिन्न समय पर खेल की सुविधा देकर उनके संघर्ष की सम्भावना को अस्थायी रूप से दूर कर सकता है। लेकिन इसे समस्या का स्थायी समाधान नहीं माना जा सकता है जब तक तनाव और मतभेद के वास्तविक कारणों को ज्ञात करके उनका समाधान नहीं किया जाता, तब तक प्रजातीय संघर्ष की स्थिति निरन्तर बनी रहेगी।

मौलिक शोध प्रशासकों के लिये एक प्रामाणिक और उपयोगी प्रणाली है। यही कारण है कि आज सामाजिक शोध के सिद्धान्तों का प्रयोग केवल सरकारी संगठनों के द्वारा ही नहीं किया जाता बल्कि गैर-सरकारी तथा व्यापारिक संगठनों द्वारा भी अनुसंधान करके कार्य करने के कुशल तरीकों की खोज की जाने लगी है। अनेक सामाजिक संगठनों द्वारा विभिन्न क्षेत्र के विशेषज्ञों की नियुक्ति इसलिये की जाती है ताकि उनके द्वारा किये गये अनुसंधान से लाभ उठाकर वे अपनी कार्यकुशलता में वृद्धि कर सकें।

मौलिक अनुसंधान किसी भी समस्या के समाधान के लिये एक साथ अनेक विकल्प प्रस्तुत करता है।ऐसा अनुसंधान कार्यान्वित करने में समय एवं धन अधिक तो लगता है लेकिन इसके द्वारा अन्ततः कोई ऐसा विकल्प अवश्य ही मिल जाता है जिसके द्वारा सम्बन्धित समस्या का समाधान किया जा सके। अनुसंधान से प्राप्त यदि एक परिणाम उपयोगी सिद्ध नहीं होता तो कुछ समय बाद कोई दूसरा परिणाम हमारे लिये अवश्य ही उपयोगी सिद्ध होने लगता है।

2. व्यावहारिक अनुसंधान(Behavioural Research)

व्यावहारिक अनुसंधान का सम्बन्ध सामाजिक समस्याओं के व्यावहारिक पक्ष से होता है। ऐसे अनुसंधान का उद्देश्य किसी सामाजिक समस्या का व्यावहारिक समाधान ढूंढना ही नहीं होता बल्कि सामाजिक नियोजन,सार्वजनिक स्वास्थ्य, शिक्षा, मनोरंजन अथवा न्याय जैसे किसी भी पक्ष से सम्बन्धित एक व्यावहारिक योजना प्रस्तुत कर समाज को व्यावहारिक लाभ प्रदान करना होता है। पी. वी. यंग ने लिखा है कि ज्ञान की खोज का निश्चित सम्बन्ध लोगों की प्राथमिक आवश्यकताओं तथा कल्याण से होता है । विज्ञान की मान्यता यह है कि समस्त ज्ञान सारभूत रूप से इस अर्थ में उपयोगी हैं कि वह एक सिद्धान्त के निर्माण में या एक कला को व्यवहार में लाने में सहायक होता है। सिद्धान्त तथा व्यवहार आगे चलकर बहुधा एक-दूसरे से मिल जाते हैं।

व्यावहारिक अनुसंधान को परिभाषित करते हुये पी. वी. यंग ने कहा है कि, ''व्यावहारिक अनुसंधान का तात्पर्य ज्ञान के उस संचय से है जिसे मानवता की भलाई के कार्य में लगाया जा सके।''
गुडे तथा हाट ने व्यावहारिक अनुसंधान को अत्यधिक उपयोगी मानते हुये इसके अनेक महत्वपूर्ण पक्षों को स्पष्ट किया है:

1)व्यावहारिक अनुसंधान ज्ञान के निष्कर्ष पहले से स्थापित सिद्धान्तों की सत्यता की परीक्षा करने में सहायक सिद्ध होते हैं।
2)व्यावहारिक अनुसंधान ज्ञान से सम्बन्धित नवीन तथ्यों को प्रस्तुत करता है।
3)व्यावहारिक अनुसंधान अवधारणाओं को स्पष्ट करने में भी सहायता प्रदान करता है।
4)व्यवहारिक अनुसंधान का एक महत्वपूर्ण कार्य पहले से ही विद्यमान सिद्धान्तों को एकता के सूत्र में बांधना है।

3. क्रियात्मक अनुसंधान(Action Research)

क्रियात्मक अनुसंधान वह है जो किसी समस्या या घटना के क्रियात्मक पक्ष की ओर अपने ध्यान को केन्द्रित करता है साथ ही अनुसंधान में प्राप्त निष्कर्षों को सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में भविष्य की योजनाओं से सम्बन्धित करता है। गुडे तथा हाट (Goode and Hutt) ने लिखा है क्रियात्मक अनुसंधान उस कार्यक्रम का भाग होता है,जिसका उद्देश्य समाज में विद्यमान परिस्थितियों मे परिवर्तन लाना है चाहे वह गन्दी बस्तियों की दशायें हों या प्रजातीय तनाव तथा पक्षपात हो या एक संगठन की प्रभावशीलता हो।
इसे और अच्छी तरह से स्पष्ट करते हुये स्टीफन एम. कोरी ने कहा है, कि ''अध्ययनकर्ता अपने निर्णयों तथा क्रियाओं की दिशा निर्धारण करने, उन्हें सही बनाने अथवा उनका मूल्यांकन करने के लिए जिस प्रक्रिया के द्वारा अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक रूप से अध्ययन करता है, उसी को क्रियात्मक अनुसंधान कहा जाता है।
जान बेस्ट ने क्रियात्मक अनुसंधान की प्रकृति को स्पष्ट करते हुये लिखा है कि क्रियात्मक अनुसंधान का सम्बन्ध तात्कालिक उपयोग के अध्ययन से है न कि सिद्धान्तों को विकसित करने से। यह स्थानीय पृष्ठभूमि में समस्याओं के अध्ययन पर बल देता है। इसके निष्कर्षों का मूल्यांकन स्थानीय और तात्कालिक उपयोगिता के सन्दर्भ में किया जाता है, किसी सार्वभौमिक वैधता के सन्दर्भ में नहीं।
किसी सामाजिक दशा, स्थिति या समस्या को बदलने, उसमें सुधार करने या उसे हल करने हेतु साधन खोज निकालने के लिये क्रियात्मक शोध का सहारा लिया जाता है। इसमें तथ्यों को एकत्रित कर किसी समस्या के निवारण हेतु प्रयत्न किया जाता है। क्रियात्मक शोध का लक्ष्य परिवर्तन को नियोजित करना, व्याधिकीय या विघटनात्मक परिस्थितियों को नियन्त्रित करना तथा सुधार एवं कल्याण-कार्य को आगे बढ़ाना है। इसी हेतु, प्रामाणिक तथ्य कर समाधान किया जाता है। बन्धुआ मजदूरों, भूमिहीनों, कृषकों, कृषि-श्रमिकों तथा समाज के अन्य दुर्बल वर्गों की समस्याओं को हल करने तथा उन्हें चहुंमुखी विकास की दिशा में आगे बढ़ाने हेतु किसी कल्याण कार्यक्रम को सफलतापूर्वक संचालित करने के लिये क्रियात्मक शोध का सहारा लिया जाता है।

4. मूल्यांकनात्मक अनुसंधान(Evaluative Research)

कतिपय अनुसंधान कार्य एक विषय या घटना का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से भी किये जाते हैं। गे्र ने अपने लेख ''वैल्यू फ्री सोशियालोजी डाक्ट्रिन आफ हिप्पोक्रेसी एण्ड इरिस्पान्सबिल्टी'' में इस

बात पर जोर दिया है कि एक मूल्य रहित समाजशास्त्र की कल्पना हमें करनी ही नहीं चाहिए क्योंकि ऐसा होना सम्भव नहीं है। ऐसी अनेक सामाजिक घटनायें होती हैं जिनकी वास्तविकतायें मूल्यांकनात्मक निर्णयों के बिना प्रकट नहीं होती।

मूल्यांकन शोध के सम्बन्ध में विलियमसन् कार्प एवं डालफिन ने बताया है कि यह शोध वास्तविक जगत में सम्पादित की गयी ऐसी खोज है जिसके माध्यम से यह मूल्यांकन किया जाता है कि व्यक्तियों के किसी समूह विशेष के जीवन में सुधार लाने के उद्देश्य जो कार्यक्रम बनाया गया, वह अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में कहां तक सफल रहा है। इसके द्वारा कार्यक्रम की प्रभावकता को आंका जाता है। जहां उद्देश्यों तथा उपलब्धियों में अन्तर कम से कम हो, वहां उस कार्यक्रम को उतना ही सफल माना जाता है। इस प्रकार का मूल्यांकन इस उद्देश्य से किया जाता है ताकि नियोजित परिवर्तन के विभिन्न कार्यक्रमों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन किये जा सकें, उन्हें अधिक कारगर एवं सफल बनाया जा सके। इस प्रकार के शोध के द्वारा यह पता लगाया जाता है कि सामाजिक नियोजन एवं परिवर्तन के उद्देश्य से प्रेरित कार्यक्रम इच्छित उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल क्यों नहीं हो रहा है और उसे सफल बनाने हेतु क्या कदम उठाये जाने चाहिये। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि सामाजिक नियोजन एवं परिवर्तन के लक्ष्य से प्रेरित क्रियात्मक कार्यक्रमों की सफलता-असफलता को ज्ञात करने एवं उनकी प्रभावकता का पता लगाने हेतु जो खोज की जाती है, उसी को मूल्यांकनात्मक शोध कहते हैं। इस प्रकार का शोध व्यावहारिकता शोध का ही एक प्रकार है। इन शोधों की व्यावहारिक उपयोगिता लगभग अधिक है। इसका यह तात्पर्य नहीं है कि मूल्यांकनात्मक शोध का विशुद्ध शोध की दृष्टि से कोई महत्व नहीं है। इस प्रकार के शोध में उन सभी अध्ययन विधियों का प्रयोग किया जाता है जिन्हें विशुद्ध शोध में काम में लिया जाता है। इसमें किसी भी कार्यक्रम की प्रभाविकता का पता लगाने के लिये लोगों के विश्वासों, विचारों, दृष्टिकोणों, भावनाओं आदि को जानने-समझने के लिये समाजमितीय पैमानों को काम में लिया जाता है।

5. अन्वेषणात्मक अनुसंधान(Exploratory Research)

इस प्रकार के अनुसंधान नवीन तथ्यों की कार्य-कारण सम्बन्धों की खोज से सम्बन्धित होते हैं अर्थात् जिस विषय में हमारा ज्ञान सीमित है और हम उस विषय में कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करते हुये आगे की बात जानना चाहते हैं तो उस कार्य को हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान कहते हैं। इस प्रकार के अनुसंधान में हम एक घटना के कार्य-कारण सम्बन्धों को खोज निकालते हैं क्योंकि हम यह जानते हैं कि कोई भी घटना, चाहे वह भौतिक हो या सामाजिक, बिना कारण घटित नहीं होती। अनेक सामाजिक घटनायें जैसे-बाल श्रम, बाल-अपराध, आत्महत्या, दहेज आदि के पीछे कुछ न कुछ कारण अवश्य होते हैं। इन्हीं सब कारणों को हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत खोज निकालते हैं।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत योग्य एवं अनुभवशील तथा अनुभवों को व्यक्त करने की क्षमता रखने वाले व्यक्तियों के विचारों को जानने का प्रयास किया जाना चाहिये। इन व्यक्तियों से वैयक्तिक इतिहास का वर्णन समझना चाहिये । अनुभव सर्वेक्षण से नवीन परिकल्पनाओं के प्रतिपादन तथा प्रायोगिक सम्भावनाओं का पता लगाने में सहायता प्राप्त होती है।

ऐसे क्षेत्रों में जिनके विषय में पहले से कोई जानकारी प्राप्त नहीं होती, वैयक्तिक अध्ययन विधि का सहारा लेते हुये अन्तर्दृष्टि को उकसाने वाली बातों का पता लगाया जाना चाहिये तथा परिकल्पनाओं के प्रतिपादन के लिये आवश्यक तथ्यों का संग्रह किया जाना चाहिये। वैयक्तिक अध्ययन की

उपादेयता यहां पर इसलिये अधिक है क्योंकि यहां अनुसंधानकर्ता की मनोवृत्ति आरम्भ से लेकर अन्त तक अधिक से अधिक तथ्य एकत्रित करने की होती है तथा अधिक गहराई में जाकर अध्ययन करने की होती है। यद्यपि अन्तदृष्टि को उकसाने वाली बातों पर ध्यान देने के विषय में कोई निश्चित नियमों का निर्माण नहीं किया जा सकता फिर भी अनुभव से यह पता चलता है कि कुछ विशेष प्रकार के व्यक्ति समस्या के क्षेत्र पर अन्य व्यक्तियों की तुलना में अधिक सामग्री प्रदान कर सकते हैं तथा परिकल्पनाओं के निर्माण के लिये आवश्यक सूचना प्रदान कर सकते हैं।

2.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में शोध जैसे गूढ विषय को भी सरल एवं सूक्ष्म रूप से समझाने का प्रयास किया गया है। सामाजिक अनुसंधान के द्वारा किस प्रकार हम सामाजिक समस्या को दूर कर सकते हैं इसका सहज एवं सरल उपाय बताया गया है।

2.6 अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक अनुसंधान का अर्थ एवं विशेषताएँ बताइये।
2. सामाजिक अनुसंधान के प्रमुख उद्देश्यों पर प्रकाश डालिये।
3. सामाजिक अनुसंधान से आप क्या समझते हैं? इसकी प्रकृति समझाइये।
4. सामाजिक अनुसंधान के प्रकारों की विवेचना कीजिए।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research, 1960
- Burgess, E.W., Social Survey, A Field for constructive service by development for sociology, 1916
- Kleg, Evan, Research in Social Work, Social Work Year Book, ASWA, 1935
- Bogardus, Sociology
- Lundberg, Social Research
- सिंह, ए.के.एवं सिंह वी.एन., सामाजिक अनुसंधान

इकाई -3

विज्ञान एवं वैज्ञानिक पद्धति

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 विज्ञान (Science)
3.3 वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)
3.4 वैज्ञानिक पद्धति के चरण
3.5 सारांश
3.6 अभ्यास प्रश्न
3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- विज्ञान का अर्थ एवं परिभाषाएं जान सकेंगे।
- वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ एवं परिभाषा जान सकेंगे।
- वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- वैज्ञानिक पद्धति की मान्यतायें तथा चरणों के बारे में जान सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में विज्ञान का अर्थ, परिभाषा, वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ, विशेषताएं, मान्यताएं तथा चरण के बारे में बताया गया है। प्रस्तुत इकाई के माध्यम से विद्यार्थियों में विज्ञान के प्रति अभिरूचि पैदा करने तथा विज्ञान को सहज व सरल रूप में समझाने का प्रयास किया गया है। वर्तमान युग वैज्ञानिक युग है अतः आम-जनमानस में विज्ञान के प्रति लगनशीलता बढाना इकाई का मुख्य उद्देश्य है।

3.2 विज्ञान (Science)

सामाजिक घटनाएँ सरल अथवा जटिल हो सकती हैं, इनके अध्ययन के लिए वैज्ञानिक विधि की आवश्यकता होती है और इन्हीं घटनाओं को समझने के लिए शोधकर्ता वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करता है। इसी दृष्टिकोण से स्टुअर्ट चेज ने लिखा है कि विज्ञान का सम्बन्ध वैज्ञानिक पद्धति से है, न कि किसी विशेष अध्ययन विषय से। इस स्थित में यह आवश्यक हो जाता है कि हम सर्वप्रथम विज्ञान के अर्थ को स्पष्ट करके वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताओं को समझने का प्रयत्न करें। वास्तविकता यह है कि सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करने वाली पद्धतियाँ प्राकृतिक विज्ञानों की अध्ययन पद्धतियों से कुछ भिन्न अवश्य हैं लेकिन इसका कारण स्वयं सामाजिक और प्राकृतिक

विज्ञानों की विषय-वस्तु में भिन्नता होना है। इसके पश्चात् भी 'विज्ञान' तथा 'वैज्ञानिक पद्धति' को समझने से यह स्पष्ट हो जायेगा कि सामाजिक घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययन पद्धतियाँ भी पूर्णतया वैज्ञानिक हैं।

'विज्ञान' शब्द की व्याख्या विभिन्न प्रकार से की जाती रही है। वास्तविकता यह है कि जिस प्रकार से कला का अर्थ मात्र चित्र बनाने की निपुणता से नहीं, बल्कि किसी विषय को कलात्मक और स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने से होता है, उसी प्रकार विज्ञान का तात्पर्य मात्र रसायन शास्त्र, भौतिक शास्त्र और जीवशास्त्र से न होकर किसी भी ऐसे ज्ञान से है जो व्यवस्थित और क्रमबद्ध हो। यह धारणा भी गलत है कि विज्ञान मात्र वह ज्ञान है जिसका सृजन भौतिक उपकरणों की सहायता से प्रयोगशालाओं में होता है।

परिभाषाएं

विज्ञान को परिभाषित करते हुये विभिन्न विद्वानों ने लिखा है-

गुडे तथा हाट के अनुसार ''वास्तव में विज्ञान का तात्पर्य केवल व्यवस्थित ज्ञान के संचय से ही है।''

लीन स्मिथ (Lean Smith) के अनुसार ''प्रश्न यह है कि विज्ञान क्या है और क्या नहीं है, इस समस्या का निवारण इस प्रश्न पर आधारित है कि किसी विषय के अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धति का प्रयोग हुआ है अथवा नहीं।''

कार्ल पियर्सन (Karl Pearson) के अनुसार ''समस्त विज्ञानों की एकता उसकी पद्धति में निहित है किसी विषय वस्तु में नहीं है।''

चर्चमैन तथा एकाफ (Churchman and Ackoff) विज्ञान को एक पद्धति न मानकर 'एक विशेष क्रिया' के रूप में मानते हैं।

बर्नार्ड (Bernard) के अनुसार ''विज्ञान को इसमें निहित छः मुख्य प्रक्रियाओं के सन्दर्भ में ही परिभाषित किया जा सकता है। ये प्रक्रियाएँ हैं- परीक्षण, सत्यापन, परिभाषित विवेचना, वर्गीकरण, संगठन तथा परिस्थितजन्यता जिनमें पूर्वानुमान तथा व्यावहारिक उपयोग की विशेषताओं का भी समावेश किया जा सकता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर विज्ञान की प्रकृति को इसकी निम्नलिखित विशेषताओं के द्वारा सरलतापूर्वक समझा जा सकता है।

1. विज्ञान का तात्पर्य किसी भी ऐसे ज्ञान से है जिसका संग्रह पक्षपात रहित तथा व्यवस्थित रूप से किया जाता है।
2. वस्तुनिष्ठता विज्ञान की एक प्रमुख विशेषता है अर्थात् इसमें किसी सामाजिक घटना को बिल्कुल उसी रूप में देखा जाता है जैसी कि वह वास्तव में है।
3. विज्ञान अनुभवसिद्ध ज्ञान है क्योंकि इसमें कल्पना अथवा दर्शन का कोई महत्व नहीं होता।
4. यह वह ज्ञान है जो कार्य -कारण के सम्बन्ध को स्पष्ट करता है।
5. विज्ञान तार्किक होता है क्योंकि इसके अन्तर्गत विभिन्न तथ्यों के बीच न केवल तार्किक सम्बन्ध स्पष्ट किया जाता है बल्कि यह ज्ञान स्वयं इस प्रकार का होता है कि उसे तर्क के द्वारा समझा जा सकता है।
6. सार्वभौमिकता तथा नियमों का पुनर्परीक्षण विज्ञान के महत्वपूर्ण आधार हैं। यदि किसी नियम का पुनर्परीक्षण करना सम्भव न हो, तो उसे वैज्ञानिक नियम नहीं कहा जा सकता।

3.3 वैज्ञानिक पद्धति (Scientific Method)

विज्ञान की अवधारणा स्पष्ट करने के पश्चात् दूसरा प्रश्न यह उठता है कि वैज्ञानिक पद्धति क्या है? यह सत्य है कि विज्ञान के अर्थ को समझ लेने से वैज्ञानिक पद्धति का अर्थ भी कुछ सीमा तक स्पष्ट हो जाता है परन्तु इसे पृथक रूप से समझ लेना भी आवश्यक है। साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि कोई भी वह अध्ययन पद्धति वैज्ञानिक पद्धति है जिसके द्वारा एक अध्ययनकर्ता पक्षपात रहित होकर विभिन्न घटनाओं का व्यवस्थित रूप से अध्ययन करता है। यह एक ऐसी पद्धति है जो भावना, दर्शन अथवा तत्व ज्ञान से सम्बन्धित न होकर वस्तुनिष्ठ अवलोकन, परीक्षण, प्रयोग और वर्गीकरण की एक व्यवस्थित कार्यप्रणाली पर आधारित होती है।

वैज्ञानिक पद्धति की परिभाषाएं

लुण्डवर्ग (Lundberg) के अनुसार ''समाज वैज्ञानिकों में यह विश्वास दृढ़ हो गया है कि उनके सामने जो समस्याएँ हैं उनका समाधान सामाजिक घटनाओं के निष्पक्ष एवं व्यवस्थित अवलोकन, सत्यापन, वर्गीकरण तथा विश्लेषण द्वारा ही सम्भव है। मोटे तौर पर अध्ययन के इसी पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति का नाम दिया जाता है।''

इस कथन से स्पष्ट होता है कि वैज्ञानिक पद्धति कोई भी वह पद्धति है जिसमें अध्ययनकर्ता निष्पक्ष और व्यवस्थित रूप से तथ्यों का अवलोकन, सत्यापन, वर्गीकरण करके वास्तविकता का विश्लेषण करता है तथा सामान्य प्रवृत्तियों को स्पष्ट करता है।

इनसाइक्लोपीडिया आफ ब्रिटेनिका (Encyclopeadia of Britanica) के अनुसार ''वैज्ञानिक पद्धति एक सामूहिक शब्द है जो उन अनेक प्रक्रियाओं को स्पष्ट करता है जिनकी सहायता से विज्ञान का निर्माण होता है। व्यापक अर्थों में, वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसंधान की किसी भी ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष तथा व्यवस्थित ज्ञान प्राप्त किया जाता है।''

इस परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैज्ञानिक पद्धति ज्ञान के संचय का एक विशेष तरीका है, यह किसी विशेष विषय-वस्तु से सम्बन्धित नहीं है।

वुल्फ (Wolf) के अनुसार, ''विस्तृत अर्थों में कोई भी अनुसंधान विधि जिसके द्वारा विज्ञान का निर्माण और विस्तार होता है, वैज्ञानिक पद्धति कहलाती है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है वैज्ञानिक पद्धति किसी भी विषय को विज्ञान के रूप में स्थापित करने का सर्वप्रमुख आधार है। कार्ल पियर्सन ने वैज्ञानिक पद्धति की प्रकृति को इसकी तीन प्रमुख विशेषताओं के आधार पर स्पष्ट किया है। ये विशेषतायें उन सभी प्रमुख प्रक्रियाओं को स्पष्ट करती हैं जिनका वैज्ञानिक पद्धति में समावेश है।

(1) सर्वप्रथम, वैज्ञानिक पद्धति तथ्यों का वर्गीकरण करती है तथा विभिन्न तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्ध और क्रम का निरीक्षण करती है,

(2) यह रचनात्मक कल्पना के द्वारा वैज्ञानिक नियमों की खोज करती है।

(3) स्वयं ही किसी विषय की समायोजना करती है तथा सामान्य बुद्धि के भी व्यक्तियों के लिए समान रूप से उपयोगी होती है।

वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

वैज्ञानिक पद्धति की परिभाषित विवेचना के आधार पर इसकी प्रमुख विशेषतायें स्पष्ट होती हैं। इन विशेषताओं को विद्वानों ने भिन्न-भिन्न रूप से प्रस्तुत किया है लेकिन अध्ययन की सरलता और स्पष्टता के दृष्टिकोण से निम्नांकित विशेषताएँ अधिक महत्वपूर्ण हैं:-

1. **सत्यापनशीलता** - वैज्ञानिक पद्धति की सबसे मुख्य विशेषता यह है कि इसके द्वारा जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये जाते हैं उनकी सत्यता की किसी भी समय जाँच की जा सकती है। वास्तव में एक वैज्ञानिक पद्धति किसी व्यक्ति से सम्बन्धित नहीं होती, बल्कि इसका सभी के लिए समान महत्व होता है। कोई भी व्यक्ति यदि वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा प्राप्त निष्कर्षों को ठीक नहीं समझता तो वह विषय का पुनः अध्ययन करके उन निष्कर्षों की पुनर्परीक्षा कर सकता है।
2. **तार्किकता -** तार्किकता अथवा तार्किक विचारों पर आधारित होना वैज्ञानिक पद्धति की एक अन्य विशेषता है। इसके अन्तर्गत एक वैज्ञानिक न मात्र तर्क के आधार पर अध्ययन के प्रयोग में पायी जाने वाली पद्धति के औचित्य को स्पष्ट करता है वरन् वह अपने निष्कर्षों को भी तार्किक आधार पर प्रस्तुत करता है। इसका तात्पर्य है कि यदि कोई अध्ययन पद्धति तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती तो उसे वैज्ञानिक पद्धति के रूप में मान्यता नहीं दी जा सकती।
3. **निश्चितता** - वैज्ञानिक पद्धति अस्पष्ट अथवा भावनापूर्ण विचारों को महत्व नहीं देती। यह कुछ ऐसे स्तरों द्वारा कार्य करती है जो पूर्णतया स्पष्ट होते हैं तथा जिनके आधार पर अध्ययन करना सभी के लिए जरूरी होता है। इसके साथ ही वैज्ञानिक पद्धति सन्देह उत्पन्न करने वाले तत्वों को कोई महत्व नहीं देती।
4. **वस्तुनिष्ठता -** वैज्ञानिक पद्धति भावनात्मक न होकर वस्तुनिष्ठ होती है। इसका तात्पर्य है कि इसके द्वारा घटनाओं या तथ्यों का अध्ययन उसी रूप में किया जाता है जैसे कि वे वास्तव में हैं। दूसरे शब्दों में, वैज्ञानिक पद्धति पक्षपातपूर्ण धारणाओ, पूर्वाग्रहों, व्यक्तिगत अनुभवों तथा विचारों से प्रभावित नहीं होती। ग्रीन का कथन है कि वस्तुनिष्ठता का तात्पर्य किसी तथ्य अथवा प्रमाण की निष्पक्षता जाँच करने की इच्छा तथा योग्यता से है।
5. कार्य-कारण सम्बन्ध पर आधारित - वैज्ञानिक पद्धति के अन्तर्गत घटनाओं की व्याख्या कार्य-कारण सम्बन्ध के आधार पर की जाती है। वास्तविकता यह है कि कोई भी घटना पूरी तरह स्वतंत्र नहीं होती बल्कि उसके घटित होने का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। वैज्ञानिक पद्धति इन कारणों को खोज कर कार्य-कारण सम्बन्धों की व्याख्या करती है। वैज्ञानिक पद्धति का यही कार्य तार्किक और अनुभवसिद्ध ज्ञान में वृद्धि करता है।
6. **सामान्यता** - वैज्ञानिक पद्धति की किसी विशेष घटना अथवा इकाई के अध्ययन में रूचि नहीं होती बल्कि यह सामान्य घटनाओं के अध्ययन को महत्व देती है। इस पद्धति से जो निष्कर्ष तथा नियम ज्ञात होते हैं, वे भी किसी विशेष इकाई के प्रतिनिधि न होकर एक सम्पूर्ण वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं।
7. **पूर्वानुमान की क्षमता -** वैज्ञानिक पद्धति की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें भावी परिस्थितियों का पूर्वानुमान करने अथवा भविष्यवाणी करने की क्षमता होती है। ऐसा करने के लिए वैज्ञानिक पद्धति सर्वप्रथम, कुछ विशेष घटनाओं के बीच पाये जाने वाले कार्य-कारण

सम्बन्धों की व्याख्या करती है और इसके बाद उन घटनाओं के सन्दर्भ में भविष्य की सम्भावना की ओर संकेत करती है।

8. **सैद्धान्तीकरण** - वैज्ञानिक पद्धति की अन्तिम महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह पद्धति वर्तमान घटनाओं तथा घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्धों के निर्माण में सहायक होती है। यह सिद्धान्त न केवल विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित घटनाओं की प्रकृति को व्यवस्थित रूप से स्पष्ट करने में सहायक होते हैं बल्कि इनके आधार पर दूसरे समाजों में विद्यमान घटनाओं का भी विश्लेषण किया जा सकता है। साधारणतया परिस्थितियों में जब तक बहुत अधिक परिवर्तन नहीं हो जाता, ये सिद्धान्त अपनी उपयोगिता को बनाये रखते हैं। वास्तव में सैद्धान्तीकरण ही वैज्ञानिक पद्धति का आधारभूत लक्ष्य होता है।

वैज्ञानिक पद्धति की मान्यतायें (Assumptions)

वैज्ञानिक पद्धति से सम्बन्ध रखने वाली आधारभूत मान्यतायें निम्नलिखित हैं-

1. प्रकृति में एकरूपता का सामंजस्य
2. प्रकृति में स्थायित्व होना जिससे हम यह समझ सकते हैं कि वे घटनायें जो वर्तमान में घटित हो रही हैं, इनके भविष्य में भी घटित होने की सम्भावनायें हैं।
3. प्रकृति के अन्तर्गत नियतिवाद (Determinism) का पाया जाना तथा ये मानना कि बाह्य संसार में घटनाएं स्वतः घटित नहीं होती हैं। अतीत में इन घटनाओं की उत्पत्ति के प्रतीक कम से कम सैद्धान्तिक स्तर पर निश्चित ही खोजे जा सकते हैं। नियतिवाद विभिन्न प्रकार के रूप ग्रहण करता है, उदाहरणार्थ -आत्मा सम्बन्धी नियतिवाद, प्राकृतिक नियतिवाद, आर्थिक नियतिवाद, सामाजिक नियतिवाद इत्यादि। चाहे किसी प्रकार का भी नियतिवाद क्यों न हो इसकी मौलिक विशेषता यह है कि वर्तमान के कारणों की खोज इनके पूर्व घटित हुई घटनाओं में की जाती है एवं पूर्ण जटिल घटनाओं की प्रकृति के आधार पर ही नियतिवाद के प्रकार का निर्धारण किया जाता है।

3.4 वैज्ञानिक पद्धति के प्रमुख चरण (Steps)

कोई भी वैज्ञानिक प्रयास अव्यवस्थित नहीं होता है। वैज्ञानिकता के लिए प्रत्येक अध्ययन को कुछ विशेष स्तरों में से गुजरना आवश्यक है। **लुण्डबर्ग (Lundberg)** का कथन है कि ''व्यापक अर्थों में वैज्ञानिक पद्धति का कार्य तथ्यों का अवलोकन, वर्गीकरण और व्याख्या करना है।'' इस कथन के आधार पर लुण्डबर्ग ने वैज्ञानिक पद्धति के चार प्रमुख चरणों का उल्लेख किया है:-

1. कार्यकारी परिकल्पना का निर्माण
2. तथ्यों का अवलोकन तथा आलेखन
3. संकलित तथ्यों का वर्गीकरण और निर्वचन
4. सामान्यीकरण

पी. वी. यंग (P.V. Young) के अनुसार वैज्ञानिक पद्धति के छः चरण प्रमुख हैं:-

1. अध्ययन से सम्बन्धित समस्या का निर्धारण,
2. एक कार्यशील उपकल्पना का निर्माण,
3. वैज्ञानिक प्रविधियों के द्वारा समस्या का अवलोकन एवं उनकी खोज,
4. प्राप्त तथ्यों का व्यवस्थित आलेखन,

5. तथ्यों का विभिन्न क्रमों अथवा श्रेणियों में वर्गीकरण, तथा
6. वैज्ञानिक सामान्यीकरण

किसी भी शोध की सफलता वैज्ञानिक चरणों पर निर्भर करती है। चरणों में शोध समस्या अथवा घटना के चुनाव से लेकर प्रतिवेदन तक अनेक चरण आते हैं जो निम्नलिखित हैं

1. समस्या का चयन (Selection of the Problem)
2. अध्ययन क्षेत्र का परिसीमन (Scope of Study)
3. अध्ययन का उद्देश्य (Objectives of Study)
4. साहित्य का पुनरावलोकन (Review of Literature)
5. उपकल्पना का निर्माण (Formulation of Hypothesis)
6. शोध अभिकल्प (Research Design)
7. सूचना के स्रोतों का निर्धारण (Sources of Data)
8. उत्तरदाताओं का चयन (Selection of Respondents)
9. तथ्य संकलन के लिए उपकरणों का निर्माण (Formation of Tools of Data Collection)
10. तथ्यों का संकलन (Collection of Data)
11. तथ्यों का सम्पादन, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारिणीयन (Editing, Coding, Classification and Tabulation of Data)
12. तथ्यों का विश्लेषण एवं निर्वचन (Analysis of Data and Interpretaion)
13. निष्कर्ष एवं सुझाव (Conclusion and Suggestions)
14. प्रतिवेदन (Report Writing)

3.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में वैज्ञानिक पद्धति के चरण, अर्थ, उद्देश्य एवं परिभाषाओं को सम्यक तथा सारगर्भित रूप में बताया गया है। विज्ञान का सहज एवं सरल रूप में प्रस्तुत करना इस इकाई का मुख्य विषय है।

3.6 अभ्यास प्रश्न

1. विज्ञान से आप क्या समझते हैं?
2. वैज्ञानिक पद्धति को परिभाषित कीजिए तथा इसकी मान्यताओं पर प्रकाश डालिये।
3. वैज्ञानिक पद्धति के चरणों की विवेचना कीजिये।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research, 1960
- Burgess, E.W., Social Survey, A Field for constructive service by development for sociology, 1916
- Kleg, Evan, Research in Social Work, Social Work Year Book, ASWA, 1935

- Bogardus, Sociology
- Lundberg, Social Research
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 4

सामाजिक सर्वेक्षण

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 सामाजिक सर्वेक्षण की अवधारणा (Concept of Social Survey)
4.3 सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य
4.4 सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकार
4.5 सामाजिक सर्वेक्षण की सीमाएँ
4.6 सारांश
4.7 अभ्यास प्रश्न
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सामाजिक सर्वेक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएं जान सकेंगे।
- सामाजिक सर्वेक्षण की विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे।
- सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्यों को जान सकेंगे।
- सामाजिक सर्वेक्षण प्रकृति को जान सकेंगे।
- सामाजिक सर्वेक्षण के प्रकार एवं सीमाओं को समझ सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में समाजिक सर्वेक्षण का अर्थ, परिभाषा, विशेषताएं, उद्देश्य, प्रकृति, प्रकार एवं सीमाओं के विषय में विवेचना किया गया है। यहां पर सामाजिक सर्वेक्षण को विस्तार से समझाया है। सर्वेक्षण के द्वारा हमें किसी क्षेत्र विशेष के किसी समस्या विशेष पर वास्तविक तथा प्रमाणिक आंकडे उपलब्ध हो जाते हैं अतः समाज विज्ञान के विषयों में सर्वेक्षण का विशेष महत्व है।

4.2 सामाजिक सर्वेक्षण

'सर्वेक्षण' शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द survey का हिन्दी रूपान्तर है। Survey शब्द दो विभिन्न स्थानों के शब्दों से मिलकर बना है - पहला शब्द *surveier*, है, जिसकी उत्पत्ति फ्रेन्च भाषा से हुई है, तथा दूसरा शब्द *supervidere* है, जो लैटिन भाषा से लिया गया है। इन दोनों शब्दों का अर्थ क्रमशः ऊपर (over) तथा देखना (to see) है I इस प्रकार सर्वे का शाब्दिक अर्थ किसी घटना को ऊपर से देखकर अथवा उसका अवलोकन करना है। वर्तमान समय में सर्वेक्षण के केवल इसी अर्थ को पर्याप्त नहीं समझा जाता, बल्कि एक पद्धति के रूप में स्पष्ट किया गया है । आज सर्वेक्षण का

तात्पर्य एक ऐसी अनुसन्धान प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत शोधकर्ता शोध से सम्बन्धित इकाइयों का स्वयं अवलोकन करता है और पक्षपात रहित ढंग से तथ्यों को एकत्रित करके सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत करता है, इसी आधार पर यह कहा गया है कि ''यथार्थ सूचना प्राप्त करने के लिये किया गया आलोचनात्मक अवलोकन ही सामाजिक सर्वेक्षण है।''

सामाजिक शोध के अन्तर्गत सर्वेक्षण शब्द का उपयोग एक विशिष्ट अर्थ में किया जाता है,इस परिपेक्ष्य में सर्वेक्षण एक सहयोगी प्रक्रिया हैं, जिसमें एक अथवा अधिक शोध विधियों द्वारा विभिन्न उपकरणों की सहायता से आंकडें संकलित कियेजाते है, सामाजिक सर्वेक्षण भी आंकडों के संग्रह की महत्वपूर्ण विधि है, जिसकी उत्पत्ति प्राचीन मिस्र से मानी जाती है।

मानव समाज में सामाजिक सर्वेक्षण का इतिहास अत्यधिक प्राचीन है, मनुष्य अपनी जिज्ञासु प्रवृत्ति के कारण सदैव से ही अपने चारों ओर की घटनाओं के बीच कार्य-कारण के सम्बन्ध को खेजने का प्रयत्न करता रहा है, विकासशील भारत में आज से लगभग दो सहस्त्र पूर्व मौर्य काल तथा गुप्त काल में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में सर्वेक्षण द्वारा अनेक महत्वपूर्ण सूचनायें एकत्रित की गयीं, जिनके आज भी स्पष्ट रूप से प्रमाण मिलते हैं। विभिन्न विद्वानों के मतानुसार ईसा से लगभग तीन सौ वर्ष पहले मिस्र में जनसंख्या एवं सम्पत्ति का अध्ययन करने के लिये होराडोटस **(Herodotus)** ने सर्वेक्षण के द्वारा अनेक महत्वपूर्ण सूचनायें संकलित की थी। इसके पश्चात् भी यह सच है कि सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति का व्यवस्थित उपयोग सर्वप्रथम 18वीं शताब्दी से ही आरम्भ हो सका। इस समय जान हावर्ड, लीप्ले, चार्ल्स बूथ, आर्थर बाउले, तथा राउण्ट्री जैसे अनेक विद्वानों ने सामाजिक सर्वेक्षण पद्धति का व्यापक रूप से उपयोग करके महत्वपूर्ण सूचनाओं का संग्रहण किया। इनके योगदान को अस्वीकार नहीं किया जा सकता।उपरिवर्णित विद्वानों के योगदान को निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है।

मुख्यतः जान हावर्ड एक समाज सुधारक था, जिसने सर्वेक्षण विधि को एक व्यवस्थित रूप देकर महत्वपूर्ण सूचनाओं का संग्रह किया। हावर्ड ने इंग्लैण्ड के कारागारों मे निरूद्ध बन्दियों का अध्ययन करके अपराध के कारणों तथा अपराधी मनोवृत्तियों को ज्ञात करने का व्यापक प्रयत्न किया ,इस कार्य के लिये कारागार के अधिकारियों का सहयोग न मिल पाने के कारण हावर्ड अप्रत्याशित रूप से वेनिस जाने वाले एक जहाज में चढ गया, उसे अपराधी मानकर जब कारागार की सजा दे दी गई तो उसने सहभागी अवलोकनकर्ता के रूप में अपराधियों का अध्ययन करना प्रारम्भ कर दिया। इस अध्ययन के द्वारा अपराधियों से सम्बन्धित जो महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आये उन्हें आज के भौतिकवादी युग में उपयोगी माना जाता है। हावर्ड ने पहली बार वैयक्तिक अध्ययन तथा सहभागी अवलोकन विधि का प्रयोग सूचनाओं के संग्रहण में किया।

चार्ल्स बूथ एक संख्याशास्त्री होने के साथ-साथ एक समाज सुधारक भी था,जिसने इंग्लैण्ड में निर्धनता, बेरोजगारी और श्रमिक समस्याओं का अध्ययन करके सामाजिक सर्वेक्षण को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न किया,उसका उद्देश्य घनी बस्तियों में रहने वाले श्रमिकों तथा निम्न वर्गीय परिवारों में आय-व्यय, स्वास्थ्य, आवास, जनसंख्या, निर्धनता तथा सामाजिक दशाओं का अध्ययन करके जनसामान्य को उनकी समस्याओं से अवगत कराना था। इसके लिये बूथ ने 3400 परिवारों का चयन करके विभिन्न प्रकार की सूचनाओं का संकलन किया। इस सर्वेक्षण विधि में बूथ ने न केवल निदर्शन पद्धति का उपयोग किया बल्कि साक्षात्कार पद्धति को भी एक नयी दिशा प्रदान की।

राउण्ट्री का योगदान सामाजिक सर्वेक्षण में अतुलनीय माना जाता है। राउण्ट्री ने सर्वेक्षण में तुलनात्मक पद्धति को स्वीकार किया और सर्वप्रथम सन् 1900 में यार्क नगर के श्रमिकों की आर्थिक स्थिति और रहन-सहन का अध्ययन किया तथा सन् 1936 में पुनः उसी नगर के श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक दशाओं का अध्ययन करके तुलनात्मक निष्कर्ष प्रस्तुत किये। इस कार्य के लिये राउण्ट्री ने पहले जनगणना पद्धति द्वारा तथा बाद में निदर्शन पद्धति द्वारा सर्वेक्षण करके यह स्पष्ट कर दिया कि निदर्शन से प्राप्त निष्कर्ष भी संगणना से प्राप्त निष्कर्षो के समान ही उपयोगी हो सकते हैं। इस सर्वेक्षण के आधार पर राउण्ट्री ने निर्धनता का चक्रीय प्रतिमान प्रस्तुत करें यह भी स्पष्ट कर दिया कि सामाजिक घटनाओं की जटिलता और परिवर्तनशीलता के बाद भी सर्वेक्षण के द्वारा वैज्ञानिक सामान्यीकरण प्रस्तुत क्यिे जा सकते है।

सामाजिक सर्वेक्षण की परिभाषाएं

फेयर चाइल्ड द्वारा सम्पादित समाजशास्त्र के शब्दकोश में कहा गया है कि ''एक समुदाय के सम्पूर्ण जीवन अथवा उसके किसी एक पक्ष जैसे-स्वास्थ्य,शिक्षा,मनोरंजन आदि के सम्बन्ध में तथ्यों के बहुत कुछ और व्यापक संकलन एवं विश्लेषण को ही सामान्य शब्दों मे सर्वेक्षण कहा जाता है।''

ई. डब्लू. बर्गेस (E.W. Burgess) के अनुसार, ''एक समुदाय का सर्वेक्षण सामाजिक प्रगति के एक रचनात्मक कार्यक्रम को प्रस्तुत करने के उद्देश्य से इसकी परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं का वैज्ञानिक अध्ययन है

पी. वी. यंग के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण 1. सामाजिक सुधार एवं विकास के रचनात्मक कार्यक्रम के प्रतिपादन; 2. सामाजिक व्याधिकी के वे वर्तमान अथवा समीपवर्ती परिस्थितियां जिनकी निश्चित भौगोलिक सीमायें, निश्चित सामाजिक आशय तथा सामाजिक महत्व होते है, 3. इन परिस्थितियों का परिमापन एवं इनकी तुलना उन परिस्थितियों से की जा सकती है जिन्हें माडल के रूप में स्वीकार किया जा सकता है, से सम्बन्धित है।''

मोर्स के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण सुस्पष्ट उद्देश्य से किसी विशेष सामाजिक परिस्थित, समस्या अथवा जनसंख्या का व्यवस्थित और वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण करने की एक पद्धति है।''

सी. ए. मोजर (C.A. Moser) के अनुसार, ''एक सर्वेक्षण जनजीवन के किसी पक्ष पर प्रशासन सम्बन्धी तथ्यों को जानने की आवश्यकता के लिये,अथवा किसी कार्य-कारण सम्बन्ध की खोज करने के लिये अथवा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के किसी पक्ष पर नवीन प्रकाश डालने के लिये आयोजित किया जा सकता है।''

लेअन, फैस्टिगर तथा डेनियल काट्ज के अनुसार, ''अनेक अनुसंधान की समस्याओं के लिये व्यक्तिगत साक्षात्कार तथा अन्य विधियों द्वारा नियोजित तथ्यों के संग्रह की आवश्यकता होती है, इस प्रकार के अध्ययन को प्रायः सर्वेक्षण कहा जाता है, विशेषकर जब वे मानव समूहों से सम्बन्धित हो।''

मार्क अब्राम्स (Mark Abrams) के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक समुदाय की बनावट एवं क्रियाओं के सामाजिक पक्ष के सम्बन्ध में संख्यात्मक तथ्य संकलित किये जाते हैं।''

बोगार्डस (Bogardus) के अनुसार, ''विस्तृत अर्थो में सामाजिक सर्वेक्षण का तात्पर्य किसी विशेष समुदाय के लोगों के जीवन और कार्य की दशाओं से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन करना है।''

सिन पाओ येंग के अनुसार, ''सामाजिक सर्वेक्षण प्रायः एक समूह के लोगों की रचना, क्रिया-कलापों तथा रहन-सहन की दशाओं के सम्बन्ध में एक जांच कार्य है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन एवं अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक सर्वेक्षण सामाजिक अनुसन्धान की एक ऐसी विशिष्ट शाखा है जो काफी बडी संख्या में व्यक्तियों के विश्वासों मनोवृत्तियों, विचारधाराओं, सम्प्रेरणाओं तथा व्यवहारों, इन्हें प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों तथा इनके पारस्परिक सम्बन्धों का बहुमुखी सांख्यिकीय विश्लेषण एवं विवेचन करने के लिये आवश्यक तथ्यों को एकत्रित करती है, इसके अन्तर्गत दो प्रकार के चर होते हैं:-

1. **समाजशास्त्रीय चरः** समाजशास्त्रीय चर के अन्तर्गत व्यक्तियों के उन गुणों को लिया जाता है, जो विभिन्न सामाजिक संदर्भो में उनकी सदस्यता के परिणाम स्वरूप विकसित होते हैं जैसे-लिंग, आयु, राजनैतिक एवं धार्मिक, जाति आदि।
2. **मनोवैज्ञानिक चरः** इसमें अदृश्य विश्वासों, मूल्यों तथा दृश्य व्यवहार सम्मिलित हैं।

सामाजिक सर्वेक्षण की विशेषतायें

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन एवं अवलोकन से सामाजिक सर्वेक्षण की निम्नलिखित विशेषतायें स्पष्ट होती हैं:

1. सामाजिक सर्वेक्षण एक वैज्ञानिक पद्धति है।
2. सामाजिक सर्वेक्षण सदैव एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र तक ही सीमित होता है।
3. सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य सामान्य सामाजिक घटनाओं का अध्ययन करना है।
4. सामाजिक सर्वेक्षण का अध्ययन क्षेत्र इतना विस्तृत होता है कि कोई अकेले ही सम्पूर्ण अध्ययन कठिनता से कर सकता है,यह एक सहकारी प्रक्रिया होती है।
5. सामाजिक सर्वेक्षण केवल तथ्य पूर्ण ही नहीं होता,बल्कि उपयोग के दृष्टिकोण से यह रचनात्मक भी होता है।
6. सामाजिक सर्वेक्षण एक तुलनात्मक अध्ययन है जिसका उद्देश्य किसी विशेष मनोवृत्ति, विचार अथवा समस्या की प्रकृति को दूसरे तथ्यों की तुलना में ज्ञात करना होता है।
7. सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत अध्ययन के परिमाणात्मक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है।
8. सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत तथ्यों का मात्र संकलन ही नहीं किया जाता बल्कि सामाजिक जागरूकता में भी वृद्धि की जाती है।

4.3 सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य

सामाजिक सर्वेक्षण क्यों आयोजित किए जाते हैं? यह एक ऐसा प्रश्न है जो हमें सामाजिक सर्वेक्षण के उद्देश्य की विवेचना की ओर ले जाता है। विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक सर्वेक्षण के भिन्न-भिन्न उद्देश्यों का उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सामाजिक घटनाओं की प्रकृति इतनी विविधतापूर्ण है कि इन सभी का अध्ययन किसी एक या दो उद्देश्यों को आधार मानकर ही नहीं किया जा सकता। किसी सर्वेक्षण का उद्देश्य ज्ञान का संचय करना होता है तो कभी इसका उद्देश्य किसी समस्या से सम्बन्धित कारणों को जानना होता है। कुछ सर्वेक्षण एक विशेष समस्या का समाधान ढूँढने के लिए किए जाते हैं तो किसी अन्य सर्वेक्षण का उद्देश्य कल्याण कार्यक्रमों को प्रभावपूर्ण बनाना होता है। मोजर ने सामाजिक सर्वेक्षण के विविध उद्देश्यों को स्पष्ट

करते हुए कहा है कि ''एक सर्वेक्षण जन-जीवन के किसी पहलू पर प्रशासकीय तथ्यों की आवश्यकता को स्पष्ट करने के लिए ,किसी कार्य-कारण सम्बन्ध की खोज करने के लिए अथवा समाजशास्त्रीय सिद्धान्त के किसी पक्ष पर नया प्रकाश डालने के लिए किया जाता है।''मोजर के इस कथन को ध्यान में रखते हुए सामाजिक सर्वेक्षण से सम्बन्धित प्रमुख उद्देश्यों को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता हैः

1. सामाजिक तथ्यों का संकलन (Collection of Social Facts)

सामाजिक सर्वेक्षण का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य किसी विशेष घटना,समस्या अथवा परम्परा से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन करना है। यह कार्य सरकारी और गैर-सरकारी दोनों ही क्षेत्रों में किया जाता है। तथ्यों का संकलन किसी सर्वेक्षण संस्था द्वारा स्वयं अपने लिए किया जा सकता है अथवा यह कार्य किसी अन्य व्यक्ति अथवा संगठन के लिए भी किया जाता है। वर्तमान समय में ऐसे संगठनों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है जो दूसरे संगठनों अथवा व्यक्तियों को इच्छित सूचनाएं देने के लिए सर्वेक्षण-कार्य करते हैं। साधारणतया ऐसे सर्वेक्षण गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा किये जाते हैं। बाजार-मूल्य, राजनीतिक मनोवृत्तियां, उद्योग, शिक्षा, धर्म, मनोरंजन, सामाजिक समस्याएं तथा विभिन्न सामाजिक वर्गों की प्रस्थिति आदि ऐसे सर्वेक्षणों की विशेष अध्ययन वस्तु होती है। सरकारी क्षेत्र में विभिन्न प्रकार की सूचनाएं प्राप्त करने के लिए जनगणना सर्वेक्षण इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। इसके अतिरिक्त सामाजिक सुरक्षा, औद्योगिक विवादों, स्वास्थ्य का स्तर,आय का वितरण, रहन-सहन का स्तर तथा बेरोजगारी आदि वे अन्य विषय हैं जिन पर सरकारी संगठनों द्वारा सूचनाएं एकत्रित करने का कार्य किया जाता है। इस सम्बन्ध में मोजर का कथन है कि ''अधिकांश सर्वेक्षणों का उद्देश्य केवल किसी व्यक्ति को सूचना प्रदान करना होता है। यह व्यक्ति किसी सरकारी विभाग का हो सकता है जो यह जानना चाहता हो कि लोग भोजन पर कितना व्यय करते हैं, अथवा एक व्यापारिक प्रतिष्ठान से सम्बन्धित हो सकता है जो यह जानना चाहता हो कि लोग धुलाई की कौन सी सामग्री प्रयोग में ला रहे हैं अथवा लाना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त यह कोई अनुसंधान-संस्था हो सकती है जो वृद्धावस्था में पेंशन पाने वाले लोगों के विषय में अध्ययन करना चाहती हो। इससे स्पष्ट होता है कि सामाजिक सर्वेक्षण का आधारभूत उद्देश्य तथ्यों के संकलन द्वारा किसी समस्या अथवा विषय के वास्तविक रूप को स्पष्ट करना होता है।

2. सामाजिक घटनाओं का अध्ययन (Study of Social Incidents)

सामाजिक सर्वेक्षण का एक उद्देश्य समाज में व्याप्त सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करना है। वास्तव में कोई भी समाज ऐसा नहीं होता जिसमें कम या अधिक सीमा तक कुछ न कुछ समस्याएं न पाई जाती हों। बेकारी, बीमारी, निर्धनता, अपराध, अनैतिकता, भिक्षावृत्ति, वैवाहिक कुप्रथाएं, जातीय अथवा प्रजातीय संघर्ष आदि इसी प्रकार की प्रमुख समस्याएं हैं। सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य इन समस्याओं की प्रकृति, सीमा और कारणों से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्य एकत्रित करना और उनके आधार पर समस्याओं के समाधान के उपाय ढूंढना है।

3. सामाजिक समस्याओं का समाधान (Solutions to Social Problems)

सामाजिक सर्वेक्षण का यह उद्देश्य व्यावहारिक तथा उपयोगितावादी है। सर्वेक्षण का उद्देश्य उपयोगी सूचनाओं को एकत्रित करना भी होता है जिनकी सहायता से सामाजिक समस्याओं का निराकरण

किया जा सके। इस कार्य के लिए सर्वेक्षणकर्ता किसी विशेष क्षेत्र से सम्बन्धित लोगों की मनोवृत्तियों को ज्ञात करता है और तत्पश्चात् उनके द्वारा दिये गये सुझावों का वर्गीकरण करके उनके आधार पर सुधार कार्यक्रम प्रस्तुत करता है। इस सम्बन्ध में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि सर्वेक्षणकर्ता सामाजिक नियोजनकर्ता नहीं होता। उसका कार्य केवल सर्वेक्षण विधि से तथ्यों को इस प्रकार प्रस्तुत करना होता है जिससे समाज सुधारक,नियोजनकर्ता और नीति-निर्माता विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा समस्याओं का समाधान कर सकें। वर्तमान युग में सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के उद्देश्य से सबसे अधिक सर्वेक्षण आयोजित किये जाते हैं।

4. सामाजिक घटनाओं की व्याख्या (Analysis of Social Incidents)

मोजर का कथन है कि समाजशास्त्रियों के लिए सामाजिक सर्वेक्षण का उद्देश्य अक्सर पूर्णतया वर्णनात्मक भी हो सकता है-जैसे सामाजिक दशाओं, सम्बन्धों अथवा व्यवहारों का अध्ययन आदि। वास्तविकता यह है कि कभी -कभी सर्वेक्षण किसी विशेष उद्देश्य से सम्बन्धित न होकर केवल किसी सामाजिक घटना के वर्णन के लिए ही किया जाता है। उदाहरण के लिए आज बहुत-सी सरकारें शिक्षा, कृषि-विकास, जीवन-स्तर तथा बदली हुई मान्यताओं से सम्बन्धित सामान्य सूचनाएं प्राप्त करने के लिए ही सर्वेक्षण आयोजित करती हैं, य्रद्यपि ऐसे सर्वेक्षण का कोई विशिष्ट उद्देश्य नहीं होता। ऐसे सर्वेक्षण इसलिए आयोजित किए जाते हैं जिससे एक विशेष क्षेत्र के अन्दर विकसित होने वाली सामान्य प्रवृत्तियों को समझा जा सके।

5. कार्य-कारण सम्बन्ध का ज्ञान (Identifying Cause-Effect Relationship)

समाजशास्त्रियों की यह मान्यता है कि प्रत्येक घटना का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक सर्वेक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य विभिन्न सामाजिक घटनाओं अथवा परिस्थितियों के लिए उत्तरदायी कारणों की खोज करना होता है। वास्तव में कोई भी सामान्य घटना आकस्मिक नहीं होती बल्कि उसमें एक नियमितता और श्रृंखलाबद्धता पायी जाती है। सर्वेक्षण का उद्देश्य इसी नियमितता को ज्ञात करके किसी विशेष घटना के मूल कारण को ज्ञात करना और उसके प्रभाव को देखना होता है। उदाहरण के लिए असन्तोष, जनसंख्या की वृद्धि तथा सार्वजनिक जीवन का भ्रष्टाचार कुछ प्रमुख घटनाएं हैं। सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा इनके कारणों तथा प्रभावों को ज्ञात करके बहुत बड़ी सीमा तक इनका समाधान करना सम्भव हो सकता है। सच तो यह है कि कार्य-कारण सम्बन्ध को समझे बिना न तो समस्याओं का निराकरण हो सकता है और न ही सामाजिक विकास की सम्भावना की जा सकती है।

6. परिकल्पना का निर्माण तथा परीक्षा (Formulating and Testing Hypothesis)

किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिए कुछ परिकल्पनाओं का निर्माण करना आवश्यक होता है। इस स्थिति में अनेक सर्वेक्षण इस उद्देश्य से आयोजित किए जाते हैं कि अध्ययन के लिए नई परिकल्पनाओं का निर्माण किया जा सके अथवा पुरानी परिकल्पनाओं की परीक्षा की जा सकें। साधारणतया किसी अध्ययन के लिए परिकल्पनाओं का निर्माण सामान्य ज्ञान के द्वारा ही कर लिया जाता है। सामान्य ज्ञान पर आधारित वह परिकल्पना सत्य है अथवा नहीं, इसका सत्यापन सर्वेक्षण

द्वारा एकत्रित तथ्यों की सहायता से ही किया जा सकता है। इसलिए परिकल्पनाओं की परीक्षा करना सामाजिक सर्वेक्षण का प्रमुख उद्देश्य है।

7. सामाजिक सिद्धान्तों का सत्यापन (Validating Social Theory)

सामाजिक सिद्धान्त विभिन्न सामाजिक घटनाओं के अध्ययनों पर आधारित सामान्य निष्कर्ष होते हैं। सामाजिक घटनाओं की प्रकृति परिवर्तनशील होने के कारण इन सिद्धान्तों में भी परिवर्तन होते रहने की सम्भावना बनी रहती है।यही कारण है कि प्राचीन काल में अथवा कुछ समय पहले तक विभिन्न सामाजिक घटनाओं के आधार पर जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया था। वे वर्तमान की परिस्थितियों में अक्सर उपयुक्त प्रतीत नहीं होती। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक हो जाता है कि वर्तमान सामाजिक दशाओं का सर्वेक्षण करके यह ज्ञात किया जाये कि पूर्व में प्रस्तुत किये गये सिद्धान्त अब किस सीमा तक सही अथवा गलत हैं। इसी कार्य को हम सामाजिक सिद्धान्तों का सत्यापन करना कहते हैं।

8. विकास कार्यक्रमों के प्रभाव का मूल्यांकन (Evaluating Development Program Outcomes):

वर्तमान समय में सामाजिक सर्वेक्षण का यह उद्देश्य अत्यधिक महत्वपूर्ण समझा जाने लगा है । समाज कल्याण तथा नियोजित परिवर्तन के वर्तमान युग में आज सभी सरकारें विभिन्न विकास कार्यक्रमों के द्वारा लोगों के जीवन-स्तर में सुधार लाने का प्रयत्न कर रही है।

9. जनमत का पूर्वानुमान(Forecasting Public Opinion)

सामाजिक सर्वेक्षण का एक प्रमुख उद्देश्य किसी विशेष व्यवहार अथवा घटना का पूर्वानुमान करना भी है। इस प्रकार के सर्वेक्षण सरकारी तथा गैर-सरकारी दोनों क्षेत्रों में किये जाते हैं। कभी-कभी सरकार द्वारा किसी विशेष निर्णय अथवा समस्या के बारे में जनमत को ज्ञात करने के लिये सर्वेक्षण करना अनिवार्य समझा जाता है।

10. सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति (Nature)

सर्वेक्षण मुख्यतः शोध की अलग विधि न होकर आंकडों के संकलन की एक प्रविधि है| इसके अन्तर्गत शोध की अनेक विधियों का सम्मिश्रण होता है,तथा प्रमाणिकता तथा वैज्ञानिकता का महत्व होने के कारण इसे एक विधि माना गया है, इसमें सर्वेक्षण कर्ता घटनाओं के प्रत्यक्ष सम्पर्क में आता है, और कोई भी निदान या निष्कर्ष वास्तविक निरीक्षण परीक्षण के आधार पर करता है।

4.4 सामाजिक सर्वेक्षण के प्रमुख प्रकार

आधुनिक समाजों की संरचना तथा व्यक्तिगत मनोवृत्तियों में तीव्रता से परिवर्तन हो रहा है। यह निश्चित है कि इस स्थिति में सामाजिक समस्याओं के स्वरूप, तत्कालीन अवश्यकताओं और उपलबध साधनों को ध्यान में रखते हुये अनेक प्रकार के सामाजिक सर्वेक्षण आयोजित किये जाने लगे हैं। यही कारण है कि सर्वेक्षण की विषय-वस्तु, पद्धति तथा उद्देश्य को आधार मानते हुए विभिन्न विद्वानों ने सामाजिक सर्वेक्षण के अनेक प्रकारों का उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध में ए. एफ. वेल्स के अनुसार सामाजिक सर्वेक्षण दो प्रकार के होते हैं-**प्रचार सर्वेक्षण** तथा तथ्य एकत्रित करने वाले

सर्वेक्षण। सर्वेक्षण की अवधि को ध्यान में रखते हुए सिन पाओ येंग ने दो अन्य प्रकारों का उल्लेख किया है। ये हैं, सम-सामयिक सर्वेक्षण अथवा विस्तृत सर्वेक्षण।

1. जनगणना तथा निदर्शन सर्वेक्षण (Census Survey and Sample Survey)

जनगणना सर्वेक्षण वह सर्वेक्षण है जिसमें किसी विषय अथवा समस्या से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचनाओं को एकत्रित किया जाता है। यदि अध्ययन क्षेत्र छोटा हो तो ऐसा सर्वेक्षण वैयक्तिक अध्ययनकर्ता द्वारा ही किया जा सकता है। इसके विपरीत यदि अध्ययन का क्षेत्र बहुत बडा होता है तो जनगणना सर्वेक्षण के लिये शोधकर्ताओं के एक समूह की आवश्यकता होती है, तथा ऐसा सर्वेक्षण खर्चीला होता है। इस स्थिति में जनगणना सर्वेक्षण किसी सरकारी संगठन द्वारा सम्पन्न किया जाता है। जनगणना सर्वेक्षण से भिन्न प्रतिदर्श सर्वेक्षण वह है जिसमें अध्ययन क्षेत्र के व्यापक होने तथा साधनों के सीमित होने के कारण प्रत्येक इकाई का पृथक् रूप से अध्ययन करना सम्भव नहीं होता। इस निदर्शन पद्धति के द्वारा सम्पूर्ण समग्र में से कुछ प्रतिनिधि इकाईयों का चयन कर लिया जाता है। इन चयनित की गई इकाईयों से जो सूचनायें प्राप्त होती है,उन्हें उस सम्पूर्ण समूह अथवा समुदाय की विशेषतायें मानकर निष्कर्ष निकाल लिये जाते हैं।

2. पूर्वगामी तथा मुख्य सर्वेक्षण(Pilot Survey and main Survey)

सभी मानवीय प्रयासों के समान सर्वेक्षण की रूप-रेखा भी आरम्भ से ही पूर्ण नहीं होती। कोई भी सर्वेक्षण करने से पहले विषय से सम्बन्धित कुछ प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है। इस प्रकार पूर्वगामी सर्वेक्षण वह सर्वेक्षण है जो किसी विषय अथवा समस्या की आरम्भिक जानकारी प्राप्त करने के लिए आयोजित किया जाता है। ऐसा सर्वेक्षण बहुत सरल और संक्षिप्त प्रकृति का होता है। इसके अन्तर्गत अध्ययनकर्ता न केवल अध्ययन विषय की सामान्य प्रकृति को जानने का प्रयत्न करता है बल्कि कुछ सूचनादाताओं से स्वयं मिलकर यह देखने का प्रयत्न करता है कि किन-किन प्रविधियों तथा स्रोतों से सर्वोत्तम सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं। इस दृष्टिकोण से पूर्वगामी एक अनौपचारिक सर्वेक्षण है।ऐसे सर्वेक्षण से न केवल अध्ययन के समय आने वाली विभिन्न कठिनाईयों का पूर्वानुमान हो जाता है,बल्कि विभिन्न परिस्थितियों में अध्ययन के विकल्पों को समझने में भी सहायता मिलती है,इसी आधार पर एका ॅफ ने लिखा है कि पूर्वगामी सर्वेक्षण किसी अध्ययन को क्रियान्वित करने के लिए वैकल्पिक विधियों का ज्ञान प्राप्त करने की एक विधि है। पूर्वगामी सर्वेक्षण कर लेने के पश्चात् सर्वेक्षण की जो वास्तविक प्रक्रिया आरम्भ की जाती है, उसी को हम मुख्य सर्वेक्षण कहते हैं। यह सर्वेक्षण अत्यधिक विस्तृत और व्यवस्थित होता है, जिसमें वैज्ञानिक स्रोतों के द्वारा सूचनाओं का संकलन, वर्गीकरण तथा विश्लेषण करके सर्वेक्षण रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है, अतः यह कहा जा सकता है कि मुख्य सर्वेक्षण एक आधार है जबकि पूर्वगामी सर्वेक्षण इसका एक साधन है।

3. नियमित तथा कार्यवाहक सर्वेक्षण (Regular and Ad -hoc Survey)

नियमित सर्वेक्षण का अर्थ एक ऐसे सर्वेक्षण से है जो किसी समस्या अथवा विषय से सम्बन्धित सूचनाएं एकत्रित करने के लिए निरन्तर अथवा एक लम्बी अवधि तक चलता रहता है। ऐसे सर्वेक्षण का संचालन करने के लिए किसी स्थायी संस्था अथवा विभाग की आवश्यकता होती है।

उदाहरण के लिए भारत सरकार के जनगणना विभाग द्वारा किये जाने वाले जनसंख्या सम्बन्धी सर्वेक्षण रिजर्व बैंक और स्टेट बैंक द्वारा संचालित साख सुविधाओं तथा ऋणों के उपयोगी सम्बन्धी, सर्वेक्षण तथा समाज कल्याण विभाग द्वारा किया जाने वाला कल्याण कार्यक्रमों का मूल्यांकन् नियमित सर्वेक्षण की प्रकृति को स्पष्ट करते हैं। इसके विपरीत कार्य-वाहक सर्वेक्षण वह है जो किसी तात्कालिक समस्या का अध्ययन करने के लिए किसी अस्थायी संगठन अथवा वैयक्तिक अध्ययनकर्ता द्वारा आयोजित किया जाता है। ऐसे सर्वेक्षण के लिए किसी स्थायी संगठन अथवा विभाग की आवश्यकता नहीं होती। जैसे ही सर्वेक्षण कार्य पूरा हो जाता है,सम्बन्धित संगठन भी भंग कर दिया जाता है। कार्यवाहक सर्वेक्षण साधारणतया एक ऐसी स्थिति में आयोजित किये जाते हैं जब किसी विषय या घटना से सम्बन्धित नीति का निर्धारण करना होता है,किसी विशेष स्थिति में जनता की राय को जानना जरूरी समझा जाता है या एक समूह की भावनाओं के अनुसार किसी विकास कार्यक्रम को कार्यान्वित करना होता है।

4. परिमाणात्मक तथा गुणात्मक सर्वेक्षण (Quantitative and Qualitative Survey)

परिमाणात्मक सर्वेक्षण वह है जो किसी विषय से सम्बन्धित आंकडों को सांख्यिकीय रूप में प्रस्तुत करने में रूचि लेता है। जब कभी भी किसी समय में साक्षरता का प्रतिशत, विवाह-विच्छेद की दर, स्त्री-पुरूषों का अनुपात, जातिगत संरचना, बेरोजगारी की सीमा, प्रतिव्यक्ति आय अथवा आय-व्यय के संतुलन जैसे विषयों का अध्ययन करने के लिए सर्वेक्षण आयोजित किये जाते है, तो इन्हें परिमाणात्मक सर्वेक्षण कहा जाता है। ऐसे सर्वेक्षणों में सांख्यिकीय पद्धति का प्रयोग करके परिणामों को प्रतिशत अथवा अनुपात के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। सर्वेक्षण जब किसी गुणात्मक विषय अथवा घटना से सम्बन्धित होता है तो उसे गुणात्मक सर्वेक्षण कहा जाता है। ऐसे सर्वेक्षणों का उद्देश्य किसी विशेष समूह की मनोवृत्तियों, सामाजिक मूल्यों के प्रभाव, विचारों तथा सामाजिक परिवर्तन की सीमाओं आदि का अध्ययन करना होता है। इसका तात्पर्य है कि गुणात्मक सर्वेक्षण मनोवैज्ञानिक विशेषताओं को जानने से सम्बन्धित होते हैं तथा इनके द्वारा किसी विशेष घटना की अच्छाई-बुराई अथवा एक विशेष प्रवृत्ति के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है।

5. प्रारम्भिक अथवा आवृत्तिमूलक सर्वेक्षण (Initial Survey and Repetitive Survey)

जब सर्वेक्षण किसी विशेष क्षेत्र में पहली बार हो रहा हो तो ऐसे सर्वेक्षण को प्रारम्भिक सर्वेक्षण कहा जाता है। ऐसे सर्वेक्षण से जो निष्कर्ष मिलते हैं उन्हीं को अन्तिम निष्कर्ष मान लिया जाता है। यही कारण है कि विभिन्न विद्वानों ने इस सर्वेक्षण को अन्तिम सर्वेक्षण का भी नाम दिया है। सामान्यतया ऐसे सर्वेक्षण उन विषयों से सम्बन्धित होते है जिनमें दीर्घ अवधि तक कोई विशेष परिवर्तन नहीं होता एवं जिनका अध्ययन क्षेत्र तुलनात्मक रूप से सीमित होता है। यदि अध्ययन से सम्बन्धित विषय अथवा समग्र की प्रकृति परिवर्तनशील होती है तो एक ही विषय पर एक से अधिक बार सर्वेक्षण करने की आवश्यकता होती है जिससे परिवर्तित हुई दशाओं के परिपेक्ष्य में आवश्यक सूचनायें एकत्रित की जा सकें। ऐसे सर्वेक्षण को हम आवृत्तिमूलक सर्वेक्षण कहते हैं क्योंकि इसमें सर्वेक्षण की पुनरावृत्ति की जाती रहती है।

6. सार्वजनिक तथा गुप्त सर्वेक्षण (Public and Secret Survey)

सार्वजनिक सर्वेक्षण एक सामान्य सर्वेक्षण है इसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध जन-सामान्य के जीवन और उसकी समस्याओं से होता है। इस दृष्टि में सार्वजनिक सर्वेक्षण की सम्पूर्ण कार्यवाही किसी समूह अथवा जनता के सामने पूर्णतया स्पष्ट होती है। ऐसे सर्वेक्षण की रिपोर्ट भी जनता की सूचना के लिए प्रकाशित कर दी जाती है। इसके विपरीत कुछ सूचनायें ऐसी होती हैं जिनको प्रत्यक्ष रूप से जनता में सार्वजनिक करना राष्ट्र के हित में नहीं होता, ऐसे विषयों से सम्बन्धित सभी सर्वेक्षण गुप्त सर्वेक्षण कहलाते हैं।

7. प्राथमिक तथा द्वितीयक सर्वेक्षण (Primary and Secondary Survey)

प्राथमिक सर्वेक्षण एक प्रत्यक्ष सर्वेक्षण है इसके अन्तर्गत सर्वेक्षणकर्ता स्वयं ही उत्तरदाताओं से सम्पर्क स्थापित करता है तथा आवश्यक सूचनायें एकत्रित करता है। साधारणतया किसी भी नये विषय पर अध्ययन करने के लिये प्राथमिक सर्वेक्षण का ही आयोजन किया जाता है। यदि अध्ययन विषय इस प्रकार का हो जिस पर पहले ही अध्ययन किये जा चुके हो तथा उनके निष्कर्षों का सत्यापन करने की आवश्यकता महसूस की जा रही हो तो द्वितीयक सर्वेक्षण आयोजित किये जाते है। द्वितीयक सर्वेक्षण में उत्तरदाताओं से नये सिरे से सूचनायें एकत्रित करने की आवश्यकता नहीं होती बल्कि पहले एकत्रित किये गये तथ्यों का ही नये सिरे का मूल्यांकन किया जाता है।

उपर्युक्त सर्वेक्षण के सभी प्रकारों में उपयोगिता के दृष्टिकोण से भी ऊंच-नीच का कोई विभाजन नहीं किया जा सकता क्योंकि सभी सर्वेक्षण अपने -अपने क्षेत्र में समान रूप से महत्वपूर्ण होते हैं।

4.5 सामाजिक सर्वेक्षण की सीमायें (Limitations of Social Survey)

सामाजिक सर्वेक्षण के महत्व को देखते हुये यह नहीं समझना चाहिये कि इसमें कोई दोष नहीं है। सर्वेक्षण पद्धति के भी अपने कुछ दोष अथवा सीमायें हैं जिन्हें निम्नलिखित रूप से समझा जा सकता है:

1. सामाजिक सर्वेक्षण के अन्तर्गत अध्ययन की जाने वाली समस्याओं तथा घटनाओं का क्षेत्र बहुत सीमित होता है।
2. सामाजिक सर्वेक्षण के द्वारा मात्र उन्हीं घटनाओं का अध्ययन सम्भव है जो मूर्त अथवा स्थूल प्रकृति की हों।
3. सामाजिक सर्वेक्षण द्वारा एकत्रित तथ्य सदैव विश्वसनीय नही होते। इसका कारण यह है कि सर्वेक्षण ज्यादातर अपने विचारों, अनुभवों और व्यक्तिगत पक्षपात से प्रभावित होकर घटना को वास्तविक रूप में नहीं देखता बल्कि मनमाने रूप से प्रस्तुत कर देता है।
4. सर्वेक्षण द्वारा केवल वर्तमान सामाजिक घटनाओं अथवा समस्याओं का ही अध्ययन किया जा सकता है।
5. सामाजिक सर्वेक्षण में अधिक समय लगने के साथ ही यह बहुत व्ययपूर्ण भी होता है।
6. सामाजिक सर्वेक्षण एक सहकारी प्रयत्न है जिसमें अनके कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है। सर्वेक्षण को केवल तभी सफल बनाया जा सकता है जब इससे सम्बन्धित कार्यकर्ता प्रशिक्षित हों।

7. सर्वेक्षण से सम्बन्धित अधिकांश अध्ययन पूर्व नियोजित नहीं होते, परिणामस्वरूप इनके आधार पर दिये गये निष्कर्षो से सिद्धान्तों का निर्माण नहीं हो पाता।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि सामाजिक सर्वेक्षण की अपनी अनेक सीमायें है,अतः सर्वेक्षण के लिये सर्वेक्षणकर्ता को बहुत ही सावधानीपूर्वक उपयोग करना चाहिए। सर्वेक्षण की सफलता बहुत बडी सीमा तक सर्वेक्षणकर्ता के वैयक्तिक गुणों पर निर्भर करती हैं।

4.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई के द्वारा विद्यार्थियों को सर्वेक्षण की महत्ता से अवगत कराना है। सर्वेक्षण की अवधारणा इस तथ्य पर आधारित होती है कि किसी भी अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने के लिये सर्वेक्षण की महती भूमिका है। सर्वेक्षण के द्वारा किसी भी विषय अथवा समस्या के बारे में प्रारंभिक जानकारी प्राप्त हो जाती है।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. सामाजिक सर्वेक्षण को परिभाषित कीजिए तथा उसें उद्देश्यों को बताइए।
2. सामाजिक सर्वेक्षण की प्रकृति को स्पष्ट करते हुए इसके प्रकार बताइये ।
3. सामाजिक सर्वेक्षण की सीमाएं निर्धारित कीजिये।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research, 1960
- Burgess E.W., Social Survey, A Field for constructive service by development for sociology, 1916
- Kleg Evan, Research in Social Work, Social Work Year Book, ASWA, 1935
- Lundberg, Social Research
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई- 5

तथ्य, सिद्धान्त एवं अवधारणा

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 तथ्य (Fact)

5.3 सिद्धान्त (Theory)

5.4 अवधारणा (Concept)

5.5 सारांश

5.6 अभ्यास प्रश्न

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्य का अर्थ, परिभाषाओं तथा विशेषताओं को जान सकेंगे।
- सिद्धान्त का अर्थ, परिभाषाओं तथा विशेषताओं को जान सकेंगे।
- अवधारणा का अर्थ, परिभाषाओं, विशेषताओं तथा महत्व से परिचित हो सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में तथ्य, सिद्धान्त एवं अवधारणा का अर्थ, परिभाषा, विशेषता एवं महत्व के बारे में बताया गया है। इकाई में सिद्धान्त की अवधारणा से विद्यार्थियो को परिचित कराना है। कोई भी विषय आधारभूत सिद्धान्तों के बगैर नहीं चल सकता है। सिद्धान्त वह सोपान होता है जो किसी भी विषय की दशा-दिशा तय करता है।

5.2 तथ्य (Fact)

तथ्य का अर्थ

विज्ञान एक ऐसी पद्धति तथा दृष्टिकोण है,जिसके द्वारा मानव के सामाजिक पर्यावरण एवं उससे सम्बन्धित विभिन्न तथ्यों के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। मानव से सम्बन्धित विभिन्न घटनाओं, प्रघटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्ध का पता लगाकर वैज्ञानिक विधि के माध्यम से नवीन तथ्यों या पुराने तथ्यों की वैज्ञानिक वैधता की जांच की जाती है। विज्ञान तथ्य एकत्रित करता है और उन तथ्यों के आधार पर सांसारिक प्रघटनायें जो मानवीय अनुभूति के अन्तर्गत आती हैं, के सन्दर्भ में सिद्धान्त प्रस्तुत करता है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि वैज्ञानिक ज्ञान में तथ्यों तथा सिद्धान्तों का समावेश होता है।

तथ्य एवं सिद्धान्त के विषय जनसामान्य की धारणा से पृथक है। जनसामान्य की धारणा के अन्तर्गत तथ्यों को निश्चित एवं अविवादास्पद इत्यादि गुणों से युक्त तथा स्वयंसिद्ध माना जाता है। किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन के लिये तथ्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है अधिकांशतः वैज्ञानिक विवरणों में 'तथ्य' शब्द का प्रयोग अत्यधिक किया जाता है लेकिन इसको परिभाषित करना एक दु ष्कर कार्य है। इस सम्बन्ध में **पी. वी. यंग** ने 'Scientific Social Surevey and Research' में लिखा है कि, "तथ्य एक ऐसा शब्द है जिसको परिभाषित करना बहुत ही कठिन है।यंग का तर्क है कि तथ्य केवल मूर्त वस्तुओं तक ही सीमित नहीं हैं अमूर्त वस्तुएं भी तथ्य के अंतर्गत आती हैं। सामाजिक विज्ञान में विचार,अनुभव एवं भावनाओं आदि अमूर्त वस्तुओं को भी तथ्य के अंतर्गत रखा जाता है।"

तथ्य की परिभाषायें

पी. वी. यंग के अनुसार "तथ्यों को ऐसे भौतिक, शारीरिक, मानसिक या उद्वेगात्मक घटनाओं के रूप में देखा जाना चाहिये जिनकी निश्चयपूर्वक पुष्टि की जा सकती है एवं जिन्हें 'भाष्य की दुनिया' में सच कहकर स्वीकार किया जाता है।"

फेयरचाइल्ड (Fairchild) ने 'Dictionary of Sociology' में तथ्य की दो परिभाषायें दी है -

1. तथ्य एक घटना है जिसके अवलोकनों एवं मापों के विषय में सभी में बहुत अधिक सहमति पायी जाती है।
2. तथ्य कोई प्रदर्शित किया गया या प्रकाशित किया जाने वाला वास्तविक मद या विषय है।

इसी प्रकार गुडे एवं हाट ने 'Methods in Social Research' में कहा है कि तथ्य एक अनुभवसिद्ध सत्यापनीय अवलोकन है।

तथ्य की विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि-

1. तथ्य एक ऐसी घटना है जिसे भाष्य की दुनिया में सच कहकर स्वीकार किया जाता है।
2. तथ्य का सम्बंध ऐसी घटनाओं से होता है जो वास्तविक रूप में घटित होती हैं या वास्तविक रूप में विद्यमान रहती हैं।
3. तथ्य के सम्बन्ध में अगर किसी को कोई शंका होती है तो वह इसकी पुनः परीक्षा कर सकता है। इस तरह तथ्य एक ऐसी घटना है जिसे सभी सच मान सकते हैं या शंका होने पर उसकी जांच कर सकते हैं। जिस घटना की पुनः परीक्षा या जांच सम्भव नहीं है उसे तथ्य नहीं कहा जा सकता है।
4. तथ्य अमूर्त एवं मूर्त होते हैं। इस प्रकार घटना को मूर्त रूप में देखा जा सकता है। साथ ही इसे भौतिक या शारीरिक, मानसिक या उद्वेगात्मक घटनाऑ के रूप में देखा जा सकता है।
5. तथ्य किसी घटना या प्रक्रिया की सदैव पूर्व व्याख्या प्रस्तुत नहीं करता है। बहुत से तथ्य एक साथ मिलकर उस घटना या प्रक्रिया की पूरी तरह व्याख्या करने में समर्थ होते हैं। अधिक जटिल घटना या प्रक्रिया की संपूर्ण व्याख्या करने के लिये तथ्यों की श्रृंखला भी उतनी ही अधिक महत्वपूर्ण होती है। थामस एवं जनेनिकी ने भी कहा है कि "एक तथ्य को ग्रहण करने में हम किसी प्रक्रिया-विशेष के किसी एक निश्चित व सीमित पक्ष को उसकी असीमित जटिलता से पृथक कर लेते हैं।

6. **दुर्खीम** के अनुसार सामाजिक तथ्य की दो प्रमुख विशेषतायें हैं –
   पहली विशेषता वाह्यता (Exteriority) है . दूसरी विशेषता बाध्यता (Constraint) है।
   सामाजिक तथ्य एक वस्तु की भांति होते हैं, इस कारण वह सदस्यों के मस्तिष्क के विचार के बाहर है। साथ ही इसका प्रभाव समाज के सदस्यों पर वाह्यतामूलक होता है।
7. तथ्य एक ऐसी घटना है जिसका वास्तविक निरीक्षण या अवलोकन या अनुभव करना संभव है। अर्थात् जो घटना घटित हुई है उसकी अवलोकन द्वारा परीक्षा की जाती है।
8. तथ्य एक ऐसी घटना है जिसके अवलोकनों एवं मापों के सम्बन्ध में सभी लोगों का समान मत होता है।

5.3 सिद्धान्त (Theory)

सिद्धान्त का अर्थ एवं परिभाषा

यदि हम सिद्धान्त की बात करें तो सिद्धान्त का अभिप्राय, अनुमान, अव्यावाहारिकता से लगाया जाता है। लोगों की धारणा में इस प्रकार की मान्यतायें आज भी विद्यमान है कि सिद्धान्त में सब कुछ सही है लेकिन व्यवहार में नहीं। अधिकांश लोगों को यह कहते हुये सुना जाता है कि अमुक बात सिद्धान्तों में नहीं है, ऐसा करना सिद्धान्त के अनुरूप बिल्कुल गलत है लेकिन इसके विपरीत जब हम व्यवहार की बात करते हैं तो बहुत ही विरले लोग होंगे जो सिद्धान्तों के अनुरूप व्यवहार करते हों । सिद्धान्त के सन्दर्भ में इस व्यापक भ्रान्ति की ओर ध्यान देते हुये जहोदा एवं अन्य ने कहा है, सिद्धान्त शब्द का आधुनिक विज्ञान के अन्तर्गत जो स्वरूप है, उसे इस शब्द के अन्य प्रचलित स्वरूपों से पृथक किया जाना नितान्त आवश्यक है।अक्सर सिद्धान्त से अभिप्राय लगाये जाने से यह धारणा बनती है कि जो कुछ सैद्धान्तिक है वह सब अवास्तविक तथा दिवास्वप्नमयी है। उपर्युक्त मत को और स्पष्ट करते हुये कोहन ने लिखा है कि सिद्धान्त शब्द एक खाली चेक की भांति है। इस शब्द का मूल्य इसे प्रयोग में लेने वाले पर निर्भर करता है।

सिद्धान्त को परिभाषित करते हुये **पी. लूमिस (P. Loomis)** ने 'Modern Sociological Theories' में लिखा है कि तर्कसंगत रूप में अंतःसम्बन्धित ऐसी अवधारणायें जिन्हें कि वैज्ञानिकों के निरीक्षणों द्वारा सुझाये गये तर्कवाक्यों में संयुक्त किया गया हो, एक सिद्धान्त का निर्माण करती हैं।

तिमाशेफ (Timashef) ने सिद्धान्त को परिभाषित करते हुये 'Sociological Theory its Nature and Growth' में लिखा है, एक सिद्धान्त कुछ ऐसे तर्क वाक्यों का एक समूह है जो भली प्रकार निम्नलिखित शर्तों को पूरा करते हैं –

1. इन तर्क वाक्यों को यर्थाथतः परिभाषित अवधारणाओं के रूप में प्रस्तुत किया गया हो,
2. वे परस्पर एक-दूसरे के साथ संगतपूर्ण हों,
3. वे इस प्रकार के हों ताकि उनसे निगमनित तौर पर वर्तमान सामान्यीकरण किया जा सके
4. सिद्धान्त निश्चय हैं जो आगे के निरीक्षण व सामान्यीकरण का रास्ता दिखाते हुये ज्ञान के क्षेत्र को बढ़ायें।

सिद्धान्त को परिभाषित करते हुये **टाल्कट पारसन्स** ने 'The Structure of Social Action' में लिखा है, सिद्धान्त कुछ ज्ञात तथ्यों से निकाले गये सामान्यीकरण से बनता है और वह इस अर्थ में किसी ज्ञात तथ्य समूह का औचित्य कौन से सामान्य कथन करेंगे।

मार्टिन (Martin) ने 'Sociology Today' में लिखा है कि , केवल उसी अवस्था में जबकि अवधारणायें एक योजना के रूप में अंतःसम्बंधित हो जाती हैं, तभी एक सिद्धान्त प्रतिपादित होता है।

सिद्धान्त की विशेषताएं

विभिन्न परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि-

1. सिद्धान्त की प्रकृति निगमनात्मक है।
2. एक व्यवस्था के रूप में, यह अन्तःसम्बन्धित प्राक्कथनों की एक संयोजना प्रस्तुत करती है।
3. सिद्धान्त एक विश्लेषणात्मक व्यवस्था है।
4. शीर्ष स्तरीय प्राक्कथन सत्यापित प्रकृति के होते हैं।

5.4 अवधारणा (Concept)

अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषा

किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन में अवधारणा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। यह भी तथ्य एवं सिद्धांत की ही भाँति अपना महत्व रखता है। जब शोधकर्ता तथ्यों में अंतः सम्बन्धों को देखता है या एक निश्चित घटना या व्यवहार प्रतिमान को वह पृथक् करने में सफल होता है तो वह उस संपूर्ण स्थिति को अति संक्षिप्त रूप में एक या दो शब्दों की सहायता से अभिव्यक्त करता है। तथ्यों के एक वर्ग की इस संक्षिप्त अभिव्यक्ति को ही विज्ञान में अवधारणा कहा जाता है।

अवधारणा को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है। इन विद्वानों द्वारा प्रस्तुत परिभाषाएँ निम्नलखित हैं:

फेयरचाइल्ड ने 'Dictionary of Sociology' में अवधारणा को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''अवधारणाएँ वे विशिष्ट मौखिक संकेत हैं जो कि वैज्ञानिक निरीक्षण एवं चिंतन के आधार पर निकाले गए सामान्यीकृत विचारों को दिए जाते हैं।''

पी. वी. यंग ने 'Scientific Social Survey and Research' में अवधारणा की परिभाषा देते हुए लिखा है, ''तथ्यों के प्रत्येक नए वर्ग को, जिसे कि अन्य वर्गों से कुछ निश्चित विलक्षणताओं के आधार पर अलग कर लिया गया हो, एक नाम या एक लेबल दे दिया जाता है जो कि अवधारणा कहलाता है। वास्तव में एक अवधारणा तथ्यों के रूप वर्ग या समूह की एक संक्षिप्त परिभाषा है।''

अवधारणा को परिभाषित करते हुए **मिचैल (Michel)** ने 'Dictionary of Sociology' में लिखा है, ''अवधारणा एक विवरणात्मक गुण या संबंध की ओर संकेत करने वाला एक पद है' (Concept is a term referring to a discriptive property or relation)।

सरेग (Schrag) ने अवधारणा को परिभाषित करते हुए` 'Sociological Theory: Inquiries and Paradigms' में लिखा है, ''अवधारणाएँ वे शब्द या संकेत होते हैं जो सिद्धांत की शब्दावली प्रदान करते हैं एवं उनकी विषयवस्तु को बतलाते हैं।'

अवधारणा की विशेषताएँ

अवधारणा की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

1. अवधारणा किसी घटना या व्यवहार प्रतिमान की संपूर्ण व्याख्या नहीं अपितु उसका एक संकेत मात्र होता है।

2. यह तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक ऐसी संक्षिप्त परिभाषा है जिसे कि एक या दो शब्दों में व्यक्त किया जा सकता है।
3. इसका एक तार्किक आधार होता है एवं उसका निर्माण प्रत्यक्ष ज्ञान, वास्तविक निरीक्षण एवं यथार्थ अनुभव के बल पर होता है।
4. यह स्वयं सिद्धांत का संक्षिप्त रूप नहीं होता अपितु तथ्यों के वर्ग की विशेषताओं को संक्षेप में बतलाने वाला होता है।
5. इसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी होता रहता है। नए तथ्यों के संचय होने से इसमें परिवर्तन होता रहता है।
6. अवधारणा अपने में अर्थयुक्त होती है क्योंकि यह तथ्यों के एक निश्चित समूह या वर्ग में पाए जाने वाली विलक्षणताओं का द्योतक होती है।
7. अवधारणा का निर्माण वैज्ञानिक निरीक्षण या चिंतन के आधार पर होता है। यह कोई अटकलपच्चू या अनुमान मात्र नहीं होता है।

अवधारणा का महत्व

अवधारणा का महत्व अधिक है क्योंकि तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक संक्षिप्त परिभाषा होती है। अवधारणा के माध्यम से एक घटना या प्रक्रिया को केवल एक-दो शब्दों द्वारा समझाया जा सकता है। अवधारणाओं के महत्व को समझाते हुए गुडे एवं हाट ने लिखा है कि अवधारणा को विकसित करने की प्रक्रिया इन्द्रियजनित बोध को प्राप्त करने एवं उससे निष्कर्ष निकालने में सहायक सिद्ध होती है। इस प्रकार तथ्यों के एक वर्ग या समूह के गुणों को समझना, उनका अध्ययन करना, उन्हें व्यवस्थित एवं पृथक् करना संभव होता है। विचारों के प्रथम चरण मेंअवधारणाओं का निर्माण आवश्यक होता है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अवधारणा- परिस्थितियाँ- घटना-विशेष का एक संक्षिप्त परिचय होती है जिसका प्रयोग सुविधा की दृष्टि से एवं उस परिस्थिति या घटना-विशेष के संबंध मेंएक सामान्य विचार-श्रृंखला को जीवित करने में सहायक सिद्ध होता है। इस तरह यह पता चलता है कि अवधारणा का अपना अलग महत्व होता है।

5.6 सारांश

सिद्धान्त के द्वारा ही किसी भी विषय की कार्ययोजना तैयार की जाती है, कि तथा उस विषय विशेष की भावी योजना तैयार की जाती है। सिद्धान्त किसी भी विषय की जीवन रेखा होता है जिसका निर्माण गहन अध्ययन, शोध एवं विचार विमर्श के बाद होता है। तथ्य का सम्बंध ऐसी घटनाओं से होता है जो वास्तविक रूप में घटित होती हैं या वास्तविक रूप में विद्यमान रहती हैं। अवधारणा तथ्यों के एक वर्ग या समूह की एक संक्षिप्त परिभाषा होती है। अवधारणा- परिस्थितियाँ- घटना-विशेष का एक संक्षिप्त परिचय होती है|

5.7 अभ्यास प्रश्न

1. तथ्य से आप क्या समझते हैं? इसकी विशेषताओं का उल्लेख कीजिये।
2. सिद्धान्त क्या है? इसे परिभाषित करें।
3. अवधारणा के महत्व को स्पष्ट कीजिये |

5.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P.V. Young, Scientific Social Surveys and Research, 1960
- Burgess, E.W., Social Survey, A Field for constructive service by development for sociology, 1916
- Kleg, Evan, Research in Social Work, Social Work Year Book, ASWA, 1935
- Bogardus, Sociology
- Lundberg, Social Research
- Goode & Hott, The Proper Study of Mankind
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 6

शोध समस्या - प्रतिपादन एवं चयन

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 शोध समस्या का प्रतिपादन एवं चयन
(Formulation and Selection of the Research Problem)

6.3 समस्या प्रतिपादन के आधार

6.4 समस्या प्रतिपादन से सम्बंधित प्रक्रियाएँ

6.5 सारांश

6.6 अभ्यास प्रश्न

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- शोध समस्या के प्रतिपादन के बारे में जान सकेंगे।
- शोध समस्या के चयन के बारे में जान सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में शोध समस्या के प्रतिपादन एवं चयन के बारे में बताया गया है। शोध समस्या का चयन एक महत्वपूर्ण कार्य है। लेकिन शोध विषय का चयन कर लेने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि वही विषय शोध का ''वास्तविक विषय' भी बन जाये। अनुसंधान के लिये विषय का चयन करने के उपरान्त एक अनुसंधानकर्ता इस स्थिति में नहीं होता कि वह सोचने लगे कि उददेश्य प्राप्ति के लिये कौन से आंकड़ें उपयोगी हैं तथा किस पद्धति द्वारा इनका संकलन एवं विश्लेषण किया जाये।

6.2 शोध समस्या का प्रतिपादन एवं चयन (Formulation and Selection of the Research Problem)

शोध समस्या का निर्धारण शोधकर्ता के उद्देश्य को एक स्पष्ट अर्थ देने के साथ ही उन्हें अवधारणाओं के रूप में परिभाषित करता है। यह स्पष्ट है कि शोध किये जाने वाले विषय के उद्देश्य जब तक स्पष्ट नहीं हो जाते, तब तक शोध गतिविधियां केवल अर्थहीन अभ्यास बन कर रह जाती हैं। वास्तव में मानव गतिविधियों की भांति शोध भी कुछ विशिष्ट उद्देश्यों से निर्देशित होता है। साधारण शब्दों में, शोध से सम्बन्धित समस्या सैद्धान्तिक अथवा व्यावहारिक परिस्थिति में शोधकर्ता के द्वारा अनुभव की जाने वाली एक विशिष्ट कठिनाई है। इस कठिनाई अथवा कठिनाईयों का निराकरण ही शोध का कार्य है।

सामाजिक शोध की प्रकृति वैज्ञानिक है क्योंकि इसके अन्तर्गत वैज्ञानिक पद्धतियों का उपयोग किया जाता है। शोध समस्या का चयन एवं प्रतिपादन सामाजिक शोध का प्रथम चरण है। शोध कार्य तब तक प्रारम्भ नहीं किया जा सकता जब तक कि समस्या का चयन नहीं कर लिया जाये। व्यक्ति के मस्तिष्क में आये प्रत्येक विचार या कल्पनायें शोध का विषय नहीं बन सकती। शोध के लिये उपयुक्त विषय का चयन करते समय इस बात पर ध्यान देना आवश्यक है कि समस्या से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचनायें सुलभता से उपलब्ध हो सकेगी या नहीं, किसी वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करते हुये महत्वपूर्ण तथ्यों का संग्रहण किया जा सकेगा या नहीं एवं विषय के सामान्यीकरण तथा नियमों के प्रतिपादन की दृष्टि से उपयोगिता है अथवा नहीं।

समस्या का प्रतिपादन (Formulation of Problem)

समस्या के प्रतिपादन का अर्थ है इसको विशेषीकृत, संक्षिप्त, क्रमबद्ध एवं निश्चित बनाना। समस्या के विशेषीकरण का अर्थ है इसे किसी भी क्षेत्र में सामान्यता से अलग रखने, विशेषीकरण के माध्यम से ही किसी विषय की सूक्ष्मतम जानकारी प्राप्त करने से होता है। क्योंकि जितना ही विशेषीकृत करने का प्रयत्न किया जायेगा उसके परिणाम उतने ही व्यावहारिक जीवन में उपयोगी होंगे। समस्या का क्रमबद्ध तरीके से अध्ययन वैज्ञानिक अध्ययन का प्रमुख पहलू होता है। क्रमबद्धता के अभाव में सभी आयामों के विषय में जानकारी नहीं प्राप्त की जा सकती है। अतः समस्या के उद्देश्य एवं लक्ष्यों तथा गहनता के विषय में पूर्ण जानकारी करना आवश्यक होता है।

इस प्रकार से विशेषीकरण, सूक्ष्मीकरण एवं क्रमबद्धीकरण के माध्यम से समस्या निश्चित कथन के रूप में बदल जाती है। जिससे उसका पूर्ण अध्ययन करना आसान हो जाता है तथा उसे व्यावहारिकता के समीप लाया जा सकता है। **आइन्सटीन तथा इनफैल्ड** के अनुसार, ''समस्या का प्रतिपादन प्रायः इसके समाधान से अधिक आवश्यक है। **आर. एल. एकाफ** ने शोध समस्या के प्रतिपादन में निम्नलिखित अंगभूतों के पहचान करते हुये इनका वर्णन किया हैः

1. शोध उपभोक्ता एवं अन्य सम्मिलनकर्ता।
2. शोध के उद्देश्य।
3. उद्देश्यों की प्राप्ति के विकल्पीय साधन।
4. विकल्पों की दक्षता के विषय में भ्रांतियां।
5. पर्यावरण जिससे समस्या सम्बन्धित है।

6.3 समस्या प्रतिपादन के आधार (Basis of Formulation of Research Problem)

1. अनुसंधान के उपभोक्ता (Consumers of Research)

अनुसंधान के उपभोक्ता दो प्रकार के होते हैं। प्रथम प्रकार के उपभोक्ता वे हैं जो अनुसन्धान प्रक्रिया में लगे रहते हैं तथा दूसरी प्रकार के उपभोक्ता अनुसंधान से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होने वाले व्यक्ति होते हैं। ये उपभोक्ता अनुसन्धान समस्या के प्रतिपादन का आधार होते हैं।

2. अनुसंधान के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Aims and Objectives of Research)

अनुसंधान के उद्देश्य एवं लक्ष्य समस्या प्रतिपादन की रूपरेखा तैयार करते हैं। इन्हीं के द्वारा समस्या के क्षेत्र की व्यापकता एवं गहनता निश्चित होती है। उद्देश्यों तथा लक्ष्यों में प्राथमिकता का निर्धारण भी समस्या के प्रतिपादन का आधार बनता है।

3. साधनों का पता लगाना (Identifying the Resources)

अनुसंधान के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की पूर्ति के लिये साधनों का पता लगाया जाता है। उपलब्ध साधन विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं। कुछ साधन स्थानीय होते हैं तथा कुछ बाहरी होते हैं।बाहरी साधनों को जुटाने में पर्याप्त प्रयास करना पड़ता है।

4. साधनों की कुशलता के आधार पर चयन (Evaluation of Resouces on the basis of their Effectiveness)

उपलब्ध साधनों का समय एवं कौशल के आधार पर कुशलता का पता लगाया जाता है।

5. साधनों का चयन (Selection of Resources)

कुशल एवं मितव्ययी साधनों का चयन किया जाता है। इन साधनों के आधार पर समस्या अध्ययन हेतु प्रतिपादित की जाती है।

6. वातावरण (Environment)

वातावरण जिसके अंतर्गत समस्या का अध्ययन हेतु चयन किया गया है, परिवर्तन के कारण बदलता रहता है। जिससे समस्या की प्रकृति प्रभावित होती है। समस्या की प्रकृति के आधार पर इसका प्रतिपादन निर्भर करता है। वातावरण का तात्पर्य अध्ययन के लिए संस्था तथा अध्ययन के परिणामों को प्रभावित करनेवाली इकाइयों से है।

6.4 समस्या के प्रतिपादन से सम्बंधित प्रक्रियायें (Processes of Problem Formulation)

समस्या के प्रतिपादन से सम्बंधित प्रक्रियायें दो प्रकार की होती हैं –

(अ) ज्ञान को विस्तृत करने की प्रक्रिया

इस प्रक्रिया के माध्यम से अध्ययन के क्षेत्र के विषय में ज्ञान का विकास करना है। पूर्ण, उपयोगी एवं सफल अध्ययन के लिए आवश्यक है कि अध्ययन के विषय के बारे में स्थित ज्ञान का पूर्ण सर्वेक्षण कर तथा उसके विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर ली जाय। इस प्रक्रिया में निम्न चरण होते हैं:

1. घटनाक्रम का पर्यवेक्षण (Inspection of Event)

समाज में विभिन्न प्रकार की स्थितियां एवं घटनाएं पायी जाती हैं। इनके पर्यवेक्षण से अनुसन्धानकर्ता में अनुसन्धान के लिये जिज्ञासा उत्पन्न होती है क्योंकि इन स्थितियों एवं घटनाओं की व्याख्या करना अनिवार्य हो जाता है। इससे ज्ञान का विस्तार होता है।

2. पूर्व-स्थिति सामग्री का अध्ययन (Study of Pre-event Conditions)

चयनित समस्या का चुनाव पहले भी किया जा सकता है। इसलिए ज्ञान के विस्तार हेतु इस प्रकार की सामग्री का अध्ययन करके ज्ञान को बढाया जा सकता है।

3. समस्या के विषय में जानकारी रखने वाले व्यक्तियों के अनुभव की जानकारी (Experiences of Experts in the Problem Area)

अध्ययन समस्या के विषय मे जानकारी रखने वाले व्यक्तियों से सलाह-मशविरा किया जाता है। उनके अनुभवों का लाभ लिया जा सकता हैं। इस कार्य से भी ज्ञान का विस्तार होता है।

4. घटना से सम्बन्धित व्यक्तियों से वार्तालाप (Communication with People Related with the Event)

घटना जिस पर समस्या आधारित है, से सम्बन्धित व्यक्तियों से इसकी जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार के व्यक्तियों का घटना से सीधा सम्बन्ध होता है तथा ये इससे प्रभावित होते हैं। अतः इनसे भी जानकारी कर ज्ञान का विस्तार किया जा सकता है।

(ब) अध्ययन हेतु केन्द्र बिन्दु पर पहुंचने की प्रक्रिया

ज्ञान के विस्तार करने की प्रक्रिया के उपरान्त अध्ययन में क्रमबद्धता एवं केन्द्रीकरण लाने की आवश्यकता होती है। इस कार्य के लिए अध्ययन के केन्द्र बिन्दु पर अपने सीमा एवं क्षेत्र की व्यापकता में कमी लाते हुए पहुंचा जाता है। इसे लघुकरण की प्रक्रिया कहा जाता है। इसमें निम्न चरण होते हैं-

1. अवधारणाओं का चयन एवं परिभाषा (Concept and Definition of Selection)

समाज में चयनित समस्या से सम्बन्धित विभिन्न अवधारणायें विद्यमान रहती हैं। समस्या के सर्वप्रथम चयन के उपरान्त अवधारणाओं को अध्ययन में शामिल किया जाता हैं। इन अवधारणाओं को परिभाषित किया जाता है क्योंकि समाज में एक अवधारणा के विभिन्न अर्थ हो सकते हैं।

2. चरों की पहचान (Identifying Variables)

प्रत्येक अवधारणा का मापन विभिन्न विशेषताओं के आधार पर किया जाता है। इन विशेषताओं को चरों की संज्ञा दी जाती है। प्रत्येक अवधारणा से संबन्धित चरों को अध्ययन में शामिल किया जाता है। इससे भी समस्या के विषय क्षेत्र में कमी आती है तथा केन्द्र बिन्दु की ओर अग्रसर होने का अवसर मिलता है।

3. कार्यकारी परिभाषायें देना (Operational Definitions)

इसके उपरान्त प्रत्येक अवधारणा एवं चरों के अर्थ को निश्चित करना पडता है कि इस अध्ययन विशेष के लिये यह अर्थ लागू होगा इस अर्थ को कार्यकारी परिभाषा की संज्ञा दी जाती है तथा इससे भी ज्ञान की सीमा को बढाया जाता है।

4. परिकल्पना का निर्माण (Formulating Hypothesis)

अपने पर्यवेक्षण एवं पूर्ण ज्ञान के आधार पर अवधारणाओं एवं चरों के मध्य सम्भावित सम्बन्ध की स्थापना की परिकल्पना की जाती है। इसकी सत्यता की जांच परीक्षण के माध्यम से की जा सकती है। इस स्थिति को परिकल्पना का निर्माण कहते हैं जो अध्ययन की व्यापकता को पर्याप्त रूप से सीमित करता है।

5. अध्ययन के प्रतिमान एवं विधियां निश्चित करना (Deciding Pattern and Methods of Study)

अन्त में अध्ययन के प्रतिमानों एवं विधियों के चयन के माध्यम से इसकी सीमा को निश्चित किया जाता है। अध्ययन के क्षेत्र के विषय में इसकी इकाइयों को निश्चित किया जाता है। इकाइयों को निश्चित करने के लिये जनगणना या निदर्शन पद्धति का चयन किया जाता है।

शोध समस्या का चयन (Selection of Research Problem)

सामाजिक अनुसंधान में समस्या के चयन में अनुसंधानकर्ता वैज्ञानिक ज्ञान एवं निपुणताओं के माध्यम से उपयुक्त समस्या का चयन करता है। सामाजिक अनुसंधान विशेषतया व्यक्ति और उसके पर्यावरण से सम्बन्धित क्रियाकलापों एवं अन्तःसम्बन्धों का अन्वेषण करता है, यह समस्यायें मुख्य रूप से सामाजिक होती हैं। पी. वी. यंग ने समस्या के चयन में निम्नलिखित बातों पर बल दिया है:

1. विषय इस तरह का होना चाहिए जो अनुसंधानकर्ता आसानी से समझ सके और निश्चित अवधि में उसे पूरा कर सके।
2. अध्ययन किये जाने वाले विषय से सम्बन्धित यदि कोई अन्य शोध उपलब्ध न हो तो ऐसी स्थिति में विषय के क्षेत्र को व्यापक नहीं बनाना चाहिए।
3. शोधकर्ता को ध्यान रखना चाहिए कि उपलब्ध प्रविधियों की सहायता से विषय का अध्ययन सम्भव है अथवा नहीं।
4. विषय अथवा समस्या के चयन से वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना सम्भव है अथवा नहीं।

जिकमण्ड (Jikmand) ने समस्या या विषय के चयन से सम्बन्धित निम्नलिखित बातों पर बल दिया है:

(क) समस्या या विषय दो या अधिक अवधारणाओं या चरों के मध्य सम्बन्धों के मूल्यांकन पर केन्द्रित हो।

(ख) समस्या का विषय स्पष्ट होना चाहिए न कि अनेकार्थी।

(ग) सामान्य समस्या को विभिन्न अनुसंधान प्रश्नों में परिवर्तित किया जाए।

(घ) समस्या से सम्बन्धित आधार सामग्री संग्रह करना सम्भव है अथवा नहीं।

(ड) समस्या नैतिक या नीतिशास्त्र सम्बन्धी स्थिति को नहीं दर्शाती है।

आइन्सटीन तथा इनफैल्ड. (Einstien and A. Enfald) के अनुसार, ''समस्या का प्रतिपादन प्रायः इसके समाधान से अधिक आवश्यक है।''

शोध समस्या के चयन के विषय में आर. एल. एकाफ का विश्लेषण महत्वपूर्ण दिशा प्रदान करता है। एकाफ ने किसी समस्या के चयन के विषय में पांच तत्वों का विद्यमान होना आवश्यक माना है। जो निम्नलिखित है:

1. **शोध उपभोक्ता (Consumer of Research)**

शोध समस्या के चयन में शोध उपभोक्ता का तात्पर्य सम्बन्धित व्यक्तियों से है जो अध्ययन समस्या से किसी न किसी रूप से सम्बन्धित होते हैं। वास्तव में प्रत्येक समस्या किसी व्यक्ति अथवा समूह से सम्बन्धित होती है। जो व्यक्ति अनुसंधान विषय से प्रभावित होते हैं उन्हें सहभागी कहा जाता है। इस प्रकार अनुसंधान समस्या के चयन का पहला तत्व स्वयं अनुसंधानकर्ता अथवा अनुसंधान उपभोक्ता की प्रकृति है, क्योंकि इसी के सन्दर्भ में एक उपयुक्त अनुसंधान समस्या का चयन किया जाता है।

2. **उद्देश्य प्राप्ति के लिए वैकल्पिक माध्यम (Alternative to Achieve the of Objective)**

अनुसंधान उपभोक्ता को चाहिए कि उद्देश्य प्राप्ति के लिए उपलब्ध वैकल्पिक माध्यमों का ध्यान अवश्य रखे। माध्यम क्रिया की दिशा होती है।

3. **विकल्पों के चयन के प्रति संदेह (Doubt in Selection of Alternatives)**

अनुसंधान उपभोक्ता किस विकल्प का चयन करे इस सन्दर्भ में उसके मस्तिष्क में सदैव संदेह बना रहना चाहिए। क्योंकि इस प्रकार के संदेह के अभाव में समस्या उत्पन्न ही नहीं होगी। अनुसंधान उपभोक्ता को वैकल्पिक माध्यमों की तुलनात्मक क्षमता से सम्बद्ध एक ऐसा सवाल अपने मन म रखना चाहिए जिसका जवाब वह अवश्य दे सके।

4. **एक से अधिक समग्र की अनिवार्यता (Requirement of more than one Group)**

अनुसंधान समस्या का निर्धारण तब अधिक उपयुक्त होता है जब उसका अध्ययन एक से अधिक समग्र के अन्तर्गत सरलतापूर्वक किया जाये। इसका कारण यह है कि समस्या से सम्बन्धित एक समग्र की प्रकृति दूसरे की तुलना में कुछ भिन्न होने से अध्ययन समस्या में भी उसी के अनुरूप परिवर्तन किया जा सकता है।

6.5 सारांश

एक अनुसंधान समस्या के रूप में विषय का निर्धारण या सूत्रीकरण वैज्ञानिक अनुसंधान का प्रथम चरण है और अनुसंधान के निर्धारण का प्रथम सोपान समस्या को अवलोकन योग्य एवं सुस्पष्ट बनाना है।समस्या के निर्धारण के अन्तर्गत समस्या का स्पष्टीकरण करते समय उसे भली-भांति परिभाषित करना आवश्यक होता है क्योंकि जब तक हम समस्या की पहचान को स्थापित नहीं करते, समस्या के निर्धारण का कार्य व्यवस्थित रूप से नहीं हो सकता।

6.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अनुसंधान समस्या के प्रतिपादन के आधार पर प्रकाश डालिये।
2. शोध समस्या का चयन करने में किन-किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है समझाइये ?

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Einstien and A. Enfald, Quoted By Singh Surendra, Samajik Anusandhan.
- R.L.Acoff, The Design of Social Research
- P.V.Young., Quoted By Singh Surendra, Samajik Anusandhan.
- Jikmand, Quoted By Singh Surendra, Samajik Anusandhan.
- सिंह ए. एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 7

परिकल्पना

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 परिकल्पना (Hypothesis)
7.3 परिकल्पना की विशेषताएँ
7.4 परिकल्पना के स्रोत
7.5 परिकल्पना का महत्त्व
7.6 सारांश
7.7 अभ्यास प्रश्न
7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- परिकल्पना का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- परिकल्पना की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
- परिकल्पना के स्रोत के बारे में जान सकेंगे।
- परिकल्पना के महत्व को समझ सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में परिकल्पना का अर्थ, परिभाषा, विशेषता, स्रोत एवं महत्व के बारे में बताया गया है। परिकल्पना किसी भी अध्ययन को प्रारम्भ करने से पहले बनाई गई योजना है। परिकल्पना के द्वारा किसी भी विषय अथवा समस्या के बारे में पूर्वानुमान लगाया जाता है तथा अध्ययन की योजना बनाई जाती है सामाजिक अनुसंधान में परिकल्पना का विशेष महत्व है।

7.2 परिकल्पना (Hypothesis)

परिकल्पना का अर्थ

किसी भी शोध अथवा सर्वेक्षण में समस्या को चयनित कर लेने के उपरान्त शोधकर्ता समस्या के विषय में कार्य-कारण सम्बन्धों का पूर्वानुमान लगा लेता है या शोध से पूर्व चिन्तन कर लेता है। यही पूर्व चिन्तन या पूर्वानुमान परिकल्पना कहलाते हैं। किसी भी शोध प्रक्रिया में प्रमुखतः दो चरण विद्यमान रहते हैं:

(1) अवधारणात्मक आंकलन - शोध विषय के सम्बन्ध में वाह्य रूपेरखा अथवा पूर्व ज्ञान जो हमारे शोध विषय का आधार भी होती है, और

(2) परीक्षणात्मक तथ्य - वे वास्तविक सूचनायें जिन्हें वैज्ञानिक प्रविधियों से प्राप्त किया गया है।

अर्थात् किसी विषय की अवधारणा तथा उसके तथ्य ही शोध विषय के दो प्रमुख चर हैं। सिद्धान्त के क्षेत्र में पाये जाने वाले ऐसे कथन जिन्हें परीक्षण की कसौटी पर कसा जाता है, परिकल्पना के नाम से पुकारे जाते हैं।

एक परिकल्पना दो अथवा दो से अधिक चरों के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्ध का अनुभवात्मक रूप से परीक्षण करने योग्य कथन है। एक तरह से यह एक शर्त, मान्यता अथवा सिद्धान्त है जिसे शायद विश्वास के अभाव में भी स्वीकार कर लिया जाता है। इसके तार्किक परिणाम ज्ञात हो सकते हैं तथा इस विधि के द्वारा इसकी उन अन्य तथ्यों से समानता उन समस्त छुटपुट विचारों को सामने रखती है जो किसी शोध के कमोबेश आधार होते हैं।

परिकल्पना शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिलकर बना है। परि व कल्पना। 'परि' का अर्थ होता है 'चारों ओर' तथा कल्पना का अर्थ होता है 'सामान्य अनुमान'। अनुसंधानकर्ता अध्ययन कार्य आरम्भ करने से पूर्व ही विषय के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित कुछ सामान्य अनुमान अवश्य ही लगा लेता है, इस प्रकार परिकल्पना किसी भी अध्ययन को एक निश्चित दिशा देने में सहायक होती है।

परिकल्पना की परिभाषाएं

बेबस्टर न्यू इन्टरनेशनल डिक्शनरी आफ दी इंगलिश लैंगवेज के अनुसार 'एक परिकल्पना, एक विचार,दशा या सिद्धांत होती है जो कि सम्भवतः बिना किसी विश्वास के मान ली जाती है। जिससे कि उसके तार्किक परिणाम निकाले जा सकें और ज्ञात या निर्धारित किए जाने वाले तथ्यों की सहायता से इन विचारों की सत्यता की जाँच की जा सके।'' **बोगार्डस (Bogardus)** ने इसे " परीक्षण किए जाने वाले विचार के रूप में परिभाषित किया है।''

पी. बी. यंग के अनुसार, ''एक अस्थाई लेकिन केन्द्रिय महत्व का विचार जो उपयोगी अनसुसंधान का आधार बन जाता है, उसे हम एक कार्यकारी परिकल्पना कहते हैं।''

परिकल्पना या उपकल्पना वह चिन्तन है जो अनुसंधान पूर्व किया जाता है। अनुसंधान प्रारभ्भ करने से पहले अनुसंधानकर्ता के मन में उसके परिणामों के बारे में एक निश्चित अवधारणा बनती है इस अवधारणा को ही परिकल्पना कहते हैं।

कोई भी अनुसंधान पूर्व कल्पित विचारों के बिना पूर्ण नहीं हो सकता। पूर्व कल्पित विचारों के द्वारा ही अनुसंधान को दिशा मिलती है जिसके द्वारा अनुसंधानकर्ता लक्ष्य तक पहुँचता है। इन्हीं कल्पित विचारों को उपकल्पना या परिकल्पना कहते हैं। परिकल्पना एक ऐसा विचार है जिसके द्वारा हम किसी शोध के निष्कर्षों तक पहुँचते हैं।

लुण्डबर्ग (Lundberg) के अनुसार ''परिकल्पना एक प्रारम्भिक सामान्यीकरण है जिसकी सत्यता की जाँच अभी बाकी है। अपने प्रारिम्भक स्तरों पर उपकल्पना एक अनुमान, कल्पना, विचार अथवा पूर्वानुमान आदि कुछ भी हो सकती है जो बाद में किसी भी क्रिया अथवा अनुसंधान का आधार बन जाती है।''

गुडे तथा हाट **(Goode & Hatt)** के अनुसार ''उपकल्पना/परिकल्पना एक ऐसी मान्यता है जिसकी सत्यता को सिद्ध करने के लिए उसकी परीक्षा की जा सकती है।''

मैकगुईगम ''परिकल्पना दो या अधिक चर राशियों अथवा चरों के सम्बन्ध का कथन है।''

बार तथा स्टेटस के अनुसार ''परिकल्पना एक अस्थाई रूप से माना गया सत्य कथन है, जिसका आधार उस समय तक उस विषय अथवा घटना के बारे में ज्ञान है और इसे नये सत्य की खोज के लिए आधार बनाया जाता है''।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि परिकल्पना किसी विषय से सम्बन्धित प्रारम्भिक अनुमान है जिसके सन्दर्भ में सम्पूर्ण अनुसंधान किया जाता है। परिकल्पना अनुसंधान के मार्ग की दिशा बताती है, अध्ययन के बीच में शोधकर्ता को इधर-उधर भटकने नहीं देती है तथा अन्त में अध्ययन के निष्कर्ष प्रस्तुत करने तथा पूर्व निष्कर्षों की जाँच में सहायता प्रदान करती है।

7.3 परिकल्पना की विशेषताएँ

सत्यता के निकट की वे परिकल्पनायें जिनका सामान्य मानव जीवन के लिये लाभप्रद उपयोग हो सके अच्छी परिकल्पना कहलाती हैं। व्यवहार योग्य परिकल्पना अनायास मस्तिष्क में आयी परिकल्पनायें नहीं है तथा इनका वैज्ञानिक सत्यापन होता है। अच्छी परिकल्पनाओं में निम्न गुण पाये जाते हैं:

1. परिकल्पना में अन्तर्निहित विचारों का स्पष्टतया विश्लेषण होना चाहिये। इसके अतिरिक्त इन परिभाषाओं का निर्माण मनमाने ढंग से न कर सामान्य स्वीकृति के आधार पर किया जाना चाहिये ताकि ये प्रभावपूर्ण संचार के योग्य हो सकें।
2. इसका अभिप्राय यह है कि अनुसंधानकर्ता को बिना किसी पक्षपात के परिकल्पना का चयन करना चाहिये इसमें प्रयोगसिद्ध अनुभव का प्रयोग होना चाहिये। प्रयोगसिद्ध परिकल्पना का स्पष्ट एवं सीमित अर्थ होता है।
3. सामान्य परिकल्पना का वैज्ञानिक आधार पर परीक्षण कठिन है अतः परिकल्पना विशिष्ट होनी चाहिये। इससे अनुसंधान में उसकी व्यावहारिकता एवं उपयोगिता स्पष्ट हो जाती है।
4. एक अच्छी परिकल्पना का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि यह उपलब्ध प्रविधियों के अनुकूल होती है। गुडे एवं हाट ने लिखा है कि ''वह सिद्धान्तवादी जो यह नहीं जानता कि उसकी परिकल्पना की परीक्षा के लिये कौन-कौन सी पद्धतियाँ उपलब्ध हैं, प्रयोग योग्य प्रश्नों के निर्माण में अनुपयुक्त है।
5. परिकल्पनाओं की शक्तिशाली एवं उपयुक्त सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि होती है।
6. विरोधी विचारधारायें नहीं पायी जाती है।

गुडे एवं हाट के अनुसार उपकल्पना में निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिए :-

(1) स्पष्टता (Clarity)

गुडे एवं हाट के अनुसार उपकल्पना/परिकल्पना की स्पष्टता के लिए दो बिन्दुओं का होना आवश्यक है प्रथम परिकल्पनाओं में निहित अवधारणाओं का स्पष्ट होना तथा द्वितीय परिभाषाओं का सरल भाषा में होना।

(2) विशिष्टता (Specificity)

परिकल्पना विशिष्ट होनी चाहिए न कि सामान्य अर्थात् परिकल्पना सदैव अध्ययन समस्या के किसी विशिष्ट पक्ष से सम्बन्धित होनी चाहिए। इस प्रकार अनुसंधानकर्ता अपना ध्यान विषय पर केन्द्रित कर वास्तविक सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है।

(3) अनुभवसिद्धता (Empiricism)

परिकल्पना की अनुभवसिद्ध प्रमाणिकता का होना अत्यन्त आवश्यक है। परिकल्पना का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि परिकल्पना द्वारा सत्यता की परीक्षा की जा सके न कि आदर्श प्रस्तुत किया जाए। गुडे तथा हाट ने लिखा है कि ऐसी उपकल्पनाएँ आदर्शात्मक होती है; कि सभी अधिकारी भ्रष्ट होते हैं अथवा उद्योगपति श्रमिकों का शोषण करते हैं।

(4) उपलब्ध प्रविधियों से सम्बन्ध (Relation with Available Techniques)

उपकल्पना को आवश्यक एवं उपलब्ध पद्धतियों के अनुरूप होना चाहिए, जिससे उपलब्ध पद्धतियों से परीक्षण किया जा सके। गुडे एवं हॅाट ने लिखा है, ''एक सिद्धान्त बनाने वाला जो यह भी नहीं जानता कि जो प्रविधि उपलब्ध है उससे उपकल्पना की जाँच हो सकेगी कि नहीं वह उपयोगी प्रश्नों के निर्माण में असफल रहता है|"

(5) उपलब्ध सिद्धान्तों से सम्बन्धित (Related with Available Theories)

किसी भी उपकल्पना का निर्माण करने से पहले उससे सम्बन्धित साहित्य और ज्ञान को समझना आवश्यक होता है। उपकल्पना का निर्माण करने से पहले साहित्य के अध्ययन से सम्बन्धित उसे पहले सिद्धान्तों का ज्ञान होता है। इन सिद्धान्तों के आधार पर ही परिकल्पना का निर्माण करना चाहिए, जिससे उसकी सत्यता की जाँच की जा सके, क्योंकि यदि सिद्धान्त परिकल्पना से सम्बन्धित न हो तो उसकी सत्यता की जांच नहीं की जा सकती है। पूर्व सिद्धान्तों के आधार पर बनायी गयी परिकल्पना अधिक क्रमबद्ध होती है। इस सम्बन्ध में गुडे और हाट का मत है जब अनुसंधान व्यवस्थित रूप से पूर्व बनाये गये सिद्धान्तों पर आधारित होता है तो ज्ञान में सत्यता की संभावना अधिक हो जाती है।

(6) प्रमाणीकरण (Authentification)

परिकल्पना का उद्देश्य सही निष्कर्ष निकालना होता है सही निष्कर्ष तभी प्राप्त होगा जब हम परिकल्पना का परीक्षण, निरीक्षण, कर सकें। इन्हीं परीक्षण के द्वारा ही परिकल्पना को प्रमाणित किया जाता है।

परिकल्पनाओं के विवरण के आधार पर निष्कर्ष :

1. परिकल्पना सफल अनुसंधान की एक आवश्यक शर्त है।
2. एक अच्छे अनुसंधान में परिकल्पना का निर्माण केन्द्रीय कदम है।
3. यह निश्चित लक्ष्य की ओर निर्देशित करती है।
4. यह अनुसंधान का प्रारम्भिक स्तर है।
5. परिकल्पनाओं का निर्माण हम अध्ययन की आवश्यकतानुसार भाववाचकता के विभिन्न स्तरों पर कर सकते हैं।

7.4 परिकल्पनाओं के स्रोत

परिकल्पनाओं के दो स्रोत होते हैं:

(1) वैयक्तिक स्रोत (Personal or individual Sources)

(2) वाह्य स्रोत (External Sources)

(1) वैयक्तिक स्रोत

वैयक्तिक स्रोत में अनुसंधानकर्ता की प्रतिभा और ज्ञान का समावेश होता है। प्रतिभा और ज्ञान के द्वारा किसी भी विषय के सन्दर्भ में अनुसंधानकर्ता कल्पना करता है, जिससे अक्सर दूरदर्शिता, विचारों की मौलिकता तथा अनुभवों के आधार पर परिकल्पना का निर्माण होता है। इतिहास को देखें तो हमें अनेक उदाहरण मिल जायेगें जब संसार में अनेक ऋषियों वैज्ञानिकों ने केवल वैयक्तिक अनुभवों से अनेक सिद्धान्तों, नियमों का निर्माण किया।

(2) बाह्य स्रोत

बाह्य स्रोत के अन्तर्गत सिद्धान्त, विचार, ऐतिहासिक पुस्तकें, सुनी हुई बातें, नाटक प्रतिवेदन आदि होते हैं। तात्पर्य यह है कि जब अनुसंधानकर्ता किसी सिद्धान्त् किसी व्यक्ति के विचार तथा सुनी हुई बातों के आधार पर परिकल्पना का निर्माण करता है तो वह वाह्य स्रोतों के द्वारा प्राप्त होती है।

गुडे तथा हाट के अनुसार परिकल्पना के निम्न स्रोत हैं:

(i) सामान्य संस्कृति (Comman Culture)

(ii) समरुपता (Analogies)

(iii) वैज्ञानिक सिद्धान्त (Scientific Theories)

(iv) व्यक्तिगत अनुभव (Personal Experiences)

(v) सूझ (Insight)

(vi) रचनात्मक दृष्टिकोण (Creative Attitude)

(vii) उपकल्पनाओं की व्याख्याएं (Analysis of Available Hypothesis)

(viii) उस क्षेत्र में हुए अनुसंधान(Research in Related Field)

लुण्डवर्ग के अनुसार उपकल्पना के स्रोत

(i) साहित्य

(ii) दर्शन

(iii) समाजशास्त्र के विस्तृत वर्णानात्मक साहित्य

(iv) मानव-जाति शास्त्र

(v) कलाकारों के काल्पनिक सिद्धान्त

7.5 परिकल्पना का महत्व

सामाजिक शोध, सर्वेक्षण एवं वैज्ञानिक अध्ययन में परिकल्पना का महत्व अधिक होता है। यह वैज्ञानिक पद्धति द्वारा किये गये शोध को नियन्त्रित, निर्देशित एवं संचालित करती है। परिकल्पना के अभाव में अध्ययन कार्य किया जाता है तो अध्ययनकर्ता घटनाओं की दुनिया में इस प्रकार भटकता है जिस प्रकार एक गांव के किसान को, जिसने महानगर का दर्शन नहीं किया है और वह ज्ञान के अभाव में इधर-उधर मंजिल की तलाश में भटकता रहता है। इस प्रकार यह पता चलता है कि परिकल्पना शोधकर्ता के लिए मार्गदर्शक का कार्य करती है और उसके उद्देश्यों को प्राप्त करने में शोधकर्ता का मार्ग प्रशस्त करती है।

परिकल्पना के महत्व को स्वीकार करते हुए **गुडे एवं हाट** ने 'Methods in Social Research" में लिखा है, ''अच्छे अनुसंधान में परिकल्पना का निर्माण करना सर्वप्रमुख चरण है।'' इसी कड़ी में **कोहेन** ने परिकल्पना के महत्व को स्पष्ट करते हुए, 'A preface to Logic' में लिखा है, ''पथ प्रदर्शन करने वाले किसी न किसी विचार के बिना हम यह नहीं जानते हैं कि किन तथ्यों का संग्रह करना है। सिद्ध करने के लिए तथ्य के बिना हम यह निश्चित नहीं कर सकते हैं कि क्या संगत और क्या असंगत है।'' परिकल्पना के महत्व पर प्रकाश डालते हुए **जहोदा एवं कुक** ने 'Research Methods in Social Relations' में लिखा है, ''परिकल्पनाओं का निर्माण तथा सत्यापन करना ही वैज्ञानिक अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य होता है।

अन्य महत्व निम्नलिखित हैं:

1. समस्या की व्याख्या में सहायक
2. अध्ययन को दिशा प्रदान करने में सहायक
3. अध्ययन क्षेत्र की सीमितता एवं चयन में सहायक
4. शोधकर्ता के लिए मार्गदर्शक
5. प्रासंगिक तथा उपयोगी तथ्य संकलन में सहायक
6. तर्क संगत निष्कर्षों में सहायक
7. सिद्धान्त निर्माण में सहायक

7.6 सारांश

इस इकाई में परिकल्पना के सारगर्भित तथ्य के बारे में बताया गया है | परिकल्पना किसी भी अध्ययन के लिये अनिवार्य आवश्यकता है परिकल्पना के बिना सामाजिक शोध विषयों की रूपरेखा तैयार नहीं की जा सकती है। परिकल्पना के द्वारा किसी भी विषय की कार्य योजना तैयार हो जाती है।

7.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. परिकल्पना की परिभाषा दीजिए तथा इसके स्रोतों की व्याख्या कीजिए|
2. परिकल्पना क्या है परिकल्पना की विशेषताओ एवं महत्व को समझाइये|

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- R.L.Acoff, The Design of Social Research.

- P.V.Young., Quoted By Singh Surendra, Samajik Anusandhan.
- Bogardus, Socialogy, Hypothesis is a preposition to be tested..
- F.J.Mcgoeigan, Experimental Psychology.
- Sanford Laivovize and Robert Hazadarn, Introduction to Social Research.
- R. L. Acoff, The Design of Social Research, Quoted By Singh Surendra.
- Hsin P.Yang, Fact finding with rural people,quoted by Sharma and Gupta, Social Research.
- Singh, Surendra, Social Research Vol. I
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 8

अनुसंधान प्रचना

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य
8.1 प्रस्तावना
8.2 अनुसंधान प्रचना (Research Design)
8.3 अनुसंधान प्रचना की विशेषताएँ
8.4 अनुसंधान प्रचना के चरण
8.5 अनुसंधान प्रचना के प्रकार
8.6 सारांश
8.7 अभ्यास प्रश्न
8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- अनुसंधान प्रचना का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- अनुसंधान प्रचना की विशेषताओं के बारे में जान सकेंगे।
- अनुसंधान प्रचना की विषय वस्तु के बारे में जान सकेंगे।
- अनुसंधान प्रचना के चरण एवं प्रकार के बारे में जान सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में अनुसंधान प्रचना का अर्थ, परिभाषा, विशेषता, विषय-वस्तु, चरण एवं प्रकार के बारे में बताया गया है। सामाजिक अनुसंधान के विषयों में शोध प्रचना की महती भूमिका है। शोध प्रचना की आवश्यकता शोध को वैज्ञानिक बनाने के लिये पडती है।

8.2 अनुसंधान प्रचना

अनुसंधान प्रचना का अर्थ

अनुसन्धान के कुछ निश्चित उद्देश्य होते हैं और उन उद्देश्यों की प्राप्ति तब तक नहीं हो सकती जब तक कि योजनाबद्ध रूप में अनुसन्धान-कार्य का आरम्भ नहीं किया गया हो। इसी योजना की रूपरेखा को अनुसन्धान-प्रचना कहते हैं।

उद्देश्य प्राप्ति से पूर्व लिया गया निर्णय शोध प्रचना कहलाता है। प्रचना या अभिकल्प शब्द का अर्थ है नियोजन करना या रूपरेखा बनाना या विवरण को व्यवस्थित करना। यह परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें निर्णय को क्रियान्वित किया जाना शेष होता है। अनुसन्धान प्रचना, अनुसन्धान संचालन की तैयारी की रणनीति बनाती है। अनुसन्धान प्रचना अनुसन्धान

क्रिया की सीमाओं को निर्देशित करती है और सम्भावित समस्याओं का पूर्वानुमान लगाकर अन्वेषण को आसान बनाती है।

अनुसन्धान को क्रमबद्ध एवं प्रभावपूर्ण ढंग से कम प्रयासों, कम समय एवं कम लागत के साथ संचालित करना तभी सम्भव है जब हम अनुसन्धान प्ररचनाओं का सही निर्माण करते हैं।

अनुसन्धान प्ररचना की परिभाषाएँ

अनुसंधान प्ररचना को निम्नलिखित परिभाषाओं के माध्यम से समझा जा सकता है:-

आर. एल. ऐकाफ के अनुसार अनुसंधान प्ररचना का अर्थ, ''प्ररचित करना नियोजित करना है, अर्थात् प्ररचना उस परिस्थिति के उत्पन्न होने से पूर्व निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें निर्णय को लागू किया जाना है। यह एक आशान्वित परिस्थिति को नियंत्रण में लाने की ओर निर्देशित जानबूझकर की गई आशा की प्रक्रिया है।''

एफ. एन. कालिंजर के अनुसार, ''अनुसंधान प्ररचना अन्वेषण की योजना, संरचना एवं एक रणनीति है जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सकें तथा विविधताओं को नियन्त्रित किया जा सके। यह प्ररचना या योजना अनुसंधान की सम्पूर्ण रूपरेखा अथवा कार्यक्रम है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक वस्तु की रूपरेखा सम्मिलित होती है जो अनुसंधानकर्ता उपकल्पनाओं के निर्माण एवं उनके परिचालनात्मक अभिप्रायों से लेकर आँकड़ों का अन्तिम विश्लेषण करता है''।

ए. जे. कान्ह के अनुसार, ''अनुसंधान प्ररचना की सर्वोत्तम परिभाषा अध्ययन की तार्किक युक्ति के रूप में की जाती है। यह एक प्रश्न का उत्तर देने, परिस्थिति का वर्णन करने, अथवा एक परिकल्पना का परीक्षण करने से सम्बन्धित है अर्थात्, यह उस तर्कयुक्तता से सम्बन्धित है जिसके द्वारा कार्य विधियों, जिनमें आँकड़ों का संग्रह एवं विश्लेषण दोनों सम्मिलित हैं के विशिष्ट समूह से एक अध्ययन की विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति की आशा की जाती है''।

पी. वी यंग, ''एक अनुसंधान प्रारूप अनुसंधान का तार्किक तथा व्यवस्थित आयोजन एवं निर्देशन है''।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अनुसंधान प्ररचना या अनुसंधान प्रारूप कार्य आरम्भ करने से पहले निर्मित एक ऐसी व्यवस्थित रूपरेखा है जो कि विशेष उद्देश्यों के सन्दर्भ में अध्ययन विषय के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करती है। अनुसंधान प्ररचना का निर्माण करते समय अनुसंधानकर्ता केवल इसी तथ्य को ध्यान में नहीं रखता है कि उसके अध्ययन की प्रकृति वर्णनात्मक है अथवा अन्वेषणात्मक, बल्कि उसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि एक निर्धारित समय एवं सीमित साधनों के अन्तर्गत वह किन पद्धतियों का उपयोग करके अधिक से अधिक वस्तुनिष्ठ निष्कर्ष प्राप्त कर सके। सामाजिक घटनाओं के अध्ययन में अनुसंधान प्ररचना इसलिए अधिक महत्वपूर्ण है कि सामाजिक जीवन की असीम व्यापकता में से उपयोगी, तार्किक, तथा तर्क संगत तथ्य तब तक प्राप्त नहीं किये जा सकते जब तक अनुसंधानकर्ताएक निर्धारित क्षेत्र से आबद्ध रहते हुए कार्य न करे।

8.3 अनुसंधान प्ररचना की विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन एवं अवलोकन से अनुसंधान प्ररचना की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं:-

1. अनुसंधान प्ररचना का सम्बन्ध सामाजिक अनुसंधान से होता है।

2. यह अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान की एक निश्चित दिशा का बोध कराती है। इस अर्थ में अनुसंधान प्रचनाएँ एक प्रकार की दिग्दर्शक हैं।
3. इसकी मुख्य विशेषता सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति को सरल रूप में प्रस्तुत करना हैं।
4. यह अनुसंधान के दौरान आने वाली कठिनाइयों को कम करने में अनुसंधानकर्ता की सहायता करती है।
5. अनुसंधान प्ररचना मानवीय श्रम को कम करने के साथ-साथ लागत में भी कमी करके अधिकतम उद्देश्य प्राप्त करने में सहायता करती है।
6. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधान की वह रूपरेखा है जिसकी रचना अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व की जाती है।
7. अनुसंधान प्ररचना समस्या की प्रतिस्थापना से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अन्तिम चरण तक के सभी विषय से सम्बन्धित उपलब्ध विकल्पों के बारे में व्यवस्थित रूप से श्रेष्ठ निर्णय लेने में सहायता करती है।

अनुसंधान प्ररचना की विषय-वस्तु

अनुसंधान प्ररचना में निम्नलिखित विषयों का उल्लेख किया जाता है:

1. शोध विषय की प्रकृति: व्यक्तिगत, दो या अधिक व्यक्तियों के समूह, उपसमूह, समाज या समुदाय।
2. घटनाओं की संख्याः अनुसंधान प्ररचना एक, कुछ चयनित घटनाएं, या कई चुनी हुई घटनाएं हैं।
3. सामाजिक भौतिक परिवेश: किसी एक समय में एक ही समाज से सम्बद्ध मामले या कई समाजों के मामले।
4. समय का तत्व: एक ही समय में किया जाने वाला (स्थैतिक अध्ययन) एक प्रक्रिया या लम्बे समय में घटित परिवर्तन वाला गत्यात्मक अध्ययन।
5. अध्ययन के अन्तर्गत व्यवस्था के ऊपर के शोधक के नियन्त्रण की सीमा, व्यवस्थित या अव्यवस्थित नियन्त्रण।
6. आधार-सामग्री के मूल स्रोत: प्रस्तुत उद्देश्य के लिए शोधकर्ता द्वारा नई आधार-सामग्री का संकलन।
7. आधार सामग्री को एकत्र करने की पद्धतिः अवलोकन, साक्षात्कार या दोनों मिश्रित या अन्य कोई।
8. शोध में प्रयुक्त चरों या गुणों की संख्या: एक, कुछ या कई।
9. गुण का विश्लेषण करने की पद्धति: अव्यवस्थित वर्णन, चरों का मापन।
10. विभिन्न गुणों या चरों के मध्य सम्बन्धों के विश्लेषण की पद्धति।

8.4 अनुसन्धान प्ररचना के चरण निर्धारण की पूर्व आवश्यकताएं

अनुसन्धान प्ररचना के प्रमुख चरण निम्नाँकित हैं:

1. अनुसन्धान समस्या का स्पष्ट एवं विस्तृत ज्ञान अनुसन्धानकर्ता को होना चाहिए।

2. अनुसन्धानकर्ता को अध्ययन से सम्बन्धित विशिष्ट उद्देश्यों की भी स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए।
3. अनुसन्धानकर्ता को उन प्रविधियों एवं कार्यविधियों की भी स्पष्ट एवं विस्तृत जानकारी होनी चाहिए जिनका प्रयोग करते हुए अनुसन्धान के लिए आवश्यक आँकड़ों के संग्रह के मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया जाएगा।
4. अध्ययन क्षेत्र का चयन करना |
5. आँकड़ों के संग्रह के लिए विस्तृत एवं सुनियोजित योजना का उपलब्ध होना भी अत्यावश्यक है।
6. आँकड़ों के विश्लेषण के लिए भी उपयुक्त योजना का प्राप्त होना आवश्यक है।

अनुसन्धान प्रचना के प्रमुख चरण निम्नाँकित हैं:

1. समस्या का प्रतिपादन एवं सम्बंधित साहित्यकी समीक्षा|
2. अनुसन्धान के विभिन्न क्षेत्रों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करना|
3. वर्तमान में हमें जो अनुसन्धान कार्य करना है उसकी सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना।
4. अवलोकन के लिए उपयुक्त चरों का चयन करना तथा उन्हें परिभाषित करना|
5. उपयुक्त विधियों एवं प्रविधियों का चयन|
6. अध्ययन से सम्बंधित मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं का निर्माण|
7. परिचालानात्मक परिभाषाओं (operational definitions) का निर्माण करना
8. उपयुक्त उपकरणों का निर्माण एवं पूर्व परीक्षण(Pre-testing) एवं पूर्वगामी अध्ययन (Pilot Study) I
9. अध्ययनकर्ताओं एवं अन्वेषणकर्ताओं का प्रशिक्षण |
10. तथ्य संकलन, समंकों का संपादन, संकेतन एवं वर्गीकरण|
11. समंकों का प्रस्तुतीकरण एवं निर्वचन|
12. अनुसन्धान प्रतिवेदन तैयार करना (Research Reports) I

8.5 अनुसन्धान प्रचना के प्रकार

अनुसन्धान प्रचना निम्नलिखित चार प्रकार की होती हैं:-

1. अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक अनुसन्धान प्रचना (Exploratory Research Design)

खोजपरक ढंग विज्ञान की प्रारम्भिक अवस्था का प्रतिनिधित्व करता है। इस तरह की प्रचना का निर्माण तब किया जाता है जबकि प्रघटना के बारे में अपेक्षाकृत कम जानकारी होती है। जब किसी शोध-कार्य का उद्देश्य किन्हीं सामाजिक घटना में अन्तर्निहित कारणों को खोज निकालना होता है तो उससे सम्बद्ध रूपरेखा को अन्वेषणात्मक अनुसन्धान प्रचना कहते हैं। इस प्रकार अनुसन्धान प्रचना द्वारा कार्य की रूपरेखा इस ढंग से प्रस्तुत की जाती है कि घटना की प्रकृति एवं धारा-प्रवाहों की वास्तविकताओं की खोज की जा सके। समस्या या विषय के चुनाव के पश्चात् परिकल्पना का सफलतापूर्वक निर्माण करने के लिए इस प्रकार की प्रचना का बहुत महत्व है क्योंकि इसकी सहायता से हमारे लिये विषय का कार्य-कारण सम्बध स्पष्ट हो जाता है। उदाहरणार्थ हमें किसी सामाजिक परिस्थिति में तलाक-प्राप्त व्यक्तियों में व्याप्त यौन-व्यभिचार के विषय में अध्ययन करना है

तो उसके लिए पहले उन कारकों का ज्ञान आवश्यक है जो कि इस प्रकार के व्यभिचार को उत्पन्न करते हैं अन्वेषणात्मक अनुसन्धान-प्रचरना इन्हीं कारकों के खोज निकालने की एक योजना बन सकती है।

2. वर्णनात्मक अनुसन्धान प्रचरना (Descriptive Research Design)

वर्णनात्मक शोध प्रारूप का उद्देश्य किसी घटना, स्थिति, अवसर, व्यक्ति, समूह अथवा समुदाय का वर्णन करना होता है। विषय या समस्या के सम्बन्ध में वास्तविक तथ्यों के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना वर्णनात्मक शोध-प्रचरना का मुख्य उद्देश्य है। इसके लिए यह आवश्यक होता है कि विषय के सम्बन्ध में हमें यथार्थ तथा पूर्ण सूचनाएं प्राप्त हो जांए, क्योंकि इनके बिना अध्ययन-विषय या समस्या के सम्बन्ध में हम जो कुछ भी वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करेंगे वह वैज्ञानिक न होकर केवल दार्शनिक ही होगा, वैज्ञानिक वर्णन का आधार वास्तविक तथ्य ही हैं। अतः हमें यदि किसी समुदाय की जातीय संरचना, शिक्षा का स्तर, आवास, आयु-समूह, परिवार के प्रकार आदि का विवरण प्रस्तुत करना है तब हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इनसे सम्बद्ध वास्तविक तथ्यों को किसी एक या एकाधिक वैज्ञानिक प्रविधि के द्वारा एकत्रित करें। मूल रूप से यह तथ्य का पता लगाने वाला प्रयोग है।

इस प्रकार की शोध-प्रचरना में तथ्यों का संकलन किसी भी वैज्ञानिक विधि के द्वारा किया जा सकता है। प्रायः साक्षात्कार अनुसूची एवं प्रश्नावली, प्रत्यक्ष निरीक्षण, सहभागी-निरीक्षण, सामुदायिक रिकार्ड का विश्लेषण आदि विधि को वर्णनात्मक शोध प्रचरना में सम्मिलित किया जाता है।

3. निदानात्मक अनुसन्धान-प्रचरना (Causal Research)

शोध कार्य का मूलभूत उद्देश्य ज्ञान की प्राप्ति तथा ज्ञान की वृद्धि है। परन्तु यह भी हो सकता है कि शोध कार्य का उद्देश्य किसी समस्या के कारणों के सम्बन्ध में वास्तविक ज्ञान प्राप्त करके उस समस्या के समाधानों को भी प्रस्तुत करना हो। इसी प्रकार की शोध प्रचरना को निदानात्मक शोध प्रचरना कहते हैं। अर्थात् विशिष्ट सामाजिक समस्या के निदान की खोज करने वाले शोधकार्य को निदानात्मक शोध कहते हैं। इस सम्बन्ध में यह स्पष्ट रूप से स्मरणीय है कि समस्या को हल करना समाज सुधारक, प्रशासक तथा नेताओं का काम होता है, शोधकर्ता केवल वैज्ञानिक पद्धतियों के द्वारा समस्या के कारणों को जान लेने के बाद उसका उचित समाधान किस ढंग से सर्वोत्तम रूप में हो सकता है इस बात की खोज करता है। इस प्रकार की प्रचरना खोज करने एवं परीक्षण करने से सम्बन्धित होती है तथा इसमें चरों के मध्य सम्बन्ध जानने का प्रयास किया जाता है। निदानात्मक अध्ययन का उद्देश्य घटित होने वाली घटना की बारम्बारता अथवा उन तरीकों का पता लगाना हो सकता है जिसमें प्रघटना कुछ अन्य कारकों से जुड़ी होती है।

4. परीक्षणात्मक अनुसन्धान प्रचरना (Experimental Research Design)

यह सूचनाओं को एकत्रित करने का एक तरीका होता है जो शीघ्र कार्यकर्ता को शोध की समस्या से सम्बन्धित बनायी गयी परिकल्पना का चरित्र जाँच करने में सहायता देता है। कोई भी शोध-कार्य तभी परीक्षणात्मक शोध प्रचरना कहलायेगा जब इस शोध कार्य में विशेष प्रकार के मॉडल का प्रयोग किया जाये। प्रयोगात्मक अध्ययन में शोधकर्ता घटनाओं के प्राकृतिक कारणों में हस्तक्षेप करके प्रयोग की परिस्थिति पैदा करता है। कुछ परिस्थितियों में प्राकृतिक प्रयोग भी किया जा सकता है, यह

परिस्थिति चाहे निर्मित की गयी हों या प्राकृतिक हों शोधकर्ता केवल अपनी परिकल्पना का परीक्षण करता है। अध्ययन परिस्थितियों से सम्बद्ध परिस्थिति अधिक लाभकारी सिद्ध होती है जिसमें कार्यकर्ता अपनी परिकल्पना का परीक्षण करते हुए, यह जानने का प्रयास करता है कि क्या एक कारक दूसरे कारक की अनुपस्थिति के बिना सामने आता है या नहीं, या एक कारक में परिवर्तन दूसरे कारक में उसी प्रकार के परिवर्तन लाते हैं या नहीं। यदि शोधकर्ता यह पाता है कि दोनों कारक एक साथ प्रस्तुत नहीं हो रहे हैं या उनमें परिवर्तन इस प्रकार नहीं हो रहे हैं जैसे होने चाहिये। शोधकर्ता इस नतीजे पर पहुँचता है उसकी परिकल्पना गलत है इसके विपरीत यदि यह दोनों कारक साथ-साथ प्रस्तुत होते हैं या उनमें परिवर्तन होता है तो शोधकर्ता अपनी परिकल्पना को सही मान लेता है।

परीक्षणात्मक शोध तीन प्रकार के होते हैं:

(क) केवल पश्चात् परीक्षण (Experimental Research on controlled group and experimental group)

केवल पश्चात् परीक्षण वह विधि है जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम लगभग समान विशेषताओं वाले दो समूहों का चयन कर लिया जाता है। इसमें से किसी एक को नियन्त्रित समूह (controlled group) तथा दूसरे को प्रयोगात्मक समूह (experimental group) कहा जाता है। इसके पश्चात् प्रयोगात्मक समूह में किसी एक कारक (factor) अथवा नयी परिस्थिति (situation) द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है जबकि नियन्त्रित समूह को उस परिस्थिति से दूर रखा जाता है। तीसरे स्तर पर इन दोनों समूहों में परिवर्तन की माप की जाती है। यदि दोनों समूहों में परिवर्तन बहुत कुछ समान होता है तो यह मान लिया जाता है कि प्रयोगात्मक समूह पर नई दशाओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। इसके विपरीत ,यदि प्रयोगात्मक समूह में नियन्त्रित समूह की अपेक्षा परिवर्तन अधिक होता है तो इसे नई दशाओं के प्रभाव का परिणाम माना जाता है। प्रयोगात्मक अनुसंधान की यह मान्यता है कि यदि अनुसंधानकर्ता नियोजित ढंग से किसी एक चर या कारक द्वारा प्रयोगात्मक समूह में परिवर्तन लाना चाहेगा तो प्रयोगात्मक समूह में नियन्त्रित समूह की तुलना में निश्चय ही कुछ अधिक परिवर्तन होगा। इस अनुसंधान प्रारूप का प्रयोग **चैपिन (Chaplin), स्टाऊफर (Slouffer)** तथा **लेजार्सफील्ड (Lazarfield)** ने जिस प्रकार इस प्रारूप को प्रयुक्त किया है, उसे निम्न प्रकार समझा जा सकता हैः

		प्रयोग से पूर्व	**प्रयोग के पश्चात्**	**समूह में वास्तविक परिवर्तन**
अ.	(X) प्रयोगात्मक समूह	X1	X2	X2-X1=Z1
ब.	(Y) नियन्त्रित समूह	Y1	Y2 (बिना प्रयोग के)	Y2-Y1=Z2

प्रयोगात्मक परीक्षण के पश्चात् वास्तविक परिवर्तन = Z2 – Z1

इस प्रकार वास्तविक परिवर्तन उस परीक्षणात्मक उपचार का प्रभाव है। उपर्युक्त चित्र से (अ) और (ब) लगभग समान विशेषताओं वाले दो सामाजिक समूह हैं। समूह (अ) में प्रयोगात्मक विधि द्वारा परिवर्तन लाने का कार्य किया जा रहा है इसलिए इसे हम प्रयोगात्मक समूह कहेंगे। समूह (ब) नियन्त्रित समूह है क्योंकि इसमें परिवर्तन लाने का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। अब हम यह मान ले कि समूह (अ) और (ब) दो अलग-अलग गाँव हैं जहाँ ग्रामीणों में पंचायती राज के प्रति उनके ज्ञान और अभिवृत्तियों का अध्ययन किया जाना है। इस स्थिति में सर्वप्रथम पंचायती राज के

प्रति ग्रामीणों के ज्ञान और अभिवृत्तिं का माप करने वाली अनुसूची का निर्माण करके दोनों ग्रामों में समान स्तर के ग्रामीण उत्तरदाताओं (सूचनादाताओं) से तथ्यों का संकलन किया जाएगा। इसे हम, प्रयोगात्मक और नियन्त्रित गाँवों में किया गया 'पूर्व अध्ययन' कहेंगें। पूर्व अध्ययन के आधार पर दोनों गाँवों से प्राप्त तथ्य (क्रमशः Z1 एवं Z2) लगभग समान होंगे। इसके पश्चात् प्रयोगात्मक समूह (अ) में पंचायती राज से सम्बन्धित विभिन्न कार्यक्रमों का सम्प्रेषण और प्रसार किया जाएगा जबकि नियन्त्रित समूह (ब) में किसी भी ऐसे कार्यक्रम का सम्प्रेषण नहीं किया जाएगा। कुछ समय बाद पूर्व निर्मित अनुसूची द्वारा प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूह में पंचायती राज के प्रति ग्रामीणों के ज्ञान एवं अभिवृत्तियों का पुनःमापन किया जायेगा। यह स्थिति Y1 तथा Y2 होगी। इसके बाद प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित समूहों में पूर्व तथा पश्चात् के अन्तर को देखा जाएगा। उपरोक्त चित्र में (अ) समूह में यह अन्तर Z1 के रूप में प्रदर्शित है जबकि नियन्त्रित समूह में उत्पन्न परिवर्तन Z2 है। इससे स्पष्ट होता है कि प्रयोगात्मक समूह में परिवर्तन की स्थिति Z1 है जबकि नियन्त्रित समूह में परिवर्तन केवल Z2 है। अन्त में, नियन्त्रित समूह (ब) में होने वाला परिवर्तन Z2 व प्रयोगात्मक समूह (अ) में हुए परिवर्तन Z1 में से घटाने के बाद जो शेष रहेगा, वही प्रयोगात्मक विधि द्वारा उत्पन्न वास्तविक परिवर्तन होगा। इसको और स्पष्ट रूप से समझने के लिए निम्नलिखित विवरण अति महत्वपूर्ण है:

अ. प्रयोगात्मक एवं नियन्त्रित समूहों का चुनाव प्रयोगात्मक चर का समावेश करने के पूर्व ही किया जाता है।

ब. प्रयोगात्मक चर का समावेश प्रयोग के उद्देश्य के लिये उपयुक्त किसी विशेष समय पर किसी विशिष्ट ढंग का प्रयोग करते हुये कराया जाता है।

स. दोनों समूहों का पर्यवेक्षण किया जाता है किन्तु प्रयोगात्मक समूह के अन्तर्गत प्रयोगात्मक चर का समावेश करने के पश्चात् ही परिमापन किया जाता है।

केवल पश्चात् प्रयोग

शर्तें	**प्रयोगात्मक समूह**	**नियन्त्रित समूह**
समूहों का पहले किया गया चुनाव	हाँ	हाँ
पूर्व परिमापन	नहीं	नहीं
प्रयोगात्मक चरों से प्रभावित कराया जाना	हाँ	नहीं
अनियन्त्रित घटनाओं से प्रभावित कराया जाना	हाँ	हाँ
बाद में परिमापन	हाँ	हाँ

समाजशास्त्र में पश्चात्-परीक्षण की लोकप्रियता दिन-प्रति-दिन बढ़ती जा रही है। अमेरिका में वैज्ञानिक **वैसनेन (Waisanen)** एवं **रोजर्स (Rosers)** ने इस विधि के आधार पर महत्वपूर्ण अध्ययन किये हैं। भारत में भी इन्हीं विद्वानों से प्रेरणा लेकर के. पी. पोथन, ईश्वरसिंह चैहान तथा **प्रदीप्तो राय (Pradeepto Roy)** ने भारतीय ग्रामीण समाज में विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों के

प्रभाव का अध्ययन करने के लिए इसी विधि का प्रयोग किया। इस विधि की भी अपनी कुछ सीमाएँ हैं।

(अ) प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति सामाजिक अनुसंधान के लिए प्रत्येक दृष्टि से समान विशेषताओं वाले दो समूहों का मिलना अत्यधिक कठिन है जो इस विधि की प्रथम आवश्यकता है।

(ब) वर्तमान युग में नियन्त्रित कहे जाने वाले किसी भी समूह को पूर्णतया नियन्त्रित नहीं किया जा सकता क्योंकि बाहरी दुनिया से बढ़ता हुआ सम्पर्क तथा सम्प्रेषण के विभिन्न माध्यम उसमें कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य उत्पन्न करते हैं।

(स) प्रयोगात्मक समूह में जब किसी एक कारक के द्वारा परिवर्तन लाया जाता है तो कुछ दूसरे कारक भी उस समूह को अपने आप प्रभावित करने लगते हैं। ऐसी स्थिति में यह जानना बहुत कठिन हो जाता है कि प्रयोगात्मक समूह में उत्पन्न होने वाला परिवर्तन वास्तव में किस कारक से किस सीमा तक प्रभावित है।

इसके अन्तर्गत सभी दृष्टि से समान विशेषताओं एवं प्रकृति वाले दो समूहों को चुन लिया जाता है जिनमें से एक नियन्त्रित समूह और दूसरा परीक्षणात्मक समूह कहलाता है। परीक्षणात्मक समूह में किसी एक कारक के द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयत्न किया जाता है परन्तु नियंत्रित समूह अपरिवर्तित रखा जाता है।

(ख) पूर्व-पश्चात् परीक्षण (Before-After Experiment)

पश्चात् परीक्षण से सम्बन्धित सीमाओं तथा कठिनाइयों का समाधान करने के लिए प्रयोगात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत पूर्व पश्चात् परीक्षण विधि को विकसित किया गया। इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधान के लिए केवल ऐसे ही समूह का चयन किया जाता है अथवा यह कहा जा सकता है कि किन्हीं ऐसे दो समूहों का चयन नहीं किया जाता जिनमें से एक को अध्ययन के लिए नियन्त्रित रखने की आवश्यकता हो। ऐसे अनुसंधान के लिए चयनित समूह का **दो विभिन्न अवधियों** में अध्ययन करके पूर्व और पश्चात् के अन्तर को देखा जाता है। यही अन्तर परीक्षण अथवा उपचार का परिणाम मान लिया जाता है। उदाहरण के लिए, किसी गाँव में ग्रामीणों को दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से दिखाए जा रहे कार्यक्रमों के प्रभाव का अध्ययन करना है तो सर्वप्रथम हम किसी समूह अथवा गांव में एक अनुसूची के माध्यम से यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि वर्तमान दूरदर्शन के कार्यक्रम वहाँ के ग्रामीणों को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं। ऐसी जानकारी परीक्षण या उपचार के पूर्व (Pre-treament) की जानकारी होगी। इसके पश्चात् हम एक निश्चित समय तक नियमित रूप से ग्रामीणों को दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से प्रसारित कार्यक्रम दिखाएंगे। निश्चित समय समाप्त हो जाने पर पूर्व निर्मित अनुसूची द्वारा पुनः यह देखा जाएगा कि दूरदर्शन के कार्यक्रमों ने ग्रामीणों को किस सीमा तक प्रभावित किया, यह परीक्षण या उपचार के पश्चात् (Post-treatment) की जानकारी होगी। पूर्व और पश्चात् की जानकारी के बीच जो अन्तर प्राप्त होगा उसी को परीक्षण का परिणाम माना जाएगा। इस परीक्षण को वैज्ञानिक **जी.जी. हर्ष** ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है:

प्रथम स्तर	प्रथम स्तर	तृतीय स्तर
पूर्व की माप	उपचार-काल	पश्चात् की माप
A1		A2

प्रयोग का परिणाम = A2 – A1

उपरोक्त विवरण में प्रथम स्तर पर ग्रामीणों में दूरदर्शन से वर्तमान में प्रसारित कार्यक्रमों के ज्ञान का पूर्व-मापन किया है जो A1 के रूप में प्रदर्शित है। द्वितीय स्तर पर एक निश्चित समय तक दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों से प्रसारित कार्यक्रमों को दिखाया गया, जिसे हम उपचार-काल कहते हैं। तृतीय स्तर पर उपचार अथवा परीक्षण के पश्चात् ग्रामीण विशेषताओं का पुनः मापन (A2) किया गया। यदि हम तृतीय स्तर पर किये गये मापन द्वारा प्राप्त विशेषताओं अथवा प्राप्तांकों में से प्रथम स्तर की विशेषताओं अथवा प्राप्तांकों को घटा दें तो जो कुछ शेष रहेगा उसी के परीक्षण के पश्चात् दृष्टिगत होने वाले वास्तविक परिवर्तन को समझा जा सकता है।

इसके अन्तर्गत निम्नलिखित प्रयोग सम्मिलित हैं:--

अ) अकेले समूह का पहले-बाद में अध्ययन

इस प्रकार के प्रयोग के अन्तर्गत प्रायः उन्हीं व्यक्तियों को प्रयोगात्मक तथा नियन्त्रित दोनों समूहों के रूप में स्वीकार किया जाता है। समूह का पर्यवेक्षण प्रयोगात्मक चर से इसे प्रभावित कराने के पूर्व ही किया जाता है।तत्पश्चात् प्रयोगात्मक चर का समावेश कराया जाता है और समूह का पुनः पर्यवेक्षण किया जाता है।

ब) अन्तर्परिवर्तनीय समूहों के साथ पहले बाद में अध्ययन

पहले बाद में प्रयोग अनुकरणात्मक होता है। ऐसी प्ररचना में दो समान ठहराये गये समूहों अथवा प्रतिदर्शों को समग्र से पहले ही चुन लिया जाता है। इनमें से एक अर्थात् नियन्त्रित समूह का पर्यवेक्षण प्रयोगात्मक चर का समावेश कराने के पूर्व किया जाता है तथा दूसरे समूह अर्थात प्रयोगात्मक समूह का पर्यवेक्षण प्रयोगात्मक चर का समावेश कराने का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार की प्ररचना के गुण तथा दोष केवल बाद में वाली प्रयोगात्मक प्ररचना जैसे ही हैं।

स) एक नियन्त्रित समूह के साथ पहले बाद में अध्ययन

आरम्भिक समूह परिमापन तथा समकालीन कारकों के प्रभाव पर समुचित ध्यान देने हेतु एक नियंत्रित समूह का प्रयोग किया जाता है। इस प्ररचना के अन्तर्गत प्रयोगात्मक चर को प्रयोगात्मक समूह पर ही लागू किया जाता है, नियंत्रण समूह पर नही। यहां पर प्रयोगात्मक चर के प्रभाव की गणना के लिये प्रयोगात्मक समूह पर पहले तथा बाद में किये गये परिमापन से प्राप्त मापों में अन्तर को घटाया जाता है। किन्तु इस प्ररचना के अन्तर्गत अंतक्रियात्मक प्रभावों को नियंत्रित करने में असमर्थता के कारण दो या दो से अधिक नियंत्रित समूहों का प्रयोग किया जाता है।

द) दो नियंत्रित समूहों वाले"पहले बाद" में अध्ययन

इस प्ररचना का विवेचन निम्न रूप में प्रस्तुत किया जा सकता हैः

1. यदि सामयिक घटनायें एवं विकास सम्बन्धी प्रक्रिया समान हों तो दूसरे नियंत्रित समूह में होने वाला परिवर्तन; केवल पूर्व परिमापन के प्रयोगात्मक चर के कारण है।
2. पहले नियंत्रित समूह में होने वाला परिवर्तन केवल पूर्वपरिमापन के प्रभाव के कारण है।
3. यदि प्रयोगात्मक समूह में होने वाला परिवर्तन दोनों के योग से भिन्न है तो यह पूर्व परिमापन एवं प्रयोगात्मक चर के बीच उत्पन्न हुई अंतक्रिया का परिवर्तन करेगा। इस प्रकार की अंतक्रिया प्रयोगात्मक चर के प्रभाव को घटा अथवा बढ़ा सकती है।

य) तीन नियंत्रित समूहों के साथ"पहले बाद" में अध्ययन

सालोमन ने इस प्रकार की प्रयोगात्मक प्ररचना का सुझाव उन परिस्थितियों में दिया जिनमें समकालिक घटनायें अथवा विकासात्मक परिवर्तन प्रयोगात्मक परिणामों को प्रभावित करते हों।

यहां पर भी सभी समूहों का चुनाव यथा-सम्भव इस प्रयास के साथ किया जाता है कि ये केवल संयोगवश भिन्न हों,अन्यथा समान हों। इस प्ररचना के अन्तर्गत प्रयोगात्मक समूह तथा प्रथम नियंत्रित समूह का परिमापन किया जाता है। अध:स्थ मान्यता यह होती है कि उनके पूर्व परिमापन सम्बन्धी माप प्रयोगात्मक समूह तथा प्रथम नियंत्रित समूह के पूर्व परिमापन सम्बन्धी मापोंके औसत के बराबर ही होंगे। प्रयोगात्मक समूह तथा द्वितीय नियंत्रित समूह में प्रयोगात्मक चर से प्रभावित नहीं कराया जाता है। यह भी अधःस्थ मान्यता होती है कि ये सभी समूह समकालीन घटनाओं से समान रूप से प्रभावित हो रहे हैं। इन सभी चारों समूहों का परिमापन बाद में किया जाता है।

(ग) ऐतिहासिक तथ्य परीक्षण अथवा कार्यान्तर प्रयोग (Ex Post-facto Experiment)

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्रारूप केवल वर्तमान तथ्यों के अध्ययन में ही उपयोगी नहीं है बल्कि ऐसा अनुसंधान प्रारूप उन तथ्यों के अध्ययन में भी उपयोगी प्रमाणित हुआ है जिसका सम्बन्ध अतीत से है एवं जिनकी वर्तमान में पुनरावृत्ति नहीं की जा सकती। ऐतिहासिक तथ्यों को हम न तो नियन्त्रित कर सकते हैं और न ही उनमें कोई परिवर्तन ला सकते हैं। ऐसी स्थिति में ऐतिहासिक तथ्य परीक्षण वह विधि है जिसमें हम विभिन्न आधारों पर प्राचीन अभिलेखों के विभिन्न पक्षों की तुलना करके एक उपयोगी निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। अभिलेखों की तुलना से विभिन्न अनेक महत्वपूर्ण परिणामों की माप करना भी संभव हो जाता है। उदाहरण के लिए, यदि हमें अपने किसानों के लिए भारत सरकार द्वारा चलाये जा रहे विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों का अध्ययन करना है तो इस कार्य में अनेक ऐतिहासिक तथ्य भी प्रयोग का महत्वपूर्ण आधार बन सकते हैं। इसमें हम सर्वप्रथम उन किसानों की एक सूची तैयार करेंगे जिन्हें इन कल्याणकारी कार्यक्रमों का व्यावसायिक अनुभव हो अथवा जिन्हें इन कार्यक्रमों में लाभ प्राप्त हुआ हो। इसके पश्चात् यह देखा जाएगा कि ऐसे व्यक्तियों की आयु, शिक्षा, योग्यता, विशेष जाति, स्वास्थ्य, क्षेत्रीयता आदि क्या हैं? ऐसी तुलना से यह सरलता से ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों का लाभ प्राप्त करने में किसानों की जमीन का आकार, आर्थिक स्तर, सामाजिक शैक्षणिक स्तर की क्या भूमिका है। दूसरे स्तर पर कुछ अवधि का अंतराल देकर इन्हीं कारकों के प्रभाव का पुनः मापन करके हम एक निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। वैज्ञानिक चैपिन ने स्काउटिंग तथा बाल-अपराध का अध्ययन करने के लिए इसी तरह के अनुसंधान प्रारूप का उपयोग करके इसकी प्रमाणिकता को सिद्ध किया है।

8.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अनुसंधान प्ररचना के बारे में विशद वर्णन है। अनुसंधान प्ररचना के द्वारा किसी भी विषय को वैज्ञानिक बनाने में मदद मिलती है। अनुसंधान प्ररचना के द्वारा तथ्यों का वैज्ञानिक अध्ययन तथा विश्लेषण सम्भव हो जाता है।

8.7 अभ्यास प्रश्न

1. अनुसंधान प्ररचना से आप क्या समझते है परीक्षणात्मक अनुसंधान प्ररचना के बारे मे बताइये।
2. अनुसंधान प्ररचना के मुख्य प्रकार क्या हैं?
3. अनुसंधान प्ररचना की विशेषताओं पर प्रकाश डालिये।

8.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- R.L.Acoff, The Design of Social Research., University of Shicago Press.
- P.V.Young., Sceinentific Social Servey and Research.
- C. A Moser, Survey Methods in Social Investigation, Heinemann, London, 1961
- G.A.Lundberg, Social Research, 1951.
- Goode and Hatt, Methods in Social Research, Mc Graw Hill Company Inc. NewYork 1952.

इकाई - 9

निदर्शन

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 निदर्शन (Sampling)

9.3 निदर्शन की विशेषताएँ

9.4 निदर्शन की आधारभूत मान्यताएं

9.5 निदर्शन चुनाव के प्रमुख चरण

9.6 निदर्शन के प्रकार

 9.6.1 सम्भावित निदर्शन

 9.6.2 असम्भावित निदर्शन

 9.6.3 मिश्रित निदर्शन

9.7 निदर्शन के गुण एवं दोष

9.8 सारांश

9.9 अभ्यास प्रश्न

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- निदर्शन की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- निदर्शन की मान्यताओं एवं उद्देश्यों के बारे में जान सकेंगे।
- निदर्शन के चरण एवं प्रकार को समझ सकेंगे।
- निदर्शन के गुण एवं दोषों से परिचित हो सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में निदर्शन का अर्थ, परिभाषा, विशेषता, उद्देश्य, चरण एवं प्रकार तथा गुण-दोष के बारे में बताया गया है। निदर्शन किसी भी समग्र का प्रतिनिधि अंश होता है निदर्शन के द्वारा आंकडों का व्यवस्थित तथा समग्र अध्ययन हो जाता है। सामाजिक विज्ञान में आंकडें बहुत विस्तृत होते हैं अतः आंकडों को क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित तथा क्रमबद्ध करने हेतु निदर्शन की आवश्यकता पडती है।

9.2 निदर्शन (Sampling)

निदर्शन का अर्थ

निदर्शन किसी भी शोध की आधारशिला है। यह आधारशिला जितनी सुदृढ़ होगी शोध के परिणाम उतने ही विश्वसनीय एवं शुद्ध होंगे। निदर्शन तभी उपयुक्त होगा जब वह सम्पूर्ण समग्र का सही प्रतिनिधित्व करे। निदर्शन समग्र का वास्तविक प्रतिनिधि है या नहीं इसकी कसौटी यह है कि यदि निदर्शन के स्थान पर सम्पूर्ण समग्र का अध्ययन किया जाए तो परिणाम में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए। जिस प्रकार पकाये गये चावलों के कुछ दानों को देखकर ही यह ज्ञात कर लिया जाता है कि बर्तन के सभी चावल पक गये हैं कि नहीं। इसी प्रकार किसी समूह के बारे में जानने के लिए अथवा उनकी विशेषताएं समझने के लिए हम कुछ व्यक्तियों से मिलकर उनका अध्ययन करके ही सम्पूर्ण समूह की विशेषताएं ज्ञात करते हैं। इसके उपरान्त सांख्यिकीय पद्धति की किसी एक प्रविधि द्वारा निदर्शन का चयन किया जा सकता है। सांख्यिकीय रूप से निदर्शन एक ऐसा प्रयास है जिसके अन्तर्गत हम कुछ स्वीकृत और पूर्वनिर्धारित प्रणालियों की सहायता से सम्पूर्ण समग्र में से कुछ प्रतिनिधि इकाइयों का चयन करते हैं। इस दृष्टिकोण से निदर्शन एक मनमानी अथवा व्यक्तिगत इच्छा पर आधारित क्रिया नहीं है बल्कि वैज्ञानिक प्रणालियों पर आधारित होता है।

सामाजिक शोध में निदर्शन अब लगभग अनिवार्यता है। शोध के अध्ययन हेतु समस्या के चयन, उसकी व्याख्या, लक्ष्य, उद्देश्यों का निर्धारण करने के उपरान्त अध्ययन क्षेत्र (scope of study)का निर्धारण करना होता है। अध्ययन क्षेत्र का निर्धारण अध्ययन के उद्देश्य एवं प्रकृति पर निर्भर करता है। क्षेत्र निर्धारण के उपरान्त सूचना एकत्र (data collection) करने की दो महत्वपूर्ण विधियाँ है:

1. जनगणना या संगणना विधि (Census)
2. निदर्शन विधि (Sampling Method)

जब शोधकर्ता क्षेत्रीय स्रोत से तथ्य प्राप्त करना चाहता है तब उसे यह तय करना पड़ता है कि वह अध्ययन विषय से सम्बन्धित समस्त इकाइयों का अध्ययन करे अथवा उनमें से एक निश्चित संख्या चुनकर। यदि समस्त इकाइयों का अध्ययन किया जाता है तो उसे **संगणना या जनगणना** विधि तथा यदि कुछ इकाइयों का अध्ययन किया जाता है तो उसे **निदर्शन विधि** कहते हैं।

जनगणना या जनसंख्या सर्वेक्षण (census survey) पद्धति में विषय से सम्बन्धित समस्त जनसंख्या इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। जैसे यदि किसी गाँव की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को ज्ञात करना हो तो समस्त गाँव के सदस्यों का एक-एक करके साक्षात्कार किया जायेगा। इस पद्धति का प्रयोग विविध कठिनाइयों के कारण बहुत कम किया जाता है। इस पद्धति में अधिक समय, अधिक व्यय तथा अधिक श्रम का उपयोग होता है। जनगणना विधि वहाँ आवश्यक होती है जहाँ किसी विषय का गहन अध्ययन करना हो, सीमित क्षेत्र हो, इकाइयों के नमूने लेना कठिन हो, उनमें बहुत अधिक भिन्नता हो। यह पद्धति उत्पादन गणना, आयात-निर्यात गणना आदि में प्रयोग होती है।

निदर्शन की परिभाषाएँ

निदर्शन का अर्थ सम्पूर्ण इकाइयों में से कुछ इकाइयों का चयन करना होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करने वाली कुछ इकाइयों को निदर्शन कहा जाता है।

यंग (Young) के अनुसार ''एक सांख्यिकीय निदर्शन उस सम्पूर्ण अथवा योग का एक लघु चित्र अथवा प्रतिनिधि अंश है जिससे कि निदर्शन लिया गया है।''

बोगार्डस (Bogardus) के अनुसार ''निदर्शन किसी पूर्व निर्धारित योजना के अनुसार इकाइयों के एक समूह में से एक निश्चित प्रतिशत का चुनाव है।''
गुडे एवं हाट (Goode and Hatt) ने निर्दशन की अत्यधिक संक्षिप्त परिभाषा देते हुये कहा है, निदर्शन किसी विशाल समग्र का एक छोटा प्रतिनिधि है।"

9.3 निदर्शन की विशेषताएँ

विभिन्न परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से निदर्शन की निम्नलिखित विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं:

(1) पर्याप्त आकार (Sufficient Size)

प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन के लिए आवश्यक है कि चयनित की जाने वाली इकाइयों का समुचित आकार में प्रदर्शन की क्षमता हो। दूसरे शब्दों में, अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों एवं प्रकृति के अनुसार पर्याप्त इकाइयों का चयन किया जाए। गुडे एवं हाट के अनुसार ''एक निदर्शन को केवल प्रतिनिधिपूर्ण होना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसमें पर्याप्तता भी होनी चाहिए। एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जब तक आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो।''

(2) समग्र का उचित प्रतिनिधित्व (Effective Representation in Sample)

निदर्शन को समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करना चाहिए। तथ्यों का अंश (भाग) सम्पूर्ण प्रतिनिधि है कि नहीं यह दो बातों से निर्धारित होता है (1) अवलोकित (Observed) किये जा रहे तथ्यों की प्रकृति, तथा (2) चुनाव (sample selection) के लिए अपनायी गई पद्धति। इस प्रकार निदर्शन समग्र का सही प्रतिनिधित्व तभी करेगा, जब वह उसके समरूप हो तथा उसके चुनाव की सही पद्धति प्रयोग की जाए।

(3) समग्र का प्रतिनिधित्वपूर्ण होना (Representation of Universe)

प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सर्वश्रेष्ठ विशेषता के रूप में कहा जा सकता है कि अनुसंधानकर्ता को ऐसे निदर्शन को अपने अध्ययन की इकाई बनाना चाहिये, जो समग्र का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम हो। ऐसे निदर्शन का चयन करने पर ही अध्ययन में सत्यता एवं वास्तविकता आ पाती है और अध्ययन का वैज्ञानिक उद्देश्य प्राप्त हो पाता है और इसके अभाव में किया गया अध्ययन सत्यता एवं वास्तविकता के परे एक दिखावा बनकर संकुचित उद्देश्यों की पूर्ति का माध्यम ही बनकर रह जाता है। अतः अध्ययन समग्र का प्रतिनिधित्व कर सके, इसके लिए अति आवश्यक है कि समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में सम्मिलित किया जाना चाहिए तथा निदर्शन चयन करते समय पूर्णरूप से ईमानदारी से कार्य करना चाहिए। जैसा कि लुण्डबर्ग का कथन है कि ''निदर्शन प्रतिनिधित्वपूर्ण तभी हो सकता है जबकि अध्ययन से सम्बन्धित इकाइयों में समानता हो एवं निदर्शन चयन की प्रणाली पूर्ण तटस्थ रूप में उपयोग की गई हो।''

(4) वैयक्तिक पक्षपात रहित (Free of Individual Biases)

निदर्शन का चयन करते समय अनुसंधानकर्ता का मुख्य लक्ष्य वैज्ञनिक अध्ययन करना होना चाहिए तथा इसके लिए पूर्णतः निष्पक्ष रूप में एवं पूर्णईमानदारी से व्यक्तिगत इच्छा एवं पसन्द को दरकिनार

करके अर्थात् वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र रहते हुए अध्ययन की इकाइयों का चयन वैज्ञानिक पद्धतियों से करना चाहिए अर्थात् निदर्शन के रूप में प्रत्येक इकाई का चयन होने की पूर्ण स्वतन्त्रता रहनी चाहिए। वास्तविकता यह है कि निदर्शन का चयन जितना अधिक वैयक्तिक पक्षपात से स्वतन्त्र होगा अध्ययन में उतनी ही अधिक वैज्ञानिकता आने की संभावना रहती है। अतः उचित निदर्शन वही होता है जो वैयक्तिक पक्षपात से पूर्ण स्वतन्त्र हो।

(5) साधनों तथा उद्देश्यों के अनुरूप (Compatible with Resouces and Objectives)

प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप होनी चाहिए। अनुसंधानकर्ता को निदर्शन चयन करते समय मुख्यतः अध्ययन के मूल उद्देश्यों तथा स्वयं के पास उपलब्ध साधन सुविधाओं को ध्यान में रखकर ही निदर्शित इकाइयों का चयन करना चाहिए।

(6) सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित (Based on General Knowledge and Reasoning)

प्रतिनिधित्वपूर्ण निदर्शन की एक प्रमुख विशेषता के रूप में यह स्पष्ट होता है कि इसे सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित होना चाहिए। अपनी बौद्धिक स्थिति एवं सामान्य ज्ञान का पूरी तरह से उपयोग करते हुए नियमानुरूप प्रतिदर्शन का चयन शोधकर्ता को करना चाहिए। यह निश्चित है कि शोध से सम्बन्धित विधियां विकसित एवं आधुनिक क्यों न हों, तर्क तथा सामान्य ज्ञान के प्रयोग के अभाव में प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्शन प्राप्त करना असम्भव सा प्रतीत होता है। अतएव अच्छे निदर्शन की यह एक प्रमुख विशेषता है। प्रतिदर्शन का सामान्य ज्ञान एवं तर्क पर आधारित होना नितान्त आवश्यक है।

(7) व्यवहारिक अनुभवों पर आधारित (Based on Behavioural Experiences)

व्यवहारिक अनुभवों का सर्वथा उपयोग करते हुए शोधकर्ता को अच्छे निदर्शन के चयन हेतु उचित प्रयत्न करना चाहिए, या हम कह सकते हैं कि व्यवहारिक अनुभवों को श्रेष्ठ प्रतिदर्शन के चयन करते समय शोधकर्ता को उपयोग में लाना चाहिए। जिस तरह से कोई नया व्यक्ति कोई अच्छा सामान खरीदने के लिये जाता है उससे अच्छे प्रतिदर्श की आशा करना निश्चित तौर पर गलत होगा। अतः एक कुशल शोधकर्ता बिना व्यवहारिक अनुभवों के श्रेष्ठ निदर्शन का चयन नहीं कर सकता। उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि श्रेष्ठ एवं प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्शन के लिए मात्र सैद्धान्तिक ज्ञान का होना ही सब कुछ नहीं होता वरन् सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ-साथ अनुभव का होना शोधकर्ता के लिए मील का पत्थर साबित होता है।

निदर्शन की आधारभूत मान्यतायें

निदर्शन पद्धति वह प्रणाली है जिसमें समग्र में से सावधानीपूर्वक कुछ ऐसी इकाइयों को चुन लिया जाता है जो समग्र का उचित प्रतिनिधित्व करती हो। परन्तु यहीं यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि सम्पूर्ण जनसंख्या अथवा समूह में से कुछ इकाइयों का चयन करके ही उन्हें सम्पूर्ण समग्र का

प्रतिनिधि किस प्रकार माना जा सकता है? इससे सम्बन्धित मान्यतायें जो इस समस्या का निवारण करती हैं, निम्नवत् हैं:

1. पहली आधारभूत मान्यता यह है कि समाज वैज्ञानिकों का यह विश्वास है कि इस विभिन्नता में कुछ न कुछ एकता अवश्य है तथा यही प्रतिदर्श का आधार भी है।
2. समान विशेषतायें प्रदर्शित करने वाली इकाइयों में से यदि कुछ इकाई का चयन करके उसका समुचित अध्ययन कर लिया जाय तो ऐसा अध्ययन अपने वर्ग की सभी विशेषताओं को स्पष्ट करेगा।
3. सामाजिक घटनाओं के परिवर्तन का प्रभाव इस पद्धति पर नहीं होता क्योंकि सामाजिक घटनाक्रम बदलने में अथवा प्रभाव दिखाने में अधिक समय लेती है जबकि इस पद्धति में समय कम लगता है।
4. सजातीय इकाइयों (Homogeneous units) में से प्रत्येक इकाई दूसरी की विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करती है।

निदर्शन के उद्देश्य

सामान्य तौर पर प्रतिदर्शन के दो प्रमुख उद्देश्य हैं:

1. कुछ विशिष्ट समग्र समष्टियों (Population Parameters); का अनुमान लगाना तथा ऐसा करने के लिए प्रतिदर्शजों को आधार रूप में प्रयोग करना।
2. जनसंख्या से सम्बन्धित एक सांख्यिकीय परिकल्पना का परीक्षण करना।

9.5 निदर्शन-चुनाव के प्रमुख चरण

यद्यपि निदर्शन-चुनाव के तरीके या प्रविधियाँ कई प्रकार की हैं फिर भी निदर्शन-चुनाव की सम्पूर्ण प्रक्रिया के कुछ प्रमुख तथ्य ऐसे होते हैं कि प्रत्येक प्रणाली में समान होते हैं। ये निम्न प्रकार से हैं:

1. समग्र को निश्चित करना;
2. निदर्शन की इकाइयों का निर्धारण करना;
3. इकाइयों के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करने के साधन-सूची को उपलब्ध करना;
4. निदर्शन के आधार का निर्धारण करना; तथा
5. निदर्शन-पद्धति का चुनाव करना।

9.6 निदर्शन के प्रकार (Types of Sampling)

सम्भाविता या प्रायिकता का प्रतिचयन या निदर्शन मूलतः सांख्यिकी के नियमों पर आधारित है जिससे अनुसन्धानकर्ता यह आंकलन कर सकता है कि यदि समग्र एवं निदर्शन दोनों का अध्ययन किया जाये तो उनसे प्राप्त जानकारी में किस सीमा तक अन्तर होने की सम्भावना नहीं है, जितने अन्तर के लिये वह तैयार है उसके आधार पर यह निश्चय भी किया जा सकता है कि निदर्शन बड़ा होना चाहिये, जबकि अप्रायिकता या असम्भाविता निदर्शन के आधार पर समग्र के विषय में ठीक-ठीक आंकलन नहीं हो सकता। इसका उपयोग सुविधा एवं धन की बचत के उद्देश्य से या अन्वेषणात्मक अध्ययनों में होता है, जिससे अनुसन्धानकर्ता को आगे अनुसन्धान के लिये कुछ उपकल्पनायें प्राप्त हो जाये। सामान्यतः निदर्शन को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है जो निम्नलिखित हैं: (अ) सम्भाविता निदर्शन; तथा (ब) असम्भाविता निदर्शन

9.6.1 सम्भाविता निदर्शन (Probablity Sampling)

सम्भाविता या प्रायिकता शब्द का प्रयोग भी सम्भाविता के गणितीय सिद्धान्त के अर्थ में करते हैं। इस प्रकार के निदर्शन में प्रत्येक इकाई के चुनाव की सम्भावना रहती है। जहोदा के अनुसार, इसकी अनिवार्य विशेषता यह है कि किसी भी समग्र की प्रत्येक इकाई के लिये निदर्शन में सम्मिलित होने की सम्भावना की गणना कर सकता है। इस प्रकार निदर्शन का चुनाव ऐसी पद्धतियों से किया जाता है जिनमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में आने का अवसर मिलता है। इसके साथ ही इस बात की गणना भी सांख्यिकीय आधार पर की जा सकती है कि इकाई के निदर्शन में सम्मिलित होने की क्या संभावनायें हैं?

सम्भाविता की अवधारणा इस मान्यता पर आधारित है कि भौतिक संसार में किसी भी घटना के घटित होने की सम्भावना समान होती है। किसी निश्चित समय पर कोई भी घटना घटित हो सकती है। अनेक बार प्रयोग किये जाने पर सभी घटनाओं को बराबर संख्या में घटित होना चाहिये। घटनायें किसी पूर्व निर्धारित एवं नियन्त्रित क्रम में न होकर संयोगवश घटित होती है। संयोग से हमारा अभिप्राय उस मान्यता से है जिसके अनुसार घटना किसी क्रमबद्ध अथवा व्यवस्थित ढंग से घटित नहीं होती। किसी एक निश्चित घटना के विशिष्ट परिणाम की सापेक्ष बारम्बारता को प्रकट करने का एक ढंग है। ये बारम्बारतायें एक ही प्रकार की सभी घटनाओं के प्रतिशत के रूप में व्यक्त की जाती हैं क्योंकि सम्भाविता की आधारभूत मान्यता के अनुसार कोई भी घटना किसी भी अन्य घटना की तुलना में अथवा अधिक बार घटित नहीं होती है और इसकी सम्भाविता शून्य से लेकर एक के बीच पायी जाती है।

जो निदर्शन सम्भावना के आधार पर छाँटे जाते हैं उन्हें ही सम्भावना निदर्शन कहते हैं। इन निदर्शनों को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है:

(1) सरल यादृच्छिक (दैव) निदर्शन (Simple Random Sampling)

अध्ययन के पक्षपात से बचाव रखने के लिए इस विधि के अन्तर्गत सभी इकाइयों को समान अवसर प्रदान किया जाता है। संयोग के आधार पर इनका चयन अधिक विश्वसनीय तथा प्रतिनिधित्वपूर्ण होता है। इसमें कोई निश्चित उद्देश्य नहीं होता है।

हार्पर के अनुसार, ''एक दैव निदर्शन वह निदर्शन है जिसका चयन इस प्रकार हुआ है कि समग्र की प्रत्येक इकाई को सम्मिलित होने का समान अवसर प्राप्त हुआ हो।''

पार्टेन ने दैव निदर्शन के कुछ प्रमुख विशेषताएँ बताई हैं:

- (i) समग्र की इकाइयाँ स्पष्ट होनी चाहिए।
- (ii) उनका आकार लगभग एक समान होना चाहिए।
- (iii) प्रत्येक इकाई एक-दूसरे से स्वतन्त्र होनी चाहिये।
- (iv) प्रत्येक इकाई को सम्रग के चुनाव का समान अवसर मिलना चाहिए।
- (v) निदर्शन चयन की विधि भी स्वतंत्र होनी चाहिए।
- (vi) अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुंच सुलभ होनी चाहिए।
- (vii) एक बार चुनी गयी इकाइयों को निदर्शन से हटाना या उन्हें बदलना नहीं चाहिए।

दैव-निदर्शन चुनने की प्रविधियाँ (Methods of Random Sampling)

दैव निदर्शन विधि के अनुसार निदर्शन निकालने की अनेक प्रविधियां हैं, उनमें से कुछ अधिक प्रचलित विधियां हैं-लाटरी विधि, कार्ड विधि, टिप्पेट विधि, झंझरी अथवा छलनी विधि, नियमित तथा अनियमित अंकन विधि आदि।

(क) लॉटरी विधि (Lottery Method)

इसे आकस्मिक विधि भी कहते है। इसमें सारी इकाइयों को एक कागज के छोटे-छोटे पर्चों पर अलग-अलग लिखकर किसी बर्तन में डालकर हिला देते हैं, तत्पश्चात् उन मिले-जुले पर्चों में से, आंख बन्द करके उतनी पर्चियाँ निकल लेते हैं जितने निदर्शन छाँटने हैं। कम पर्चियों के लिए उपयुक्त होती है। यही विधि राजकीय लाटरी में से पुरस्कार निकालने में काम आती है।

(ख) कार्ड विधि (Card Method)

इसी को ड्रम अथवा टिकट विधि कहा जाता है। इसके अन्तर्गत रंगीन कार्डों या छोटे-छोटे टिकटों पर समग्र की इकाइयों की संख्या लिख कर उन्हें किसी ड्रम में भर दिया जाता है। अनेक बार ड्रम को हिला अथवा घुमाकर उनमें पड़े हुए कार्ड एक-एक करके निकाले जाते हैं। जितनी इकाइयों का चुनाव होता है उतनी बार कार्ड निकाले जाते हैं। प्रत्येक बार कार्ड निकालने से पूर्व अच्छी तरह से ड्रम को हिलाया जाता है इसमें आँखे बन्द नहीं करनी पड़ती हैं। परन्तु यह ध्यान रहे कि इस प्रणाली को अपनाने के लिये समस्त कार्डों का आकार, रंग, मोटाई आदि समान हो।

(ग) टिप्पेट विधि (Tippet Method)

यह विधि **एच. जी. टिप्पेट (H.G. Tippet)** ने चार-चार अंकों वाली 10,400 संख्याओं की एक सूची के आधार पर बनायी थी। इन संख्याओं में कोई क्रम नहीं है, जैसे 1225, 2858, 4024, 3684, 2617, 4911, 0922 इत्यादि|| जितनी इकाइयों वाले समग्र का निदर्शन छाँटना हो, तो इस सूची के किसी पृष्ठ की उससे नीचे संख्याओं का खड़े या पड़े क्रम से निरन्तर ले लेना चाहिए, यदि समग्र की संख्याएं केवल तीन या दो अंकों तक ही हों तो सूची की संख्याओं में बायीं ओर से प्रथम तीन या दो अंक ही मान लेने चाहिए, जैसे 1254 में 125 या 12 , यह सूची केवल 9999 तक के इकाई-समग्र में निदर्शन चुन सकती है तथा अधिक विश्वसनीय मानी जाती है।

(ङ) झंझरी अथवा छलनी विधि (Grid or Screening Method)

इस विधि का उपयोग भौगोलिक क्षेत्र के चुनाव के लिये किया जाता है। जब किसी नगर, प्रदेश या क्षेत्र में से कुछ इकाइयों का चयन करना हो तो पहले उस क्षेत्र का नक्शा तैयार किया जाता है। इस नक्शे पर ग्रिड प्लेट को रखा जाता है। यह ग्रिड प्लेट सेल्युलाइड अथवा किसी पारदर्शक पदार्थ से बनी होती है। इस प्लेट में वर्गाकार खाने बने होते हैं जिन पर नंबर लिखे होते हैं। यह पहले से ही तय कर लिया जाता है कि निदर्शन में कितनी इकाइयों का चयन करना है, उतने ही वर्गों को पहले से काट लिया जाता है। ग्रिड को मानचित्र पर रखकर जितने कटे भागों पर मानचित्र का क्षेत्र आता है उस पर निशान लगा दिया जाता है और उन्हें ही निदर्शन का क्षेत्र मानकर अध्ययन किया जाता है।

(च) नियमित अंकन विधि (Regular Marking Method)

इसे मोजर ने अर्द्ध-दैव निदर्शन बताया है। इसके अन्तर्गत, किसी पूर्व निर्धारित व्यवस्था अथवा क्रम के अनुसार समस्त इकाइयों को लिखकर उनमें से एक नियमित अंतराल के साथ अंकनकरते हुए निदर्शन चुन लिया जाता है। यंग के अनुसार यह नियमित अन्तराल निदर्शन है। इसमें प्रारंभिक सूची में पक्षपात हो सकता है फिर भी सभी इकाइयों को सम्मिलित होने का समान अवसर मिल जाता है। प्रायः इसे कहते हैं:-

- (i) संख्यात्मक अथवा क्रमानुसार अंकन (Serial Marking)
- (ii) भौगोलिक अंकन (Geographical Marking)
- (iii) वर्णानुसार अंकन पर आधारित किया जा सकता है। यह साधारण निदर्शन में एक सुधार है।

(छ) अनियमित अंकन विधि (Irregular Marking Method)

इस विधि से निदर्शन का चुनाव करने के लिये पहले समग्र की समस्त इकाइयों की सूची बना ली जाती है तथा प्रथम और अन्तिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की सूची में से निर्धारित मात्रा में अनियमित ढंग से इकाइयों पर निशान लगा दिया जाता है। इस विधि में पक्षपात आने की सम्भावना रहती है।

(2) क्रमबद्ध अथवा नियमित अन्तरालों वाला प्रतिदर्शन (Systematic Sampling)

इसके लिये आवश्यक है कि इकाईयों को इस प्रकार व्यवस्थित किया जाये कि समग्र की प्रत्येक इकाई को इसके क्रम के आधार पर विशेष रूप से पहचाना जा सके। निम्नलिखित दो विधियों से प्रतिदर्श का चयन किया जाता है:

(i) रैखिक प्रतिदर्श ढंग (Linear Sampling)

इसमें हम 1 तथा k के मध्य का एक अंक यादृच्छिक रूप से चुनते हैं। इसी संख्या में K, 2K, 3K, जोड़कर आवश्यक संख्या में प्रतिदर्श प्राप्त कर लेते हैं। 1 तथा ज्ञ के मध्य वह यादृच्छिक संख्या ग् है तो क्रमशः निम्नलिखित संख्याएं प्राप्त होंगी

$$X, X + K, \; X + 2K, \; X + 3K, ..., X + (n-1) K$$

जैसे यदि एक 100 व्यक्तियो के समूह मे से प्रथम व्यक्ति के चुनाव के पश्चात प्रत्येक ५वे व्यक्ति का चुनाव किया जाता है|

(ii) चक्रीय प्रतिदर्श ढंग (Cyclic Sampling)

इसमें ज्ञ की गणना कर यादृच्छिक संख्या 1 तथा ज्ञ के मध्य से न लेकर 1 तथा द के मध्य लिया जाता है तथा क्रमशः K, 2K, 3k को जोड़कर संख्यायें प्राप्त किया जाता है।

(3) संस्तरित प्रतिदर्शन (Stratified Sampling)

सिन पाओं यांग ने लिखा है कि ''संस्तरित निदर्शन का अर्थ है समग्र मे से उप-निदर्शनों को लेना जिनकी कि समान विशेषतायें हैं जैसे खेती के प्रकार, खेतों के आकार, भूमि पर स्वामित्व, शिक्षा स्तर, आय, लिंग सामाजिक वर्ग आदि। उप-निदर्शनों के अन्तर्गत आने वाले इन तत्वों को एक साथ लेकर प्रारूप या श्रेणी के रूप में वर्गीकृत किया जाता है स्तरित निदर्शन में भी अध्ययनकर्ता समग्र के

समस्त लक्षणों से परिचित होता है। इस प्रणाली के प्रयोग करने में सर्वप्रथम समग्र को सविचार प्रतिदर्श द्वारा ऐसे अलग-अलग उपसमूहों में विभाजित कर दिया जाता है जिससे प्रत्येक उपसमूह समग्र के केवल एक ही गुण का प्रतिनिधित्व हो (Homogeneous groups)। इस प्रकार समग्र में एकरूपता लाने के पहले प्रयत्न किया जाता है। इसके बाद ही इन प्रत्येक उप-विभागों में से दैव-निदर्शन प्रणाली के द्वारा निदर्शनों का चुनाव किया जाता है। इसीलिए इसको ''मिश्रित निदर्शन'' भी कहा जाता है। क्योंकि इसमें दैव निदर्शन तथा उद्देश्यपूर्ण निदर्शन की विशेषताओं का मिश्रित रूप देखने को मिलता है। स्तरित निदर्शन के लिए साधारणतया यह आवश्यक होता है कि प्रत्येक श्रेणी में से उतनी ही संख्या का चयन किया जा जिस अनुपात में समग्र के अन्तर्गत विभिन्न श्रेणी के सदस्यों की संख्या होती है। श्री पार्टेन के अनुसार, ''इसमें प्रत्येक श्रेणी के अन्तर्गत मामलों का अंतिम चुनाव तो संयोग द्वारा होता है। ''उदाहरणार्थ, यदि टेलीफोन के पुरूष तथा स्त्री उपभोक्ताओं का निदर्शन ज्ञात करना हो तो दोनों की पृथक-पृथक सूचियों में से 10-10 प्रतिशत दैव-निदर्शन निकालेंगे। वर्ग श्रेणी, जाति, व्यवसाय, आय, लिंग, वैवाहिक तथा शैक्षिक स्तर आदि के आधार पर बनाये जा सकते हैं।

स्तरीकृत प्रतिदर्शन को मुख्यतयाः निम्नलिखित प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है:--

समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन

समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन में प्रत्येक निदर्शन की इकाइयां उसी अनुपात में ली जाती है जिस अनुपात में वे समग्र के अन्तर्गत होती है, यदि विभिन्न स्तरों में भिन्न-भिन्न संख्या में इकाइयां पायी जाती हैं तो प्रत्येक स्तर के लिये समानुपातिकता की प्राप्ति हेतु प्रत्येक स्तर में से इकाइयों को एक स्थिर अनुपात में चुनते हैं । समानुपातिक निदर्शन अनुसंधानकर्ता को इस विषय में निश्चित होने की सामथ्र्य प्रदान करता है कि वह प्रत्येक स्तर से सही अनुपात में इकाइयों का चुनाव कर रहा है।

समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के विषय में निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय हैं:--

1. समानुपातिक निदर्शन सूक्ष्मता की सीमा को बढ़ा देता है। क्योंकि प्रत्येक स्तर के निदर्शन के अन्तर्गत समानुपातिक प्रतिनिधित्व होता है।
2. इसका प्रयोग करने पर गैर-समानुपातिक निदर्शन की तुलना में प्रायः अधिक बचत होती है।
3. इसका प्रयोग सापेक्षतया सरल है और इसलिये प्रायः प्रयोग में लाया जाना चाहिये।
4. इकाइयों के चुनाव की तुलना में गुच्छों का निदर्शन की इकाइयों के रूप में चुनाव अधिक लाभदायक होता है।
5. स्तरीकरण के लिये उपयुक्त चरों के निर्धारण एवं चुनाव पर अधिक समय व्यय नहीं किया जाता।
6. स्तरों की संख्या जितनी ही अधिक होती है,त्रुटि की सम्भावना उतनी ही कम होती है।

असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन

कभी-कभी असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन का चयन करना पड़ता है। जहोदा के अनुसार, असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के कई कारण हो सकते हैं। कई परिस्थितियों में जिन स्तरों में कम संख्या होती है, उनसे अधिक इकाइयों का चुनाव किया जाता है जैसे कि विभिन्न स्तरों में तुलना सम्भव हो। कभी-कभी एक स्तर में किसी विशेषता के आधार पर अधिक विभिन्नतायें पाई जाती हैं और दूसरे स्तर में अधिक समानता होती है। ऐसी स्थिति में पहले स्तर में से अधिक इकाइयों की

आवश्यकता होगी और दूसरे स्तर में तुलनात्मक रूप में कई इकाइयों का चयन करना पड़ेगा। यदि अनुभव से ही यह ज्ञात हुआ है कि स्त्रियों की तुलना में पुरूषों के विचारों और मनोवृत्तियों में अधिक विभिन्नता है तो निदर्शन में पुरूषों की संख्या अधिक होनी चाहिये जिससे कि इन विभिन्नताओं का अध्ययन किया जा सके। इसके अन्य कारण भी हो सकते हैं।

स्तरीकृत प्रतिदर्शन के लाभ (Advantages of Stratified Sampling)

1. प्रत्येक वर्ग की इकाइयों को निदर्शन में स्थान प्राप्त होता है।
2. समग्र का वर्गीकरण करने से छोटी से छोटी इकाई भी अधिक प्रतिनिधिपूर्ण होती है।
3. इस प्रणाली में विकल्प सम्भव है। आवश्यकतानुसार एक इकाई के स्थान पर दूसरे को स्थापित किया जा सकता है।
4. धन, समय तथा श्रम की बचत होती है क्योंकि वर्ग विभाजन क्षेत्रीय आधार पर होता है।
5. समग्र की इकाइयों पर अनुसन्धानकर्ता का उचित नियंत्रण रहता है।

दोष, कमियां अथवा सीमायें (Disadvantages, Drawbacks and Limitations)

1. वर्ग-विभाजन में आंशिक त्रुटि से विषयानुकूल परिणामों में त्रुटि आ सकती है।
2. असमानुपातिक प्रणाली में प्राप्त प्रतिदर्श उचित प्रतिनिधिपूर्ण नहीं होता।
3. वर्गों के आकार की वृहतता में समानुपातिक निदर्शन अत्यन्त कठिन हो जाता है।
4. इकाइयों में मिश्रित गुण होने पर वर्गों का निर्माण कठिन है क्योंकि ऐसी स्थिति में शोधकर्ता अपनी इच्छानुसार इकाइयों को किसी भी वर्ग में रख सकता है।
5. वर्गों के बनाने व प्रारम्भिक जानकारी प्राप्त करने में धन,श्रम व समय का नुकसान होता है।

(4) गुच्छ प्रतिदर्शन (Cluster Sampling)

इस विधि का प्रयोग चुनाव के उन विधियों को सम्बोधित करने के लिये प्रयोग में लाया जाता है जिनके अन्तर्गत प्रतिदर्शन इकाई अर्थात चुनाव की इकाई में समग्र के एक से अधिक तत्व पाये जाते हैं। गुच्छ प्रतिदर्शन का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जिसमें समग्र के प्रत्येक सदस्य को पहचानना दुर्लभ होता है,परन्तु समग्र के कुछ विशिष्ट उपसमूहों अथवा गुच्छों को पहचानना अपेक्षाकृत कहीं अधिक सरल होता है। गुच्छ प्रायः एक भौगोलिक अथवा सामाजिक इकाई होती है। गुच्छ प्रतिदर्शन में प्रयोग में लाये गये गुच्छ समान तथा असमान आकार वाले हो सकते हैं।

(5) बहुस्तरीय निदर्शन (Multi-stage Sampling)

बहुस्तरीय निदर्शन बहुत कुछ सीमा तक स्तरित निदर्शन के ही समान होता है लेकिन इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि इसका प्रयोग किसी बहुत बडे अध्ययन क्षेत्र से एक निदर्शन चुनने के लिये किया जाता है। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट है, बहुस्तरीय निदर्शन के अन्तर्गत इकाइयों के चुनाव की प्रक्रिया अनेक स्तरों में से होकर गुजरती है। परन्तु प्रत्येक स्तर पर इकाइयों के चुनाव का कार्य दैव निदर्शन की प्रणाली के द्वारा ही किया जाता है।

(6) बहुसोपानीय निदर्शन (Multi- phase Sampling)

यह प्रतिदर्शन प्रचना का ऐसा प्रकार है जिसके अन्तर्गत प्रत्येक इकाई से कुछ न कुछ सूचना अवश्य एकत्र की जाती है। किन्तु सम्पूर्ण प्रतिदर्श के कुछ उप प्रतिदर्शों से अतिरिक्त एवं अधिक विस्तृत सूचना प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। यह बहुस्तरीय प्रतिदर्शन से इस अर्थ में भिन्न है कि इसमें प्रत्येक सोपान पर एक प्रकार की प्रतिदर्शन इकाई का प्रयोग किया जाता है किन्तु अन्य इकाइयों की तुलना में कुछ से अधिक सूचना प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

9.6.2 असम्भाविता निदर्शन (Non- probablity Sampling)

असम्भाविता प्रतिदर्शन में प्रतिदर्श का चुनाव किये जाने पर समग्र का प्रतिनिधित्व संयोग पर आधारित नहीं होता वरन् प्रतिदर्श का चयन करने वाला विचारपूर्वक प्रतिदर्श का चयन करने का निर्णय लेता है। यह कहना कोई अतिशयोक्ति न होगा कि असम्भाविता प्रतिदर्शन का चुनाव चयनकर्ता अपने विचार से एवं मनमाने तरीके से करता है। इन निदर्शनों में सम्भावना अथवा संयोग का महत्व नहीं होता है। इसीलिए इन्हें 'सम्भावना रहित' माना जाता है।

(1) क्रमबद्ध अथवा अव्यवस्थित प्रतिदर्शन (Non-systematic Sampling)

इस प्रतिदर्शन में किसी तर्क पर आधारित योजना का प्रयोग नहीं किया जाता है तथा प्रतिदर्श आकस्मिक रूप से चयनित किये जाते हैं अथवा स्वतः चयन किये हुये होते हैं। यह प्रतिदर्शन सम्पूर्ण रूप से मनमाने ढंग से किया जाता है। यही कारण है कि समय एवं धन की बचत होने के साथ-साथ इसमें पूर्वाग्रहता तथा सूक्ष्मता का अभाव या दोष होने की सम्भावनायें रहती हैं।

(2) उद्देश्यपूर्ण निदर्शन (Purposive Sampling)

इसमें निदर्शन का चुनाव किसी विशेष उद्देश्य से होता है, इसीलिए इसे उद्देश्यपूर्ण, निर्णय-सम्बन्धी अथवा सविचार निदर्शन (Judgemental Sampling) कहते हैं। अध्ययनकर्ता पहले ही सम्मिलित करने अथवा छोड़ने वाली इकाइयों को जानता है। इसमें शोधकर्ता की प्रकृति तथा विचार का अधिक महत्व होता है। जहोदा के अनुसार, ''उद्देश्यपूर्ण निदर्शन के पीछे यह आधारभूत मान्यता होती है कि उचित निर्णय तथा उपयुक्त कुशलता के साथ व्यक्ति (कर्ता) निदर्शन में सम्मिलत करने हेतु उन मामलों को चुन सकता है तथा इस प्रकार ऐसे निदर्शनों का विकास कर सकता है जो उसकी आवश्यकताओं के अनुसार सन्तोषजनक है।'' एडोल्फ जेन्सन (Adolf Jenson) के अनुसार, ''उद्देश्यों या विचार निदर्शन से अर्थ है इकाइयों के समूहों की एक संख्या को इस प्रकार चुनना कि चुने हुए समूह मिलकर उन विशेषताओं के सम्बन्ध में यथा सम्भव वही औसत अथवा अनुपात प्रदान करें जो कि समग्र में है और जिनकी सांख्यिकीय जानकारी पहले से ही है।''

(3) कोटा निदर्शन (Quota Sampling)

कोटा निदर्शन में यह प्रयास किया जाता है कि विभिन्न तत्व जिस अनुपात में समग्र में पाये जाते हैं उसी अनुपात में निदर्शन में भी आ जाए, किन्तु इकाइयों का चयन आकस्मिक ही होता है। इसमें समग्र के मुख्य स्तरों का ध्यान रखा जाता है एवं यह प्रयास किया जाता है कि प्रत्येक स्तर का प्रतिनिधित्व निदर्शन में होगा। यदि प्रत्येक स्तर का सदस्य अपने सही अनुपात में निदर्शन में न भी आ सके तो कम से कम यह होना चाहिये कि प्रत्येक स्तर के विषय में अनुमान लगाया जा सके। इस

पद्धति को भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अधिक उपयुक्त नहीं माना जाता है एवं इसके अन्तर्गत उत्तरदाताओं का चुनाव शोधकर्ता स्वेच्छा से ही करता है। कोटा निदर्शन का उपयोग करते समय यह ध्यान रखा जाता है कि अध्ययन के विषय से सम्बन्धित किन-किन लक्षणों के आधार पर विभिन्न वर्गों में इकाइयों का चुनाव करना अधिक उपयुक्त होगा। ऐसा करने के उपरान्त यह निश्चित कर दिया जाता है कि प्रत्येक वर्ग में से कितने उत्तरदाताओं से आंकडों को एकत्रित करना है।

9.6.3 मिश्रित प्रतिदर्शन (Mixed Sampling)

प्रतिदर्श चयनकर्ता प्रतिदर्श का चयन किसी विशेष प्रयोजन को पूर्ण करने के लिये करता है। इसके लिये कभी-कभी दो प्रकार की विधियों के मिले-जुले रूप को भी काम में लाया जाता है। अतः दैव प्रतिदर्शन तथा उद्देश्यपूर्ण प्रतिदर्शन के मिले-जुले रूप को मिश्रित प्रतिदर्शन कहते हैं।

प्रतिदर्शन का उपर्युक्त विवेचन इसके समस्त आयामों को स्पष्ट करता है। प्रतिदर्शन चयन निष्पक्ष होते भी पूर्णतया सही नहीं होता। इसमें हमारी अभिनति जुड़ी होती है। उदाहरणार्थ- हम मूंगफली खरीदने जाते हैं तो ऊपर से बड़ी-बड़ी और दिखने में अच्छी फलियों को उठाकर चखते हैं और उसी को प्रतिदर्श मानकर हम अनुमान लगा लेते हैं कि समस्त मूंगफलियां अच्छी हैं। यही अध्ययन में त्रुटि पैदा करता है। अतः शोधकर्ता अध्ययन के लिये प्रतिदर्शन का चयन व्यक्तिगत स्वार्थ,इच्छा,मूल्य,विचार आदि से प्रेरित होकर करता है तो निष्पक्ष प्रतिनिधिपूर्ण प्रतिदर्श नहीं प्राप्त होता है। इस स्थिति को अभिनति या पूर्वाग्रह कहते हैं।

निदर्शन के गुण एवं दोष

गुण

निदर्शन प्रविधि की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है क्योंकि आधुनिक विशाल व जटिल समुदायों के अध्ययन में जनगणना-पद्धति अत्यन्त असुविधाजनक है और उसमें धन तथा समय दोनों ही बहुत लगते हैं। इसके विपरीत निदर्शन-प्रविधि के निम्नलिखित लाभ हैं:

1. **समय की बचत**: मात्र थोड़ी सी इकाइयों के अध्ययन में अपेक्षाकृत काफी कम समय लगता है। इसीलिए सामान्य समस्याओं जैसे-साक्षरता रहन-सहन का स्तर इत्यादि के सर्वेक्षणों में निदर्शन अधिक लाभकारी होते हैं।
2. **धन-व्यय की बचत:** बड़े अध्ययनों में निदर्शन पद्धति द्वारा धन कम खर्च करके विश्वसनीय परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।
3. **गहन अध्ययन:** इकाइयाँ की सीमित संख्या होने के कारण गहन अध्ययन सम्पन होता है।
4. **परिणामों की परिशुद्धता**: निदर्शनों पर आधारित परिणामों में परिशुद्धता भी अधिक होती है। कभी-कभी तो चुनावों, रहन-सहन की दशाओं इत्यादि के निदर्शन वास्तविक परिस्थितियों का काफी सही रूप में चित्रण करते हैं।
5. **लोचपूर्णता:** जब किसी पिछले अध्ययन की समस्या सत्यता की जाँच करनी होती है तो आवश्यकतानुसार निदर्शनों की संख्या में परिवर्तन सम्भव हैं।
6. **संगठन की सुविधा:** निदर्शन कम होने के कारण, प्रतिदर्श सर्वेक्षण का आयोजन एवं संगठन सरल होता है।
7. **निदर्शन की अनिवार्यता:** अधिक विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में जब अध्ययन इकाइयाँ दूर-दूर विखरी हुई हों, तब उनकी संख्या अधिक होती है। सम्पर्क करना कठिन हो अथवा

सम्पूर्ण समग्र को ज्ञात करना ही कठिन हो, ऐसी दशा में निदर्शन आवश्यक ही समझा जाता है।

दोष

निदर्शन अधिक उपयोगी तथा प्रचलित हो जाने पर भी, उसमें कुछ न कुछ दोष अवश्य बने रहते हैं। इन्हें कुछ सीमाओं के भीतर उपयोगी बनाया जा सकता है। सामान्यतः निदर्शनों के प्रयोग में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं।

1. विशेष ज्ञान की आवश्यकता: इस पद्धति को प्रत्येक अनुसन्धानकर्ता प्रयोग नहीं कर सकता है। अध्ययनकर्ता को इसका पूर्ण ज्ञान होना चाहिए अन्यथा भयंकर त्रुटियाँ सम्भव हैं।
2. उचित प्रतिनिधित्व की कठिनाई: जब निदर्शन सही प्रतिनिधित्व नहीं कर पाता है तो उसकी विश्वसनीयता तथा प्रामाणिकता कम हो जाती है।
3. अभिनति की सम्भावना: जटिल अध्ययन समस्या तथा दोषपूर्ण निदर्शन पद्धति के कारण सामाजिक सर्वेक्षणों में अध्ययनकर्ता की अभिनति सम्भव हो सकती हैं।
4. निदर्शन पालन की कठिनाई: भौगोलिक पृथकता तथा जनता के असहयोग इत्यादि कारणों से निदर्शनों पूर्णतया टिके रहना कठिन होता है।
5. अनिवार्य अनुपयुक्तता: जहाँ इकाइयों में सजातीयता न हो, उनमें परिवर्तनशीलता हो, संख्या घटती-बढ़ती रहती हो, उनमें परस्पर कोई स्थायी सम्बन्ध न हो, जहाँ अधिक परि-शुद्धता चाहिए या निदर्शन से पक्षपात सम्भव हो यह पद्धति उपयोगी नहीं होती है

9.8 सारांश

प्रस्तुत इकाई में निदर्शन की भूमिका एवं महत्ता के बारे में बताया गया है। निदर्शन का प्रयोग आंकडों को व्यवस्थित तथा वैज्ञानिक बनाने हेतु किया जाता है। निदर्शन के द्वारा कम समय तथा कम लागत में विश्वसनीय तथा प्रमाणिक आंकडें प्राप्त हो जाते हैं।

9.9 अभ्यास प्रश्न

1. निदर्शन क्या है इसकी विशेषताओं को समझाइये |
2. निदर्शन को परिभाषित कीजिए एवं सम्भाविता निदर्शन के प्रकारों की विवेचना कीजिए |
3. निदर्शन के गुण तथा दोष बताइये ?

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ

- R.L.Acoff, The Design of Social Research., University of Shicago Press.
- P.V.Young., Sceinentific Social Servey and Research.
- C. A Moser, Survey Methods in Social Investigation, Heinemann, London, 1961
- G.A.Lundberg, Social Research, 1951.

- Goode and Hatt, Methods in Social Research, Mc Graw Hill Company Inc. NewYork 1952.

इकाई-10

तथ्य संकलन के स्रोत

इकाई की रुपरेखा :

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 तथ्य संकलन के स्रोत (Sources of Data Collection)

10.3 तथ्य संकलन के स्रोतों का महत्त्व

10.4 तथ्य संकलन के विभिन्न स्रोतों

10.5 सारांश

10.6 अभ्यास प्रश्न

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्य संकलन के स्रोत के अर्थ को जान सकेंगे।
- तथ्य संकलन के स्रोत के महत्व को समझ सकेंगे।
- तथ्य संकलन के स्रोत के प्रकार को समझ सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन के स्रोत का अर्थ, महत्व तथा प्रकार के बारे में बतया गया है। सामाजिक विज्ञान के विषयों में आकडों को एकत्र करने हेतु तथ्य संकलन की आवश्यकता पडती है। तथ्य संकलन के द्वारा ही हमें किसी अध्ययन विषय से संम्बन्धित आंकडे प्राप्त होते हैं अतः वैज्ञानिक बनाने हतु तथ्य संकलन की महती भूमिका है।

10.2 तथ्य संकलन के स्रोत (Sources of Data Collection)

किसी भी सर्वेक्षण या शोध के लिए आँकड़ों का संकलन नितान्त आवश्यक है। जब तक शोध-विषय से सम्बन्धित तथ्यों को निश्चित प्रविधियों से काम में लेते हुए एकत्रित नहीं किया जायेगा, तब तक शोध के आधार पर कोई निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते और न ही नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है। आँकड़ा संग्रह शोध प्रक्रिया में महत्वपूर्ण चरण है। समाज विज्ञानों के अन्तर्गत आँकड़ों को एकत्रित करने की आवश्यकता का अनुभव उस समय होता है जब हम तथ्यों के आधार पर इनका विश्लेषण एवं विवेचन करते हुए सामाजिक वास्तविकता के सन्दर्भ में सही परिणाम प्राप्त करना चाहते है।

सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य अनुसंधान प्ररचना के निर्माण के पश्चात् आँकड़ों के संकलन का होता है। शोधकर्ता का मुख्य लक्ष्य ऐसी तथ्य सामग्री का संकलन करना है जो उसकी उपकल्पनाओं का या तो समर्थन करती हों या पहले से बनाई गई उपकल्पना को अस्वीकार करती हों। इसलिए

सामान्यतः विभिन्न शोधकर्ताओं के लिए यह आवश्यक है कि वह अपनी उपकल्पनाओं में पाये जाने वाले सभी चरों की एक सूची तैयार करे तथा यह निर्धारित करे कि इन चरों से सम्बन्धित आँकड़ों को किन स्रोतों से उपलब्ध एवं संकलित किया जा सकता है।

आँकड़ों के संकलन के लिए शोधकर्ता मे अवलोकन की चेतना का होना अति आवश्यक होता है, क्योकि शोधकर्ता विभिन्न प्रविधियों का प्रयोग करते हुए सूचनाएँ एकत्रित करता है। शोधकर्ता तथ्यों के अन्तर्गत ऐसी सूचनाओं को सम्मिलित करता है जो अवलोकन के योग्य हों और जिन्हें लिखित रूप में रखा जा सकता हो। किसी भी शोध में तथ्य सामग्री के महत्व को कम करके नही आँका जा सकता, वे अनुसंधान के अन्तरंग भाग है, लेकिन वे स्रोत भी समान रूप से महत्वपूर्ण हैं, जहाँ से एक शोधकर्ता समस्या के विश्वसनीय अध्ययन के लिए सूचना संग्रहीत करता है। तथ्य सामग्री की विश्वसनीयता विश्वसनीय स्रोतों पर निर्भर है जो कि शोधकर्ता के बोझ को महत्वपूर्ण रूप से हल्का कर देते हैं। उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि तथ्य का तात्पर्य ऐसी सभी सूचनाओं, सामग्री एवं आँकडों से है जो कि क्षेत्रीय स्रोत (Field Sources) और प्रलेखीय स्रोत (Documentary Sources) के माध्यम से प्राप्त किए जाते हैं।

तथ्यों के स्रोत का तात्पर्य यह है कि आँकड़ों का संकलन किन स्रोतों एवं विधियों के माध्यम से किया गया है । तथ्य संकलन के स्रोतों एव विधियों के चयन में विशेष सावधानी की आवश्यकता है । यदि तथ्य विश्वसनीय नहीं हुए तो सम्पूर्ण शोध कार्य निरर्थक हो सकता है, अतः तथ्य संकलन के स्रोत एवं विधि को शोधकर्ता को भली-भाँति समझ लेना चाहिए जिससे शोध की गुणवत्ता बनी रहे।

सामाजिक शोध का विषय चूँकि मानव या मानव समूह से सम्बन्धित होता है जिसे शोधकर्ता अपनी सुविधानुसार या आवश्यकतानुसार नियंत्रित नही कर सकता, अतः उसको तीन तरीकों का उपयोग सूचना प्राप्त करने के लिए करना आवश्यक है जिनका उल्लेख नीचे किया जा रहा है:

(1) शोधकर्ता व्यक्ति, समूह या समुदाय से प्रत्यक्ष वार्तालाप करे और विषय या समस्या के सम्बन्ध में उनके विचारों, प्रतिक्रियाओं को जानने का प्रयास करे।

(2) शोध विषय से सम्बन्धित व्यक्ति, समूह या समुदाय के क्रियाकलापों, व्यवहारों का प्रत्यक्ष रूप से अवलोकन करे और इसी के आधार पर प्राप्त सूचनाओं को संकलित करे।

(3) शोध-कार्य के समय उन दस्तावेजों, तथ्यों या सूचनाओं का उपयोग अपनी आवश्यकतानुसार करे जो किसी अन्य अध्ययन या शोध हेतु एकत्रित किये गये थे।

आँकड़ों के संकलन के उपर्युक्त तरीकों को विभिन्न विद्वानों ने मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया हैः पहला क्षेत्रीय स्रोत (Field Source)और दूसरा प्रलेखीय स्रोत (Documentary Source)।

10.3 तथ्य संकलन के स्रोतों का महत्व (Importance of Sources of Data Collection)

संकलित सामग्री या आँकड़े यद्यपि अपनी प्रारम्भिक अथवा मौलिक अवस्था में मिले-जुले रूप में होते हैं अतः कारण प्रभाव जानने एवं निष्कर्षों को प्रमाणित करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं। वास्तव मे, तथ्य ही वह मार्ग हैं जिनकी सहायता से शोध को एक विशिष्ट स्वरूप प्राप्त हो सकता है। तथ्यों के संकलन का महत्व निम्नलिखित बिन्दुओं से समझा जा सकता है:

(1) सामाजिक शोध का वास्तविक प्रारम्भ आँकड़ों के संकलन से होता है जिसका वर्गीकरण एवं व्याख्या करने से महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा सकते हैं। जब कभी भी किन्ही

तथ्यों की परीक्षा अथवा पुनर्परीक्षण करने की आवश्यकता महसूस की जाती है तब पुनः नये तथ्यों को संकलित करना आवश्यक हो जाता है। इसका तात्पर्य है कि कार्य शुरू करने से लेकर अन्त तक किसी न किसी रूप में सामग्री की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है और इन्ही आँकड़ों के द्वारा विषय से सम्बन्धित प्रवृत्तियों को ज्ञात किया जाता है।

(2) संकलित तथ्यों के द्वारा ही किसी समस्या अथवा घटना के कारणों एवं परिणामों को ज्ञात किया जा सकता है। प्रत्येक समस्या अथवा घटना का कोई न कोई कारण अवश्य होता है जिसे शोधकर्ता एकत्रित आँकड़ों की सहायता से ही समझ सकता है।

(3) आँकड़ों के संकलन के लिए शोधकर्ता को अध्ययन समूह अथवा समुदाय के सामान्य जनजीवन में प्रवेश करना पड़ता है। अतएव वह जीवन के साधारण तथा विशेष दशाओं से व उनके स्वाभाविक अथवा वास्तविक रूप से परिचित हो जाता है।

(4) संकलित आँकड़ें मात्र विभिन्न घटनाओं के मध्य कार्य-कारण सम्बन्ध ज्ञात करने में ही सहायक नहीं होते बल्कि इनके आधार पर समस्याओं का समाधान करना भी सम्भव हो जाता है।

(5) तथ्य संकलन द्वारा विभिन्न घटनाओं तथा अनेक तथ्यों की जानकारी हो जाने पर उनमें तुलना भी की जा सकती है। एक ही समय की अनेक परिस्थितियों के अन्तर्गत भी विभिन्न तथ्यों की तुलना की जा सकती है अथवा समयानुसार एक ही समूह की दशाओं में भी तुलना करना सम्भव हो सकता है।

(6) एक ही क्षेत्र में समय-समय पर तथा एक ही समय पर विभिन्न क्षेत्रों में आँकडों का संकलन करने से सामाजिक परिवर्तन एवं उनकी प्रकृति का ज्ञान हो जाता है।

(7) अनेक आँकड़ों की जानकारी जो सर्वप्रथम संकलन के दौरान ही प्राप्त होती है, विभिन्न सामाजिक, विशेषकर विघटनकारी समस्याओं को दूर करने में सरकारी प्रशासन को सहायक सिद्ध होती है।

(8) राष्ट्र का सम्पूर्ण कार्यक्रम प्रारम्भिक छानबीन, सर्वेक्षणों द्वारा प्रस्तुत प्राथमिक सूचनाओं पर आधारित होता है। राष्ट्रीय योजना आयोग स्वयं ही किसी परियोजना को लागू करने से पूर्व सम्बन्धित समस्या में रूचि रखता है और परिणामस्वरूप ही विकास कार्यो की रूपरेखा बनाता है।

10.4 तथ्य संकलन के स्रोत (Sources of Data Collection)

सूचनायें एकत्रित करने के लिए साधन को आँकड़ों के संकलन का स्रोत माना जाता है। सामान्य रूप से यह शोधकर्ता पर निर्भर है कि वह किन-किन स्रोतों से अपनी समस्या से सम्बन्धित सामग्री का संकलन करे। शोध की आवश्यकता एवं उद्देश्यों पर भी यह निर्भर करता है कि कौन से स्रोत आँकड़ों के लिए आवश्यक है । आँकड़ों के संकलन के स्रोत जितने अधिक विश्वसनीय एवं सुलभगे, सामग्री के संकलन में उतनी ही अधिक सफलता मिलेगी।
मुख्यतः आँकड़ों के संकलन के प्रमुख स्रोत दो माने जाते हैं

(1) क्षेत्रीय या प्राथमिक स्रोत (Field or primary Sources)

क्षेत्रीय स्रोत वे स्रोत होते जो प्राथमिक स्तर पर तथ्यों के संकलन में सहायक होते हैं। पी. एच. मान के अनुसार, ''प्राथमिक स्रोत वे स्रोत होते हं जो प्रथम बार सूचनायें प्रदान करते हैं। इसका तात्पर्य है

कि ये तथ्य संकलित करने वाले लोगों द्वारा प्रस्तुत किए तथ्यों का मौलिक स्वरूप होते हैं।'' प्राथमिक स्रोत को और अच्छे ढंग से समझने के लिए हम कह सकते हैं कि जब शोधकर्ता स्वयं अपने अध्ययन क्षेत्र या समग्र की अध्ययन इकाइयों से सम्पर्क करके तथ्य एकत्रित करता है, वहाँ इसे तथ्य संकलन का प्राथमिक स्रोत कहा जाता है। इसके अन्र्तगत शोधकर्ता को अपने अध्ययन क्षेत्र में कुशलतापूर्वक कार्य करना पड़ता है और उसी दौरान अवलोकन, प्रश्नावली, साक्षात्कार अनुसूची आदि प्रविधियों के माध्यम से अपने शोध से सम्बन्धित सूचनाओं को संग्रहीत करना होता है। इसके अन्र्तगत जीवित व्यक्ति सम्मिलित होते हैं जिन्हे लम्बी अवधि के दौरान सामाजिक परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तनों के विषय में पर्याप्त ज्ञान होता है एवं जिनका सामाजिक परिस्थितियों से घनिष्ठ सम्पर्क रह चुका होता है। ये व्यक्ति वर्तमान परिस्थितियों के साथ-साथ अवलोकन योग्य प्रवृत्तियों एवं महत्वपूर्ण घटनाओं का समुचित वर्णन प्रस्तुत करने की भी क्षमता रखते हैं। पी. वी. यंग. ने क्षेत्रीय स्रोत की इकाइयों को वैयक्तिक स्रोत या प्रत्यक्ष स्रोत (Direct Source) के नाम से व्यक्त किया है। इसमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं:

(अ) अवलोकन (Observation)

यह तथ्यों को एकत्रित करने का प्रमुख स्रोत है। इसमें अनुसंधानकर्ता स्वयं अध्ययन क्षेत्र में जाकर, सम्बन्धित घटनाओं एवं व्यवहारों का अध्ययन करता है। यह काम वह घटनाओं एवं कार्यक्रमों में आंशिक रूप से भाग लेकर अथवा मात्र दर्शक के रूप में भाग लेकर कर सकता है। इस प्रकार सहभागिता को दृष्टिगत करते हुए प्रत्यक्ष अवलोकन के तीन रूप सामने आते हैं, जिन्हे सहभागी अवलोकन, अर्द्धसहभागी और असहभागी अवलोकन कहते हैं।

(i) सहभागी अवलोकन (Participatory Observation)

इसमें अध्ययनकर्ता स्वयं उस घटना में सम्मिलित होकर पूर्णरूप से भाग लेता या सहभागिता करता है तथा उस स्थिति में अपने अन्य साथियों जैसा ही आचरण एवं व्यवहार करता है,वहाँ वह अन्य भागीदार के समान होता है। इसमें शोधकर्ता अन्य साथियों से घुल-मिल जाता है और अपने उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सहजता से सूचनाओं को संग्रहीत करता रहता है।

(ii) अर्द्ध-सहभागी अवलोकन (Quasi-Participatory Observation)

इसमें अवलोकनकर्ता पूर्णतया भागीदार न बनकर, आवश्यकतानुसार कुछ सीमा तक स्वयं भी सम्मिलित हो जाता है तथा कुछ दशाओं में वह अपने को पृथक रखता है ताकि वह अन्य व्यक्तियों के व्यवहार को समझ सके।

(iii) असहभागी अवलोकन (Non Participatory Observation)

इसमें सर्वेक्षणकर्ता घटनाओं अथवा कार्यक्रमों में स्वयं किसी भी स्तर पर अथवा किसी भी सीमा तक सम्मिलित नही होता है, बल्कि उसकी मात्र अज्ञात दर्शक की भूमिका बनी रहती है।

(ब) साक्षात्कार (Interview)

इस विधि के माध्यम से शोधकर्ता स्वयं सूचनादाता से प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचनाए एकत्रित करता है। चूँकि सूचनादाताओं का स्थानीय समस्याओं से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है तथा समस्या से सम्बन्धित अन्य स्रोतों का भी ज्ञान होता है, अतः उनसे निजी स्तर पर वार्तालाप द्वारा

विश्वसनीय एवं लाभप्रद जानकारी प्राप्त की जा सकती है। विचार, मनोवृत्ति एवं भावनाओं से सम्बन्धित विषयों की जानकारी के लिए साक्षात्कार विशेष उपयोगी है। यह मौखिक अन्वेषण (oral communication) का प्रमुख तरीका है।

(स) अनुसूची (Schedule)

अनुसूची भी साक्षात्कार की भाँति मौखिक (oral) अन्वेषण का एक तरीका है जिससे शोधकर्ता सूचनादाता के पास जाकर समस्या या विषय से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तरों को स्वयं भरता है। इसमें प्रश्न तथा रिक्त सारिणियाँ दी हुई होती हैं। अनुसूची का उद्देश्य सूचनादाताओं से उत्तर प्राप्त कर, शोध में वैषयिकता लाना है। यह पद्धति अत्यन्त लाभप्रद एवं उपयोगी है। इसमें प्रश्नों को तोड़-मरोड़ या घटा-बढ़ाकर नहीं पूछा जा सकता, प्रश्नों का क्रम एक समान रहता है। प्रश्नों के लिखित रूप में होने के कारण शोधकर्ता को आवश्यक रूप से इन्हें याद नहीं करना पड़ता है। अनुसूची द्वारा प्राप्त सूचना निष्पक्ष होने के कारण अत्यन्त उपयोगी होती है। अनुसूची द्वारा अशिक्षित लोगों से भी सूचना प्राप्त करने में कठिनाई नहीं रहती है, कुछ स्थानीय भाषा के कारण थोड़ी कठिनाई का आना स्वाभाविक है जिसका निवारण वहाँ के स्थानीय लोगों (जो पढ़े-लिखे हैं) के द्वारा किया जा सकता है।

(द) प्रश्नावली (Questionnaire)

यदि अध्ययन क्षेत्र विस्तृत हो तथा शोधकर्ता के लिए यह सम्भव न हो कि अध्ययन की प्रत्येक इकाई से सम्पर्क किया जाये, तब वह प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक तथ्यों का संकलन करता है। प्रश्नावली में शोधकर्ता विषय या समस्या से सम्बन्धित व्यक्तियों को डाक द्वारा या किसी अन्य माध्यम से प्रश्नावली भेज देता है और उत्तरों की प्राप्ति इन्हीं माध्यमों से करता है। विस्तृत क्षेत्र से सूचनाएँ एकत्र करने के लिए प्रश्नावली एक सरल एवं सुगम साधन है।

(2) प्रलेखीय या द्वितीयक स्रोत (Documentary or secondary Sources)

सामग्री के प्रलेखीय स्रोतों का आशय उन स्रोतों से है, जिनसे प्राप्त सूचनाएँ प्रथम स्तर की नहीं होतीं अर्थात् उनका संग्रहण किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पहले किया हुआ होता है। द्वितीयक स्रोतों की सामग्री प्रायः प्रकाशित, अप्रकाशित रूप में होती है जिनमें शोधकर्ता को अन्य उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। प्रलेखीय स्रोतों के अन्तर्गत प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थ, सर्वेक्षण रिपोर्ट, यात्रा वर्णन, पत्र, डायरी, संस्मरण, ऐतिहासिक प्रलेख, सरकारी आँकड़े आदि मुख्य हैं, सुविधा की दृष्टि से उपर्युक्त स्रोतों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है:

(अ) व्यक्तिगत प्रलेख (Personal Documents)

सामान्यतया यह लिखित सामग्री होती है जिसमें व्यक्तिगत सम्बन्धों एवं सामाजिक गतिविधियों के बारे में एक विशेष एकाँगी दृष्टिकोण से विचार व्यक्त किये जाते हैं। इसमे लिखने वाले का कोई विशेष शोधात्मक दृष्टिकोण नहीं होता। व्यक्तिगत प्रलेखों में सामान्यतः लिखने वाला अपनी एवं सामाजिक आवश्यकता को देखते हुए अपने विचार के आधार पर व्यक्तियों एवं सामाजिक घटनाओं पर अपने दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति करता है।

व्यक्तिगत प्रलेख सामान्यतः उच्च कोटि के विद्वानों, दार्शनिक, राजनेताओं, साहित्यकारों, कवियों एवं अन्य कलाकारों द्वारा लिखे जाते हैं एवं इन प्रलेखों में विस्तृत जानकारी होने के कारण शोधकर्ता के सामने यह प्रश्न रहता है कि वह किस-किस सामग्री का अर्थपूर्ण ढंग से अपने शोध के लिए

उपयोगी समझकर प्रयोग कर सकता है। चूँकि इन प्रलेखों में लेखक के व्यक्तिगत अनुभव की कमी होती है अतः उनके आन्तरिक संसार का ज्ञान शोधकर्ता को सुगमता से हो जाता है और वह यह निष्कर्ष निकालने में अधिक सफल होता है कि अमुक घटना के पीछे लेखक का दृष्टिकोण क्या था। मोजर ने लिखा है कि ''व्यक्तिगत प्रलेख अपने बिना माँगे रूप में मूल्यावान होते हैं। किसी विशिष्ट सामाजिक सर्वेक्षण में भी वे शोधकर्ता को प्रारम्भिक खोज एवं परिकल्पना निर्माण के साधन में रूप के उसका मार्ग दर्शन करते हैं। व्यक्तिगत प्रलेखों के मुख्य स्रोत निम्नलिखित हैं:

(i) जीवन इतिहास (Life History)

जीवन इतिहास वस्तुतः विस्तारपूर्वक लिखी गयी लेखक की आत्मकथा होती है एवं इस आत्मकथा में लेखक के व्यक्तिगत जीवन एवं उसके आन्तरिक एवं बाह्य संसार की झलक दिखाई देती है। जीवन इतिहास का आशय किसी व्यक्ति की विस्तृत आत्मकथा से है। यह उन विख्यात व्यक्तियों का लिखा जाता है जिनके जीवन का सामाजिक घटनाओं से प्रत्यक्ष समबन्ध होता है। जीवन इतिहास के अध्ययन में शोधकर्ता को अनेक ऐसी बातों का पता होता है जिन्हें किसी अन्य तरीके से प्राप्त नहीं किया जा सकता, जीवन इतिहास के सामान्यतया दो रूप देखने को मिलते हैं प्रथम- आत्मकथा जिसे व्यक्ति अपने विषय में स्वयं लिखना है तथा द्वितीय- जीवन चरित्र जिसे कोई किसी अन्य व्यक्ति की जीवन सम्बन्धी घटनाओं के बारे में लिखता है। इसमें सामान्यतः प्रसिद्ध व्यक्तियों के जीवन चरित्र ही लिखे जाते हैं।

(ii) डायरी (Diary)

डायरी में दैनिक घटनाओं तथा उनके प्रति व्यक्तिगत प्रक्रियाओं का उल्लेख रहता है। इसमें व्यक्ति अपने विषय में नहीं लिखता वरन् उन लोगों के विषय में भी लिखता है जो उनके सम्पर्क में आते हैं। गोपनीय तथा अज्ञात तथ्यों को एकत्र करने की दृष्टि से डायरियों का विशेष महत्व होता है।

(iii) पत्र (Letters)

द्वितीयक स्रोत का एक महत्वपूर्ण साधन व्यक्तिगत पत्र भी होते हैं। पत्र के माध्यम से लेखक के वास्तविक विचार, भावना एवं दृष्टिकोण का पता आसानी से लग जाता है। सामाजिक जीवन जैसे विवाह, प्रेम, तलाक अथवा यौन सम्बन्धों पर लिखे पत्र वास्तविकताओं का चित्रण करने के साथ-साथ राजनीतिज्ञों द्वारा लिखे गये गुप्त पत्र देश की विदेश नीति का रहस्योद्घाटन करते हैं। राष्ट्राध्यक्षों के मध्य पत्र व्यवहार से पता चल सकता है कि देशों के आपसी सम्बन्ध कैसे रहे हैं, मधुर अथवा कटु। पत्र शिक्षण एवं प्रशिक्षण के भी अच्छे साधन हैं।

(iv) संस्मरण (Memories)

मनुष्यों द्वारा अपने जीवन की अनेक घटनाओं आदि का संस्मरण बहुधा शोध हेतु सूचनायें प्रदान करता है। द्वितीयक स्रोत की जानकारी प्राप्त करने का एक और महत्वपूर्ण आधार संस्मरण है। संस्मरण किसी देश एवं समाज की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक परिस्थितियों के बारे में वास्तविक चित्रण प्रस्तुत करते हैं। ह्वेनसाँग, फाह्यान आदि का संस्मरण आज भी भारतीय इतिहास की कुछ घटनाओं का चित्रण अपने ढंग से करता है जिससे यह एक वास्तविक एवं विश्वसनीय स्रोत का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाते हैं।

(ब) सार्वजनिक प्रलेख (Public Documents)

सार्वजनिक प्रलेख सार्वजनिक संस्था या समाज, जाति इत्यादि के परिपेक्ष्य में उनके क्रियाकलापों के रिकार्डों, सरकारी दफ्तरों के दस्तावेज आदि के रूप में हो सकते हैं। यह प्रलेखीय स्रोतों का दूसरा महत्वपूर्ण स्रोत है। किसी सार्वजनिक हित को ध्यान में रखकर सरकारी या गैर सरकारी संस्था के द्वारा सार्वजनिक प्रलेख तैयार किये जाते है कभी-कभी व्यक्तिगत स्तर पर भी तथ्य संकलित किये जाते है और यदि उन्हें सार्वजनिक उपयोग के लिए काम में लाया जाना हो तो ऐसी सूचनाओं को सार्वजनिक प्रलेख के अन्तर्गत रखते हैं। सार्वजनिक प्रलेखों को सामान्यतः दो भागों में विभाजित किया जाता है।

(1) प्रकाशित प्रलेख (Published Documents)

सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा प्रतिवर्ष कई तथ्य प्राथमिक रूप से संकलित किये जाते हैं जिन्हें सार्वजनिक उपयोग हेतु प्रकाशित करा दिया जाता है तो उनके लिए यह तथ्य प्रकाशित प्रलेखों के रूप में तथ्य संकलन का प्रलेखीय स्रोत बन जाते हैं। प्रकाशित प्रलेखों में शोध संस्थाओं के प्रतिवेदन, व्यक्तिगत शोधकर्ताओं के प्रतिवेदन, समितियों एवं आयोगों के प्रतिवेदन, व्यावसायिक संस्थाओं एवं परिषदों के प्रकाशन, अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के प्रकाशन, पत्र, पत्रिकाएं, सरकारी बजट, जनगणना प्रतिवेदन आदि आते हैं।

(2) अप्रकाशित प्रलेख (Unpublished Documents)

सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा एकत्रित सूचनाओं को उनकी गोपनीयता बनाये रखने के उद्देश्य से प्रकाशित नहीं की जाती हैं, जबकि कुछ सूचनायें आर्थिक या अन्य कारणों से प्रकाशित नहीं हो पाती हैं। प्रतिरक्षा मंत्रालय से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचनाओं की गोपनीयता को बनाये रखने के उद्देश्य से उनका प्रकाशन नहीं कराया जाता है। विभिन्न गोपनीय सूचनाओं को रिकार्ड या दस्तावेज के रूप में सुरक्षित रखा जाता है, प्रकाशित नहीं कराया जाता। इस प्रकार की सामग्री को अभिलेख कहा जाता है। ये अप्रकाशित दस्तावेज भी प्रलेखीय स्रोतां ॊ के अन्र्तगत आते हैं, इनमे सामान्यतः शोधकर्ताओं के प्रतिवेदन, पांडुलिपियाँ तथा अप्रकाशित लोकगीत, लोक संस्कृति, शिला-लेख, लोक गाथाएँ आदि सम्मिलित हैं।

10.5 सारांश

तथ्य संकलन के स्रोत वे होते हैं जो किसी अध्ययन विषय के बारे में पर्याप्त सूचनाएं देते हैं
क्षेत्रीय स्रोतों से आशय ऐसे स्रोतों से है जिनसे प्रत्यक्ष सूचनाएं प्राप्त करते हैं प्रलेखीय स्रोतों से आशय ऐसे स्रोतों से है जिनसे परोक्ष रूप से सूचनाएं प्राप्त करते हैं।

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. तथ्य संकलन के मुख्य स्रोत कौन-कौन से हैं? विवेचना करें |
2. तथ्य संकलन के स्रोत से आप क्या समझते हैं ? इसके प्रकार बताइये |

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- R.L.Acoff, The Design of Social Research.,University of Shicago Press.

- P.V.Young., Sceinentific Social Servey and Research.
- C. A Moser, Survey Methods in Social Investigation, Heinemann, London,1961
- G.A.Lundberg, Social Research,1951.
- Goode and Hatt, Methods in Social Research,Mc Graw Hill Company Inc. NewYork 1952.

इकाई -11

तथ्य संकलन के उपकरण: प्रश्नावली तथा साक्षात्कार अनुसूची

इकाई की रूपरेखा :

11.0 उद्देश्य
11.1 प्रस्तावना
11.2 तथ्य संकलन के उपकरण (Tools of Data Collection)
    11.2.1 प्रश्नावली (Questionnaire)
    11.2.2 प्रश्नावली की विशेषताएँ
    11.2.3 प्रश्नावली के प्रमुख उद्देश्य
11.3 साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule)
    11.3.1 अनुसूची की विशेषताएँ
    11.3.2 अनुसूची ए उद्देश्य
11.4 प्रश्नावली और साक्षात्कार अनुसूची में अंतर
11.5 सारांश
11.6 अभ्यास प्रश्न
11.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्य संकलन के उपकरण के रूप में प्रश्नावली तथा अनुसूची के बारे में विस्तृत रूप से जान सकेंगे।
- प्रश्नावली एवं साक्षात्कार अनुसूची की अन्तर को समझ सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में प्रश्नावली तथा साक्षात्कार अनुसूची के बारे में बताया गया है। सामाजिक घटनाओं अथवा समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए अध्ययन पद्धति और प्रविधियों का निर्धारण कर लेने के पश्चात् कुछ महत्वपूर्ण उपकरणों का चुनाव कर लेना भी आवश्यक होता है। ताकि तथ्यों को आसानी से एकत्रित किया जा सके। इन उपकरणों के अन्तर्गत प्रश्नावली तथा साक्षात्कार अनुसूची को प्रमुखता से रखा गया है। शोधकर्ता की सफलता बहुत कुछ इन्हीं उपकरणों के चयन पर निर्भर करती है। यदि इन उपकरणों का सही ढंग से चुनाव नहीं हुआ है तो तथ्यों का संकलन पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है तथा शोध का निष्कर्ष निकालना प्रायः कठिन हो जाता है।

11.2 तथ्य संकलन के उपकरण

आँकड़ों के संकलन में उपकरण का तात्पर्य किन्ही भी भौतिक साधनों से होता है जो तथ्यों के संग्रह तथा उनका विश्लेषण करने के क्षेत्र में शोधकर्ता की कुशलता को बढ़ाने में सहायक होते हैं। इसका तात्पर्य है कि सामाजिक घटनाओं अथवा समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए अध्ययन पद्धति और प्रविधियों का निर्धारण कर लेने के पश्चात् कुछ महत्वपूर्ण उपकरणों का चुनाव कर लेना भी आवश्यक होता है। जिस प्रकार एक कारीगर को किसी वस्तु का सफलतापूर्वक निर्माण करने के लिए कुछ विशेष औजारों की आवश्यकता होती है। ठीक उसी प्रकार शोधकर्ता की सफलता की बड़ी सीमा तक तथ्य संकलन के लिए कुछ विशेष उपकरणों के चुनाव और उनके कुशल प्रयोग पर निर्भर होती है। यदि शोधकर्ता द्वारा उपयुक्त उपकरणों का प्रयोग नही किया जाता है तब तथ्यों का संग्रह अधूरा रह जाता है अथवा उनके आधार पर वैज्ञानिक निष्कर्ष निकालना प्रायः दुर्लभ हो जाता है।

उपकरणों का प्रयोग का स्तर

शोधकर्ता द्वारा उपकरणों का प्रयोग प्रायः दो स्तरों पर किया जाता हैः--

(1) आँकड़ों का संकलन करने के स्तर पर

इस स्तर पर शोधकर्ता अवलोकन कार्ड, चैकलिस्ट प्रश्नावली, साक्षात्कार निर्देशिका, अनुसूची, पर्यवेक्षण निर्देशिका, प्रक्षेपण प्रविधियाँ, डायरियों तथा नोट बुकों जैसे प्रपत्रों का उपयोग करता है।

(2) आँकड़ों का संकलन प्रक्रियाकरण स्तर पर

इस स्तर पर शोधकर्ता सामान्यतया कम्प्यूटर, कोडिंग शीट, संगणक तथा गणक मशीनों का उपयोग उपकरण के रूप में करता है। सामान्यतः शोधकर्ता द्वारा शोधकार्य को पूरा करने में सर्वाधिक प्रश्नावली और साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया जाता है।

11.2.1 प्रश्नावली :अर्थ एवं परिभाषाएं (Meaning and Definitions of Questionnaire)

प्रश्नावली का उद्देश्य अध्ययन-विषय से सम्बन्धित प्राथमिक तथ्य को एकत्र करना है। प्रश्नावली का अर्थ उस सुव्यवस्थित तालिका से है जो विषय के सम्बन्ध में सूचनाएँ प्राप्त करने में सहयोग देती है। सामान्यतया किसी विषय से सम्बन्धित व्यक्तियों से सूचना प्राप्त करने के लिए बनाए गए प्रश्नों की सुव्यवस्थित सूची को प्रश्नावली की संज्ञा दी जाती है। इसे डाक द्वारा भेज कर सूचना प्राप्त की जाती है।

गुडे तथा हाट **(Goode & Hott)** के शब्दों में, ''सामान्य रूप से, प्रश्नावली शब्द प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने की उस प्रणाली को कहते हैं जिसमें कि एक पत्रक का प्रयोग किया जाता है जिसे उत्तरदाता स्वयं भरता है।''

लुण्डबर्ग के शब्दो में, ''मौलिक रूप में, प्रश्नावली प्रेरणाओं का एक समूह है जिसे कि शिक्षित लो के सम्मुख उन प्रेरणाओं के अन्तर्गत उनके मौखिक व्यवहारों का अवलोकन करने के लिए प्रस्तुत किया जाता है।''

बोगार्डस (**Bogardus**) के अनुसार ''प्रश्नावली विभिन्न व्यक्तियों की उत्तर देने के लिए दी गई प्रश्नों की एक तालिका है।''

11.2.2 प्रश्नावली की विशेषताएँ

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर इसकी विशेषताओं को निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता हैः-

(1) प्राथमिक सामग्री प्राप्त करने की अप्रत्यक्ष प्रणाली है।
(2) यह अधिकाँशतः डाक द्वारा भेजी जाती है।
(3) इसे केवल उत्तरदाता स्वयं ही भरता है।
(4) इसका प्रयोग शिक्षित उत्तरदाताओं के लिए किया जाता है।
(5) इसमे प्रश्नों को सरल एवं स्पष्ट रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
(6) प्रश्नावली में प्रश्नों अथवा पदों का होना।
(7) यह व्यक्ति तथा उसके व्यवहार का अध्ययन करने में सहायक है।

11.2.3 प्रश्नावली के प्रमुख उद्देश्य

प्रश्नावली के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं:--

1. विस्तृत, विशाल, विविध एवं व्यापक रूप में बिखरे हुए लोगों से सूचनाएं संकलित करना,
2. प्रामाणिक तथा विश्वसनीय सूचनाएं संकलित करना,
3. सूचनाओं का व्यवस्थित संकलन,
4. वैषयिक अध्ययन के लिए,
5. अनावश्यक तथ्यों को छोडना,
6. कम खर्च
7. संख्यात्मक अनुमापन
8. एक साथ तथा शीघ्र सूचनाओं का संकलन

11.3 साक्षात्कार अनुसूची (Interview Schedule)

अनुसूची का अर्थ

वास्तव में अनुसूची अनेक प्रश्नों की एक ऐसी लिखित सूची है जिसे लेकर शोधकर्ता उत्तरदाता के पास स्वयं जाता है और विभिन्न प्रश्नों को पूछकर स्वयं ही उनके उत्तरों का आलेखन करता है। तथ्य-सामग्री को संकलित करने का यह सर्वोत्तम उपकरण है। अनुसूची प्रश्नों की एक लिखित सूची है जो अध्ययनकर्ता द्वारा अध्ययन विषय को ध्यान मे रखकर बनाई जाती है। इसमें अनुसंधानकर्ता स्वयं उत्तरदाता के पास जाकर आमने सामने की स्थिति में उत्तरदाता से पूछकर प्रश्नों के उत्तर भरता है ।

अनुसूची की परिभाषाएं

गुडे तथा हॉट (Goode & Hott) के अनुसार, ''अनुसूची उन प्रश्नों के एक समूह का नाम है जो साक्षात्कारकर्ता द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति से आमने-सामने की स्थिति में पूछे और भरे जाते हैं।''

बोगार्ड्स के शब्दों में, ''अनुसूची तथ्यों को प्राप्त करने के लिए एक औपचारिक पद्धति का प्रतिनिधित्व करती है जो वैषयिक स्वरूप में है और जो सरलता से पता लगाने योग्य है। अनुसूची, अन्वेषणकर्ता स्वयं द्वारा भरी जाती है।

सी. ए. मोजर के अनुसार, ''चूँकि यह साक्षात्कारकर्ताओं द्वारा संचलित होती है, यह स्पष्टतया एक औपचारिक प्रलेख हो सकती है जिसमें आकर्षण की बजाय क्षेत्र संचालन की कुशलता में कार्यशील विचार है।''

11.3.1अनुसूची की विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से अनुसूची की निम्नलिखित विशेषताएँ परलक्षित होती हैं:--

1) अनुसूची अध्ययन-समस्या से सम्बन्धित शीर्षक, उप-शीर्षक एवं प्रश्नों से सम्बन्धित एक व्यवस्थित तथा वर्गीकृत सूची होती है।
2) इसे एक प्रपत्र अथवा फार्म के रूप में छपवाया जाता है जिसमें क्रमबद्ध रूप से प्रश्न रखे जाते हैं।
3) इसे भरने के लिए अध्ययनकर्ता उत्तरदाता से प्रत्यक्ष व्यक्तिगत एवं आमने-सामने का सम्पर्क करता है।
4) इसे अध्ययनकर्ता स्वयं भरता है न कि उत्तरदाता।
5) इसमें साक्षात्कार, अवलोकन एवं प्रश्नावली तीनों विधियों की विशेषताओं का समन्वय पाया जाता है।
6) अनुसूची का प्रयोग शिक्षित एवं अशिक्षित दोनों ही प्रकार के उत्तरदाताओं के लिए किया जाता है।
7) अनुसूची में प्रश्नों को एक निश्चित क्रम में रखा जाता है और उसी क्रम में पूछा जाता है उनमें क्रम परिवर्तन की छूट नहीं होती है।
8) इसमें घटनाओं का अवलोकन भी होता है।
9) अनुसूची अध्ययनकर्ता पर नियन्त्रण भी रखती है जिससे कि वह अध्ययन विषय से परे न हटे।
10) इसका प्रयोग छोटे क्षेत्र के अध्ययन के लिए ही विशेष रूप से किया जाता है, किन्तु अपवाद रूप में बड़े क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

11.3.2 अनुसूचीके उद्देश्य

1. प्रमाणिक उत्तर पाने के लिए, अनुसंधानकर्ता स्वयं व्यक्तिगत रूप में व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित करता है।
2. अनुसूची का उद्देश्य विषय से सम्बन्धित प्रश्नों का क्रमबद्ध उत्तर प्राप्त करना होता है।
3. यह प्रविधि संख्यात्मक सूचनाओं एवं आँकड़ों को एकत्र करने में अधिक उपयोगी है।

11.4 प्रश्नावली और साक्षात्कार अनुसूची में अन्तर (Difference Between Questionnaire and Schedule)

प्रश्नावली और अनुसूची दोनों अनुसंधानमें तथ्यों को एकत्र करने के लिए महत्वपूर्ण उपकरण हैं। यह दोनों उपकरण अनुसंधान कार्य को संचालित करने में सहायता प्रदान करते हैं। इनके मध्य निम्नलिखित अन्तर हैं:

प्रश्नावली	साक्षात्कार अनुसूची
1. यह डाक द्वारा उत्तरदाताओं के पास भेजी जाती है। अध्ययनकर्ता को उस स्थान पर जाने की आवश्यकता नहीं है।	1. अनुसूचियों को डाक द्वारा प्रेषित नहीं किया जाता है। अनुसंधानकर्ता स्वयं अनुसूची को साथ ले जाता है।
2. प्रश्नावली डाक द्वारा उत्तरदाता के पास भेजी जाती है, अतः उत्तरदाता स्वयं उसको भरकर पुनः लौटाता है।	2. अनुसूचियों को शोधकर्ता स्वयं भरता है। वह उत्तरदाताओं से सूचना ग्रहण करके उसको अपनी अनुसूची में भर देता है।
3. प्रश्नावली द्वारा विस्तृत क्षेत्रों से सूचनाएँ आसानी से प्राप्त की जा सकती हैं अतः अधिकाँशतः इसका प्रयोग बड़े-क्षेत्रों में किया जाता है।	3. अनुसूची का प्रयोग विस्तृत क्षेत्र में न कर सीमित क्षेत्र में किया जाता है।
4. प्रश्नावली में निरीक्षण के लिए स्थान नहीं है। चूँकि अनुसंधानकर्ता स्वयं उपस्थित नही होता है, अतः इस पद्धति द्वारा प्राप्त उत्तर भी संक्षिप्त होते हैं।	4. अनुसूची प्रणाली में निरीक्षण को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। अनुसंधानकर्ता स्वयं उस स्थान पर उपस्थित होता है अतः उसे बड़े प्रश्नों का निर्माण करने की आवश्यकता नहीं होती है। तथ्यों को एकत्र करने के साथ-साथ वह तथ्यों का निरीक्षण भी करता जाता है। वह प्राप्त तथ्यों के निरीक्षण द्वारा पुष्टि भी कर सकता है। अतः तथ्यों की प्रामाणिकता का पता आसानी से लगाया जा सकता है।
5. प्रश्नावली प्रणाली के अन्तर्गत सूचनादाताओं की ओर से प्रत्युत्तर, असंतोषजनक होता है। जिन सूचना दाताओं के पास प्रश्नावलियों को भेजा जाता है, उनमें अधिकाँशतः लौटकर नही आती हैं। प्रश्नावलियों को अनुसंधानकर्ता के पास लौटाना सूचनादाताओं पर निर्भर करता है, कुछ आलस्य एवं खर्च के कारण भी प्रश्नावलियों को	5. जहाँ तक प्रत्युत्तर का प्रश्न है, अनुसंधानकर्ता स्वयं, स्थान पर उपस्थित होता है अतः से समस्त जानकारी प्राप्त हो जाती है। वह सूचनादाताओं से अधिक से अधिक सूचना प्राप्त कर अपने रिकार्ड में रखता है।

नहीं लौटाया जाता है।	
6. प्रश्नावलियों के निर्माण के समय प्रत्येक बात को स्पष्ट लिखा जाना आवश्यक है। जहाँ कहीं व्याख्या की आवश्यकता होती है, वहाँ व्याख्या भी दी जाती है ताकि सूचनादाता को प्रश्न के सम्बन्ध में किसी प्रकार की भ्रांति न रहे।	6. अनुसूचियों में प्रत्येक छोटी-छोटी बात को स्पष्ट रूप से लिखने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि अनुसंधानकर्ता स्वयं, स्थान पर मौजूद होता है। संदेह या भ्राँति की स्थिति में वह सूचनादाता को प्रश्न की स्पष्ट व्याख्या नहीं कर सकता है।
7. इस प्रणाली में अनुसंधानकर्ता के सम्बन्ध आमने-सामने के नहीं होते हैं। सूचनादाता उसके व्यक्तित्व, व्यक्तिगत जीवन, उसके दर्शन एवं सिद्धान्तों से बिल्कुल ही अनभिज्ञ होता है। यह केवल उसके बारे में केवल मात्र कल्पनाएँ ही कर सकता है।	7. अनुसूची प्रणाली में अनुसंधानकर्ता के सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से होते हैं। वह अपना सम्पर्क सीधा साधकर वाँछित सूचना प्राप्त कर सकता है।
8. प्रश्नावली प्रणाली का उपयोग केवल शिक्षित व्यक्ति ही कर सकते हैं। इसमें भी एक कठिनाई यह है कि शिक्षित व्यक्तियों का बौद्धिक स्तर अलग- अलग श्रेणी का होता है। कम पढ़े लिखे लोग प्रश्नावली की भाषा शैली को समझ नहीं सकते। यदि वे थोड़ा बहुत समझ भी पाएँगे तो भी उनके द्वारा दिए उत्तर विश्वसनीय नहीं हो सकते। प्रश्नावलियों को स्तर के अनुसार बदला नही जा सकता।	8. इस प्रणाली के अन्तर्गत विभिन्न स्तर के उत्तरदाताओं से सूचनाएँ प्राप्त की जा सकती है। अनुसंधानकर्ता उसके बौद्धिक स्तर की ध्यान में रखते हुए वार्तालाप करेगा। इसमें यह लाभ होता है कि अनुसंधान से सम्बन्धित वास्तविक जानकारी को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।
9. प्रश्नावली प्रणाली में अनुसंधानकर्ता का सम्पर्क प्रत्यक्ष नहीं होता, अतः उसे उत्तरदाताओं द्वारा भेजी प्रश्नावलियों के उत्तर से संतुष्ट होना पड़ता है। कई सूचनादाता लापरवाही से प्रश्नावलियों को भरते हैं। उनकी विशेष दिलचस्पी नहीं होती, अतः उनके मस्तिष्क में जो बातें उस समय आ जाती हैं उन्हें लिख देता है। प्रत्यक्ष सम्बन्ध न होने के कारण, उत्तरदाता कई बातों को छिपा देता है और झूठे ही उत्तर लिख देता है।	9. अनुसूची प्रणाली द्वारा अधिक महत्वपूर्ण एवं गहन सूचनाएँ प्राप्त होती हैं। यदि अनुसंधानकर्ता स्वयं होशियार, अनुभवी एवं बुद्धिमान है तो वह सूचनादाताओं से अपने प्रभाव से गहनतम से गहनतम सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है। अनुसंधानकर्ता के सम्बन्ध प्रत्यक्ष होने के कारण वह उसकी मनोदया, प्रवृत्तियाँ, भावनाओं का अध्ययन करके उसके अनुरूप ही व्यवहार कर, महत्वपूर्ण और उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त कर सकता है।
10.प्रश्नावली प्रणाली में समय अधिक खर्च नहीं होता चाहे अध्ययन क्षेत्र विस्तृत ही क्यों न हो।	10. अनुसंधानकर्ता को एक अनुसंधान क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में जाना होता है, इसमें काफी समय खर्च होता है। यदि अध्ययन क्षेत्र बहुत विस्तृत है

उसे डाक द्वारा विभिन्न स्थानों से सूचनाएँ सुविधा से प्राप्त हो जाती है। वह एक साथ ही प्रश्नावलियों को भेजा है और थोड़े दिनों के अन्तर में विभिन्न क्षेत्रों से सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं। 11. इसमें कम व्यय से सूचनाएँ प्राप्त हो जाती हैं अतः यह अधिक लोकप्रिय है।	तो उसके सामने और ही अधिक कठिनाई उत्पन्न होती है। 11. अनुसंधानकर्ता को हर स्थान पर जाना पड़ता है, अतः अत्यधिक व्यय हो जाता है। इसीलिए इस प्रणाली को कम अपनाया जाता है।

11.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में तथ्य संकलन के अपकरण, प्रश्नावली एवं अनुसूची का अर्थ, एवं अन्तर को विस्तारपूर्वक बताया गया है। प्रश्नावली के द्वारा शोधकर्ता शोध-विषय से संबन्धित तथ्यों के अध्ययन के लिये प्रश्नों की एक सूची तैयार करता है जिसके द्वारा आंकडे एकत्र किये जाते हैं। प्रश्नावली केवल लिखित रूप में दी जा सकती है जबकि अनुसूची में मौखिक रूप से तथ्यों को संकलित किया जाता है।

11.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रश्नावली को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं को बताइये |
2. अनुसूची से आप क्या समझते हैं प्रश्नावली और अनुसूची में अन्तर स्पष्ट कीजिए|

11.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- R. N. Mukergee, Quoted by R. N. Trivedi & D. P. Shukla, Research Methodology.
- S. S. Streevence, Quoted by R. Ahuja, Social Survey and Research.
- Goode and hatt (1954) Methods in Social Research.
- Clark & Sakade, Quoteed by Gupta & Sharma, Social Research
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वीके., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई - 12

तथ्य संकलन की विधियां :अवलोकन, साक्षात्कार एवं वैयक्तिक अध्ययन

इकाई की रूपरेखा :

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 तथ्य संकलन की विधियां
12.2.1 अवलोकन (Observation)
12.2.2 अवलोकन की विशेषताएँ
12.2.3 अवलोकन के प्रकार
12.2.4 अवलोकन के गुण
12.2.5 अवलोकन के दोष
12.2.6 साक्षात्कार (Interview)
12.2.7 साक्षात्कार की विशेषताएँ
12.2.8 साक्षात्कार के प्रकार
12.2.9 साक्षात्कार के गुण
12.2.10 साक्षात्कार के दोष
12.2.11 वैयक्तिक अध्ययन पद्धति (Case study method)
12.2.12 वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताएँ
12.2.13 वैयक्तिक अध्ययन के गुण
12.2.14 वैयक्तिक अध्ययन के दोष
12.3 सारांश
12.4 अभ्यास प्रश्न
12.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्य संकलन की विधियों के बारे में जान सकेंगे।
- तथ्य संकलन की विधियों यथा अवलोकन, साक्षात्कार एवं वैयक्तिक अध्ययन की परिभाषाओं, विशेषताओं, प्रकार, गुण-दोष के बारे में जान सकेंगे।

12.1 प्रस्तावना

शोध हेतु प्रयुक्त किये जाने वाले तथ्यों को शोधकर्ता मनमाने ढंग से प्रस्तुत नहीं करता है अपितु तथ्यों को व्यवस्थित एवं क्रमबद्ध कर अध्ययन करता है। प्रस्तुत खण्ड में तथ्य संकलन की विधियों के रूप में अवलोकन, साक्षात्कार एवं वैयक्तिक अध्ययन के बारे में बताया गया है। प्रकृति में घटनाएं जिस रूप में घटती हैं उनके कारण, प्रभावों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों को सही रूप में देखने तथा उनको प्रलेखित करने की विधि को अवलोकन कहते हैं। क्षेत्रीय कार्य की पद्धतियों में साक्षात्कार पद्धति का स्थान सर्वोपरि है। व्यक्तियों की मनोवृत्तियों, भावनाओं और आन्तरिक विचारों का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के लिए साक्षात्कार एक उपयोगी पद्धति है।

12.2 तथ्य संकलन की विधियां

शोध हेतु प्रयुक्त किये जाने वाले तथ्यों को शोधकर्ता मनमाने ढंग से एकत्रित न करके विभिन्न विधियों के माध्यम से संकलित करता है। वैज्ञानिक शोध के लिए इन तथ्यों का विश्वसनीय होना भी आवश्यक है और इस विश्वसनीयता को बनाये रखने के लिए शोधकर्ता वस्तुनिष्ठता के साथ तथ्यों को एकत्रित करता है। तथ्यों को संग्रहीत करने के लिए शोधकर्ता निम्नलिखित विधियों का उपयोग करता है।

12.2.1 अवलोकन (Observation)

अवलोकन का अर्थ (Meaning)

'अवलोकन' शब्द अंग्रेजी शब्द Observation का हिन्दी रूपान्तर है, जिसका अर्थ होता है देखना, अवलोकन करना, प्रेक्षण करना या निरीक्षण करना। प्रकृति में घटनाएं जिस रूप में घटती हैं, उनके कारण तथा प्रभावों तथा उनके पारस्परिक सम्बन्धों को सही रूप में देखने तथा उनको प्रलेखित करने की विधि को अवलोकन कहते हैं।

अवलोकन की परिभाषाएं

पी. वी. यंग (PV Young) के अनुसार, ''घटनाओं को स्वतः घटित होने के समय आँखों द्वारा एक व्यक्ति तथा सुविचारित रूप में अध्ययन करने को अवलोकन कहते हैं।''

मोजर के अनुसार, ''अवलोकन का तात्पर्य कानों अथवा वाणी के स्थान पर स्वयं अपनी दृष्टि का अधिकाधिक उपयोग करना है।''

अतः अवलोकन प्रविधि प्राथमिक सामग्री के संग्रहण की प्रत्यक्ष प्रविधि है जिसमें नेत्रों द्वारा नवीन अथवा प्राथमिक तथ्यों का विचारपूर्वक संकलन किया जाता है, साथ ही इस प्रविधि में शोधकर्ता अध्ययन के अन्तर्गत आये समूह के दैनिक जीवन में भाग लेते हुए अथवा उससे दूर बैठकर उनके सामाजिक एवं व्यक्तिगत व्यवहारों का अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा निरीक्षण या अवलोकन करता है।

12.2.2 अवलोकन की विशेषतायें

1. अवलोकन विधि में मानव इन्द्रियों का पूर्ण एवं व्यवस्थित प्रयोग किया जाता है।
2. इस विधि में अवलोकनकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक स्तर की सूचनाओं को एकत्रित करता है।
3. अवलोकन द्वारा प्राप्त सूचनायें विश्वसनीय होती हैं।

4. अवलोकन विधि में अवलोकनकर्ता द्वारा सूक्ष्म, गहन एवं उद्देश्यपूर्ण अध्ययन किया जाता है।
5. इस विधि में कार्य-कारण सम्बन्ध का पता लगाया जाता है।
6. अवलोकन विधि से प्राप्त सूचनायें निष्पक्ष होती हैं।
7. यह एक प्रत्यक्ष अध्ययन होता है।

12.2.3 अवलोकन के प्रकार

सामाजिक शोध में सूचनाओं को प्राप्त करने के तरीकों में अवलोकन विधि महत्वपूर्ण हैं अध्ययन की सुविधा के लिए अवलोकन को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है:

सहभागी अवलोकन (Participatory Obsevation)

सहभागी अवलोकन सामाजिक घटनाओं के अध्ययन की वह प्रविधि है जिसमें अवलोकनकर्ता अध्ययन समूह के साथ इस प्रकार घुल-मिल जाता है कि उस समूह के सभी सदस्य अवलोकनकर्ता के वास्तविक उद्देश्य से परिचित न होते हुए उसे अपने समूह का वास्तविक सदस्य मानने लगते हैं। इस विधि में अवलोकनकर्ता समूह या समुदाय के साथ मिलजुल कर कार्य करता है। इस विधि में मात्र घटनाओं का ही अध्ययन नहीं किया जाता, अपितु घटनाओं की वास्तविकताओं को जानने के लिए समुदाय के सदस्यों से बातचीत की जाती है।

असहभागी अवलोकन (Non-Participatory Observation)

इस विधि में अवलोकनकर्ता अध्ययन समूह के जीवन में भाग लिये बिना केवल एक तटस्थ अध्ययनकर्ता के रूप में ही घटनाओं का अवलोकन करता है। अवलोकनकर्ता न तो अध्ययन समूह के बीच एक लम्बे समय तक रहता है और न ही उसके क्रियाकलापों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप करता है।

अर्द्ध-सहभागी अवलोकन(Partial Paticipatory Observation)

पूर्ण सहभागी तथा असहभागी दोनों की सीमाओं के मध्य पायी जाने वाली विधि अर्द्ध-सहभागी अवलोकन कहलाती है।

नियंत्रित अवलोकन (Controlled Observation)

नियंत्रित अवलोकन एक ऐसी विधि है जिसमें अवलोकनकर्ता द्वारा अध्ययन की जाने वाली घटनाओं और परिस्थितियों को नियंत्रित करके तथ्यों का संकलन किया जाता है।

(i) सामाजिक घटना पर नियंत्रण

नियंत्रित अवलोकन के अन्तर्गत सर्वप्रथम यह प्रयास किया जाता है कि अध्ययन की जाने वाली परिस्थिति अथवा घटना को नियंत्रित किया जाये।

(ii) अवलोकनकर्ता पर नियंत्रण

सामाजिक शोध में अध्ययन विषय पर नियंत्रण रख सकना तुलनात्मक रूप से कठिन होता है अतः अध्ययनकर्ता को कम से कम अपने व्यवहार पर नियंत्रण अवश्य रखना चाहिए। नियंत्रण अवलोकन

में अध्ययन विषय अथवा विभिन्न घटनाओं को नियंत्रित करने के साथ ही अवलोकनकर्ता पर भी नियंत्रण रखना आवश्यक होता है।

(iii) अर्द्ध अनियंत्रित अवलोकन (Partially Uncontrolled Observation)

जैसा कि नाम से स्पष्ट है, कि अनियंत्रित अवलोकन एक ऐसी विधि है जिसमें अध्ययनकर्ता अध्ययन विषय को नियन्त्रित किये बगैर ही घटनाओं का उनके वास्तविक रूप में निरीक्षण करता है। इसके अन्तर्गत घटनायें जिस रूप में घटित हो रही हैं उन्हं े उनके स्वाभाविक रूप में देखने का प्रयत्न किया जाता है।

सामूहिक अवलोकन (Group Observation)

सामूहिक अवलोकन नियंत्रित और अनियंत्रित विधियों का मिश्रण है इस प्रविधि में एक ही समस्या या सामाजिक घटना का अवलोकन कई शोधकर्ताओं द्वारा होता है, जोकि उस सामाजिक घटना के विभिन्न पहलुओं के विशेषज्ञ होते हैं।

12.2.4 अवलोकन के गुण

1. सूचनादाताओं को अध्ययन करने का प्रत्यक्ष साधन है।
2. स्वाभाविक व्यवहार का वास्तविक अध्ययन है।
3. सूचनादाताओं की सूचना देने की योग्यता से स्वतंत्र है।
4. सूचनादाताओं की सूचना देने की इच्छा से स्वतंत्र है।
5. प्रत्युत्तर में त्रुटियों की कम सम्भावना होती है।
6. अवलोकन विधि के द्वारा ही हम जटिल घटनाओं को गहराई से समझ सकते हैं।

12.2.5 अवलोकन के दोष

1. अवलोकन का कार्य ज्ञानेन्द्रियों, विशेषकर नेत्रों द्वारा किया जाता है, जिनकी शक्ति अचूक नहीं है। ये कई बार विभिन्नतापूर्ण, अनिश्चित एवं पक्षपातपूर्ण ढंग से काम करती हैं।
2. जब लोगों को यह पता चलता है कि उनके व्यवहारों का अवलोकन किया जा रहा है तो वे अपने व्यवहार में कृत्रिमता ले आते हैं और स्वाभाविकता नष्ट हो जाती है, अतः अध्ययन दोषपूर्ण हो जाता है।
3. पक्षपात की सम्भावना बनी रहती है।
4. कुछ अध्ययनों में अनुपयुक्त है जैसे अपराध, व्यक्तिगत जीवन का इतिहास, आदि जो अवलोकन का अवसर नहीं देती।

12.2.6 साक्षात्कार (Interview) :

साक्षात्कार का अर्थ

क्षेत्रीय कार्य की पद्धतियों में साक्षात्कार-पद्धति का स्थान सर्वोपरि है। व्यक्तियों की मनोवृत्तियों, भावनाओं और आन्तरिक विचारों का अध्ययन एवं विश्लेषण करने के लिए साक्षात्कार एक उपयोगी पद्धति है। इसमें अध्ययनकर्ता और सूचनादाता एक दूसरे के आमने-सामने सम्बन्ध स्थापित कर वार्तालाप करके अभीष्ट सामग्री प्राप्त करता है। इस पद्धति का प्रयोग सामाजिक विज्ञानों के अनुसंधानों में ही सम्भव है।

साक्षात्कार की परिभाषाएं

पी. वी.. यंग के अनुसार, ''साक्षात्कार को एक क्रमबद्ध प्रणाली माना जा सकता है जिसके द्वारा एक व्यक्ति उस दूसरे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में अधिक या कम कल्पनात्मक रूप से प्रवेश करता है, जो उसके लिए सामान्यतः तुलनात्मक रूप से अपरिचित है।''

सी. ए. मोजर के अनुसार, ''औपचारिक साक्षात्कार जिसमें पूर्व निर्धारित प्रश्नों को पूछा जाता है, तथा उत्तरों को प्रमाणीकृत रूप में संकलित किया जाता है, बड़े सर्वेक्षणों में निश्चित रूप से सामान्य है।''

गुडे तथा हाट (Goode & Hott) के अनुसार, ''साक्षात्कार मूल रूप में एक सामाजिक प्रक्रिया है।''

12.2.7 साक्षात्कार की विशेषतायें :

(1) दो या दो से अधिक व्यक्तियों का वार्तालाप या निकट सम्पर्क होता है।

(2) इस पद्धति के अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता और साक्षात्कारदाता में आमने-सामने के प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं।

(3) आपसी विचारों के आदान-प्रदान का अच्छा साधन है।

(4) साक्षात्कार किसी विशेष उद्देश्य को ध्यान में रख कर किया जाता है। इस पद्धति द्वारा सामग्री का संकलन किया जाता है।

12.2.8 साक्षात्कार के प्रकार :

साक्षात्कारों को अनेक भागों में विभाजित किया जाता है। यह वर्गीकरण, सुविधा की दृष्टि से निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है:

(1) कार्यों के आधार पर वर्गीकरण

(अ) **कारण-परीक्षक साक्षात्कार**

कारण-परीक्षक साक्षात्कार उसे कहते हैं जब अनुसंधानकर्ता को किसी गम्भीर घटना या समस्या के कारणों का पता लगाना हो। अतः इस साक्षात्कार का मुख्य उद्देश्य समस्या के कारणों की खोज करना है।

(ब) उपचार साक्षात्कार (Remedial Interview)

अनुसंधानकर्ता समस्या के कारणों का पता लगाने के बाद उसके हल के लिए साक्षात्कार संचालित करता है। वह समस्या के निवारण के लिए सम्बन्धित व्यक्तियों, संस्थाओं और संगठनों जैसे डॉक्टर, वकील, न्यायाधीश, शिक्षा संगठन से सम्पर्क स्थापित कर हल ढूँढ़ता है।

(स) अनुसंधान साक्षात्कार (In-depth Interview)

गहन तथ्यों का पता लगाने के लिए जो साक्षात्कार आयोजित किए जाते हैं उसे अनुसंधान साक्षात्कार कहते हैं। इसके अन्तर्गत व्यक्ति के मनोभावों, मनोवृत्तियों और अभिरूचियों तथा इच्छाओं का पता लगाकर नए सामाजिक तथ्यों की खोज करनी होती है।

(2) औपचारिकता के आधार पर वर्गीकरण

(अ) औपचारिक साक्षात्कार (Formal Interview)

इस साक्षात्कार को निर्देशित या नियोजित साक्षात्कार भी कहा जाता है इसमें अनुसूची विधि को काम में लाया जाता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता प्रश्न पूछने में स्वतंत्र नहीं होता है वह न तो नए प्रश्नों को पूछ सकता है और न नए प्रश्न अनुसूची में जोड़ सकता है। अतः ऐसा साक्षात्कार नियन्त्रित होता है।

(ब) अनौपचारिक साक्षात्कार (Informal Interview)

ऐसे साक्षात्कार को अनियन्त्रित साक्षात्कार भी कहा जाता है। साक्षात्कारकर्ता साक्षात्कारदाता से अपने विषय से सम्बन्धित प्रश्न करता है जो उनका उत्तर वर्णन या कहानी के रूप में दे सकता है। इसमें घटनाओं एवं भावनाओं के वर्णन में काफी स्वतंत्रता रहती है। इस वर्णन के आधार पर साक्षात्कारकर्ता अपने निष्कर्ष निकालता है।

(3) सूचनादाताओं की संख्या के आधार पर

(अ) व्यक्तिगत साक्षात्कार (Personal Interview)

व्यक्तिगत साक्षात्कार में एक समय में एक ही व्यक्ति से साक्षात्कार किया जाता है। साक्षात्कारकर्ता, सूचनादाता से प्रश्न करता जाता है और वह उसका उत्तर एक-एक करके देता है।

(ब) सामूहिक साक्षात्कार (Group Interview)

इसके अन्तर्गत एक से अधिक लोगों का एक ही समय साक्षात्कार किया जाता है। साक्षात्कारकर्ता बिना क्रम के भी पूछ सकता है। वह समूह के समस्त व्यक्तियों को उत्तर देने के लिए प्रेरित करता है। इनमें कुछ लोग एक साथ उत्तर देते हैं तो कुछ संकेतों द्वारा या हाव-भाव द्वारा उनके साथ हाँ में हाँ मिलाते हैं।

(4) अध्ययन-पद्धति के आधार पर

(अ) अनिर्देशित साक्षात्कार (Non-focused Interview)

इस साक्षात्कार को अव्यवस्थित या असंचरित साक्षात्कार की भी संज्ञा दी जाती है। साक्षात्कारकर्ता कोई कठिन या गम्भीर समस्या रख सकता है जिसका उत्तर, उत्तरदाता कहानी या संक्षिप्त अथवा लम्बे विवरण के रूप में दे सकता है।

(ब) केन्द्रित साक्षात्कार (Focused Interview)

इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग सबसे पहले रॉबर्ट मर्टन ने किया था। उन्होंने रेडियो, फिल्म तथा संदेशवाहन के साधनों का प्रभाव जानने के लिए इसका प्रयोग किया था। इसमें शर्त यह है कि साक्षात्कारदाता पहले से ही विशेष परिस्थिति में, जो अनुसंधान का विषय है, रह चुका हो। उदाहरण रेडियो का सुनना। साक्षात्कारकर्ता अपना ध्यान इस बात पर केन्द्रित करता है कि उस परिस्थिति या घटना का उस पर क्या प्रभाव पड़ा। साक्षात्कारकर्ता उस घटना या परिस्थिति के प्रभाव का अध्ययन कर लेता है। यह साक्षात्कार अधिक स्वत्रंत्र होता है।

(स) पुनरावृत्ति साक्षात्कार(Recurring Interview)

इस पद्धति का प्रयोग लैजार्सफील्ड ने किया था। यह साक्षात्कार समाज में परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए किया जाता है। इन प्रभावों के अध्ययन के लिए एक ही साक्षात्कार पर्याप्त

नहीं होता, अतः साक्षात्कार को बार-बार दुहराया जाता है और इसीलिए हम इसे पुनरावृत्ति साक्षात्कार कहते हैं।

12.2.9 साक्षात्कार के गुण

साक्षात्कार प्रणाली अधिक खर्चीली प्रणाली है, लेकिन इसके द्वारा जो सामग्री एकत्रित की जाती है उसके आधार पर यह एक विश्सनीय प्रणाली है। इसके द्वारा प्राप्त तथ्य सत्य और प्रमाणित होते हैं। साक्षात्कार द्वारा सभी प्रकार तथा वर्गों के सूचनादाताओं, अशिक्षित एवं अनपढ़ से तथ्य एकत्र किये जा सकते हैं। सभी प्रकार की निदर्शन प्रणालियों का साक्षात्कार में प्रयोग कर सकते हैं।
साक्षात्कार प्रणाली अधिक लचीली है, जिसमें सूचनादाताओं के सामने प्रश्नों को बार-बार दोहराया जा सकता है। यह प्रणाली पूर्वगामी अध्ययनों और पूर्व-परीक्षणों में अधिक उपयोगी है। प्रश्नावली और अनुसूची की जांच भी साक्षात्कार द्वारा की जाती है। ऐसे प्रश्न क्या पूछना चाहिये, कैसे पूछना चाहिये इत्यादि समस्याओं का समाधान भी साक्षात्कार प्रणाली के द्वारा किया जाता है।
इस प्रणाली में साक्षात्कारकर्ता अवलोकनकर्ता के रूप में भी कार्य करता है और यह जानने का प्रयास करता है कि उत्तर देते समय सूचनादाता के कैसे और किस तरह के हावभाव थे। उत्तरों की सत्यता के सम्बन्ध में सन्देह होने पर साक्षात्कारकर्ता पूरक प्रश्न पूछकर या कुछ अन्तर पर अन्य प्रश्न पूछकर मालूम कर सकता है कि वास्तविक तथ्य या उत्तर क्या है? यंग के अनुसार साक्षात्कार प्रणाली एक पूरक प्रणाली है जिसका उपयोग और प्रणालियों के साथ करना चाहिये। जब इसका उपयोग अवलोकन और सांख्यिकीय प्रणालियों के साथ किया जाता है तब अच्छे और उत्तम परिणाम निकलते हैं। साक्षात्कारकर्ता जब अनुभवी और निपुण होता है तो सूचनादाता उसे सही उत्तर देता है। उत्तर देते समय वह स्वतंत्र अनुभव करता है। ऐसी परिस्थितियों में उत्तरदाता अपनी भावना और जीवन की दुखद घटनाओं की जानकारी भी दे देता है। प्रश्नावली में ऐसी सूचना प्राप्त नहीं की जा सकती है।

12.2.10 साक्षात्कार की दोष

साक्षात्कार प्रणाली में साक्षात्कारकर्ता को प्रत्येक सूचनादाता के पास जाकर तथ्य संकलन करने पड़ते हैं। प्रत्येक सूचनादाता के घर जाकर सम्पर्क करने से इसमें काफी समय, धन और श्रम लगता है। इस खर्च को समूह साक्षात्कार के द्वारा कम किया जा सकता है, लेकिन समूह साक्षात्कार में एक समय में 8-10 व्यक्तियों का साक्षात्कार लेना सम्भव है, जिससे खर्च तो कम हो जाता है लेकिन उत्तरों की प्रामाणिकता और वास्तविकता में कमी आ जाती है। समूह साक्षात्कार उपकल्पनाओं के निर्माण के लिये तो उपयोगी है लेकिन तथ्य संकलन और उपकल्पनाओं की जांच करने की अच्छी प्रणाली नहीं है। टेलीफोन के द्वारा साक्षात्कार, साक्षात्कार की कीमत कम कर देता है,लेकिन यह साक्षात्कार भी अपनी कुछ सीमायें रखता है। यह साक्षात्कार संक्षिप्त होना चाहिये, इसके द्वारा दैव-निदर्शन के माध्यम से जनसंख्या का अध्ययन नहीं किया जा सकता क्योंकि हर एक पास टेलीफोन नहीं होते हैं। साक्षात्कारों की सामग्री की तुलना नहीं कर सकते। साक्षात्कारकर्ताओं तथा सूचनादाताओं के व्यक्तित्व में भिन्नता होती है जिस कारण उत्तरों में भिन्नता आ जाती है जिससे वास्तविक तथ्य एकत्र करने में बाधा आ जाती है।

12.2.11 वैयक्तिक अध्ययन (Case Study)

वैयक्तिक अध्ययन का अर्थ

साधारण रूप से यह समझा जाता है कि वैयक्तिक अध्ययन-विधि का तात्पर्य अध्ययन के एक ऐसे तरीके से है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति के क्रियाकलापों, मनोवृत्तियों और जीवन इतिहास का गहन अध्ययन किया जाता है। ऐसी धारणा आंशिक रूप से सच होते हुए भी पूर्णतया उपयुक्त नहीं है। इस विधि के द्वारा केवल किसी एक व्यक्ति का ही गहन अध्ययन नहीं किया जाता बल्कि वह अध्ययन किसी भी एक सामाजिक इकाई जैसे व्यक्ति, परिवार, समूह, संस्था अथवा समुदाय आदि को केन्द्र मानते हुए किया जा सकता है। इस रूप में विभिन्न विद्वानों ने वैयक्तिक अध्ययन विधि को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है।

वैयक्तिक अध्ययन की परिभाषाएं

पी. वी. यंग के शब्दों में ''वैयक्तिक अध्ययन किसी एक सामाजिक इकाई के जीवन की खोज और विश्लेषण की पद्धति है, चाहे यह इकाई एक व्यक्ति, परिवार, संस्था, सांस्कृतिक समूह अथवा सम्पूर्ण समुदाय ही क्यों न हो''।

सिन पाओ येंग के शब्दों में, ''वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को किसी एक छोटे, सम्पूर्ण तथा गहन अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में पर्याप्त सूचनाओं का व्यवस्थित संकलन करने के लिए अपनी समस्त क्षमताओं और विधियों का उपयोग करता है जिसके यह ज्ञात हो सके कि एक स्त्री व पुरुष समाज की एक इकाई के रूप में किस प्रकार कार्य करता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि वैयक्तिक अध्ययन का तात्पर्य किसी भी एक सामाजिक इकाई के समस्त पक्षों का व्यापक, सूक्ष्म और गहन अध्ययन करना है।

12.2.12 वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताएं

इस पद्धति की प्रकृति को समुचित रूप से समझने के लिए इससे सम्बन्धित प्रमुख विशेषताओं को संक्षेप में स्पष्ट किया गया है।

1. वैयक्तिक अध्ययन विधि एक विशिष्ट सामाजिक इकाई का सम्पूर्ण अध्ययन है।
2. इस अध्ययन विधि द्वारा किया जाने वाला अध्ययन अत्यधिक सूक्ष्म और गहन होता है। अध्ययनकर्ता समय की चिन्ता किए बिना तब तक अध्ययन कार्य में लगा रहता है जब तक वह तथ्यों को खोज निकालने में सफल न हो जाये।
3. इस विधि में अतीत और वर्तमान दोनों का समन्वय होता है।
4. वैयक्तिक अध्ययन की प्रकृति गुणात्मक होती है।
5. वैयक्तिक अध्ययन विधि अध्ययन की जाने वाली इकाई के किसी एक पहलू को लेकर अध्ययन नहीं करती बल्कि यह अध्ययन उसके सभी पक्षों का समावेश करते हुए किया जाता है।

12.2.13 वैयक्तिक अध्ययन के गुण

सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं के अत्यधिक सूक्ष्म और गहन अध्ययन में वैयक्तिक अध्ययन अत्यधिक व्यावहारिक तथा उपयोगी सिद्ध हुआ है।

1. वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा किसी भी सामाजिक इकाई अथवा इकाइयों का अत्यधिक सूक्ष्म और गहन अध्ययन किया जा सकता है।
2. अनेक उपयोगी और व्यवस्थित परिकल्पनाओ के निर्माण में भी वैयक्तिक अध्ययन से बहुत सहायता मिलती है।
3. प्रत्येक सामाजिक अध्ययनकर्ता को वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के प्रयोग से अपने अध्ययन प्रपत्रों में सुधार करने का समुचित अवसर प्राप्त हो जाता है।
4. वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा ही यह ज्ञात किया जा सकता है कि अध्ययन से सम्बन्धित क्षेत्र, विभिन्न विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली इकाइयों तथा एक ही श्रेणी की इकाइयो में से किस प्रकार सर्वोत्तम निदर्शन प्राप्त किया जा सकता है।
5. सामाजिक सर्वेक्षण तथा अनुसन्धान में केवल विषय से सम्बन्धित इकाइयों का अध्ययन करना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि अक्सर जो इकाइयाँ ऊपर से अध्ययन की विरोधी अथवा निरर्थक प्रतीत होती हैं उनके द्वारा भी कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों को ज्ञात किया जा सकता है।
6. ब्लूमर ने वैयक्तिक अध्ययन को इस दृष्टिकोण से अत्याधिक महत्वपूर्ण माना है कि इस पद्धति के द्वारा जब हम किसी सामाजिक इकाई से सम्बन्धित वैयक्तिक प्रलेखों का अध्ययन करते हैं तो अध्ययन से सम्बन्धित अनुसन्धानकर्ता के ज्ञान में ही वृद्धि नहीं होती बल्कि अध्ययन के प्रति उसकी रूचि में भी वृद्धि हो जाती है।

12.2.14 वैयक्तिक अध्ययन के दोष

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि व्यक्ति की परिस्थितियों अथा गुणात्मक दशाओं का अध्ययन करने में वैयक्तिक अध्ययन बहुत महत्वपूर्ण विधि प्रमाणित हुई है फिर भी यह पद्धति दोष रहित नहीं है। ब्लूमर ने स्पष्ट किया है कि वैयक्तिक अध्ययन स्वतन्त्र रूप में अपर्याप्त और अवैज्ञानिक होने के साथ ही सिद्धान्तों के निर्माण में अव्यावहारिक सिद्ध हुआ है। इसका तात्पर्य है कि वैयक्तिक अध्ययन को केवल एक पूरक विधि के रूप में ही उपयोगी बनाया जा सकता है। ब्लूमर (Blumer) के इस कथन के सन्दर्भ में यह आवश्यक है कि वैयक्तिक अध्ययन पद्धति की सीमाओं को स्पष्ट किया जाय।

(1) वैयक्तिक अध्ययन का सबसे प्रमुख दोष यह है कि इसके द्वारा बहुत थोड़ी सी इकाइयों के अध्ययन के आधार पर ही सामान्य निष्कर्ष प्रस्तुत कर दिये जाते हैं।

(2) वैयक्तिक अध्ययन पद्धति के उपयोग में अध्ययनकर्ता अनेक सरकारी और गैर-सरकारी सूचनाओं के उपयोग पर आवश्यकता से अधिक निर्भर रहता है। ऐसी सूचनाएँ स्वयं इतनी दोषपूर्ण होती हैं कि उनकी सत्यता हमेशा सन्देहपूर्ण बनी रहती है।

(3) वैयक्तिक अध्ययन द्वारा प्रस्तुत निष्कर्ष कभी-कभी बहुत पक्षपातपूर्ण हो जाते हैं।

(4) वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा एक अनुसन्धानकर्ता जिन इकाइयों का अध्ययन करता चाहता है, उनका चुनाव प्रतिचयन की किसी वैज्ञानिक प्रणाली द्वारा न करके सुविधापूर्वक और उद्देश्यपूर्ण रूप से कर लिया जाता है।

(5) अन्य विधियों और प्रविधियों की तुलना में वैयक्तिक अध्ययन के उपयोग के लिए कहीं अधिक समय और धन की आवश्यकता होती है।

(6) वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा जो तथ्य प्राप्त होते हैं उनकी विश्वसनीयता की जाँच नही की जा सकती।

12.3 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अवलोकन, साक्षात्कार एवं वैयक्तिक अध्ययन के बारे में बताया गया है। वास्तव में अवलाकन का तात्पर्य सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास न करके अपनी दृष्टि का उपयोग करना है। साक्षात्कार के द्वारा किसी व्यक्ति विशेष की मनःस्थिति को जानना होता है तथा वैयक्तिक अध्ययन के द्वारा किसी व्यक्ति विशेष अथवा घटना का सविस्तार उल्लेख करना होता है।

12.4 अभ्यास प्रश्न

1 अवलोकन की परिभाषा दें इसके विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिए ?
2. संक्षेप में अवलोकन के प्रमुख प्रकारों की विवेचना कीजिए?
3. साक्षात्कार क्या है ? साक्षात्कार की प्रक्रिया के प्रमुख चरणों का वर्णन कीजिए?
4. कुशल साक्षात्कार एक कला है ? स्पष्ट कीजिए ?
5. वैयक्तिक अध्ययन-विधि का क्या अर्थ है ? सामाजिक शोध में वैयक्तिक अध्ययन की विशेषताओं का वर्णन कीजिए ?
6. वैयक्तिक अध्ययन पद्धति को परिभाषित करते हुए इसकी सीमाओं की व्याख्या कीजिए

12.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P.V. Young,(1962) Scientific Social Survey and Research.
- V.M. Palmer : Field Studies in Sociology.
- G. A Lundberg, Social Research.
- Goode and hatt, Methods in Social Research.
- G.A.Lundberg, Social Research.
- सिंह ए.एन. एवं सिंह वी.के., सामाजिक अनुसंधान।

इकाई -13

अनुमापन प्रविधियां

इकाई की रूपरेखा :

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 अनुमापन प्रविधियां (Scaling Techniques)
13.3 अनुमापन प्रविधियों की आवश्यकता
13.4 अनुमापन प्रविधियों के प्रकार
13.5 अनुमापन के कार्य
13.6 सारांश
13.7 अभ्यास प्रश्न
13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- अनुमापन प्रविधियों का अर्थ एवं परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- अनुपामन प्रविधियों की आवश्यकताओं को समझ सकेंगे।
- अनुमापन प्रविधियों के प्रकारों को जान सकेंगे।
- अनुमापन प्रविधियों के कार्य को समझ सकेंगे।

13.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में अनुमापन प्रविधियों का अर्थ, परिभाषा, आवश्यकता एवं प्रकार तथा अनुमापन प्रविधियों के कार्य के बारे में बताया गया है। अनुमापन प्रविधियां अध्ययन को अधिक विश्वसनीय, तर्कसंगत तथा वैज्ञानिक बनाने के लिये प्रयुक्त होती हैं। सामाजिक विज्ञान के विषयों में अनुमापन प्रविधियों का विशेष महत्व है।

13.2 अनुमापन प्रविधियां

सामाजिक अनुसंधान से सम्बन्धित एक प्रमुख समस्या व्यक्तिगत मनोवृत्तियों, दृष्टिकोणों, विचारों के मापन से है। अधिकांश सामाजिक तथ्य अपनी प्रकृति से गुणात्मक तथा अमूर्त होते हैं जिसके परिणामस्वरूप उनका गणनात्मक मापन करना बहुत दुष्कर हो जाता है। भौतिक अथवा प्राकृतिक तथ्यों का अध्ययन इसलिए वैज्ञानिक मान लिया जाता है कि उनकी निश्चित माप करने के लिए अनेक प्रविधियाँ विकसित हो चुकी है । सामाजिक शोध की प्रविधियों के विकास के साथ ही अब ऐसे मापन उपकरणों का विकास होता जा रहा है जिनसे गुणात्मक तथ्यों का माप करके गणनात्मक निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा सकते हैं। संक्षेप में इन्हीं प्रविधियों को हम 'अनुमापन प्रविधियाँ' अथवा

'मापक्रम प्रविधियाँ कहते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अनुमापन प्रविधियों का तात्पर्य उन प्रणालियों से है जिनके द्वारा शोधकर्ता गुणात्मक सामाजिक तथ्यों का माप करके उनकी गणना को सांख्यिकीय निष्कर्षों के रूप में प्रस्तुत करता है।

किसी भी विज्ञान की एक प्रमुख आवश्यकता यह है कि वह अपने निष्कर्षों को निश्चितता प्रदान करे और इस निश्चितता के लिए ही घटनाओं का प्रमाप किया जाता है। यही कारण है कि भौतिक वैज्ञानिकों की भाँति समाज वैज्ञानिकों ने भी अपने तथ्यों के मापन के लिए अनेक प्रकार के प्रमापों की खोज की है और निरन्तर की जा रही है। इन प्रमापन विधियों द्वारा समाज-वैज्ञानिक अपने गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिणत करने का प्रयास करते हैं, ताकि शोध के निष्कर्षों को अधिकाधिक निश्चितता प्रदान की जा सके।

बहुत-सी घटनाएँ अथवा वस्तुएँ ऐसी होती हैं, जिनका माप किया जाना संभव है, जबकि अनेक घटनाएँ अथवा वस्तुओं की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि जिन्हें मापा नहीं जा सकता। मापन योग्य घटनाओं अथवा वस्तुओं में भी कुछ ऐसी होती हैं, जिनकी प्रत्यक्ष माप की जा सकती है और कुछ ऐसी होती हैं कि जिनकी प्रत्यक्ष माप संभव नहीं होती। प्रत्यक्ष मापन के अयोग्य घटनाएँ अति जटिल प्रकार की होती हैं जैसे सामाजिक प्रस्थिति, रहन-सहन का स्तर, व्यक्तित्व की कुछ अमूर्त विशेषताएँ-मनोवृत्ति, विश्वास, मत-मतान्तर आदि। एक व्यक्ति के रहन-सहन के स्तर में अनेक बातें सम्मिलित होती हैं, जैसे फर्नीचर, मकान, वेश-भूषा तथा इसी प्रकार की अनेक भौतिक वस्तुएँ आदि। इसी प्रकार, यदि हम किसी अमुक घटना के प्रति किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति को मापना चाहते हैं, तब हमें अनेक बातों को ध्यान में रखना होगा। अतः यह एक जटिल प्रक्रिया है जिनका विश्लेषण किसी एक तथ्य के आधार पर नहीं किया जा सकता।

अनुमापन पद्धति की परिभाषाएं

अनुमापन पद्धति के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों की परिभाषाएँ निम्नांकित हैं-

गुडे एवं हाट (Goode and Hott) के अनुसार-''अनुमापन प्रविधियों में अन्तर्निहित समस्या इकाइयों की श्रेणियों को एक क्रम के अन्तर्गत व्यवस्थित करती है। दूसरे शब्दों में, अनुमापन प्रविधियाँ गुणात्मक तथ्यों की श्रेणियों को गुणात्मक श्रेणियों में बदलने की पद्धतियाँ है।''

पी. वी. यंग **(PV Young)** के अनुसार, ''किसी वस्तु अथवा घटना की मात्रा अथवा भार को मापने के लिए जिस पैमाने का प्रयोग किया जाता है, उसके आधार पर जिन अनुमापन साधनों का निर्माण किया जाता है उसे अनुमापन प्रणाली कहते हैं।''

आर एन. मुकजीर् (R.N. Mukzeer) के अनुसार, ''अनुमापन का तात्पर्य मापन की उस विधि से है, जिसके द्वारा गुणात्मक तथा अमूर्त सामाजिक तथ्यों या घटनाओं को गणनात्मक स्वरूप दिया जाता है''।

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करने से यह स्पष्ट होता है कि अनुमापन प्रणाली के द्वारा हम यह प्रयास करते हैं कि हमारे द्वारा दिया गया उत्तर संख्यात्मक आधार पर हो।चूंकि समाजशास्त्र के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों की व्याख्या होती है परन्तु हम सामाजिक सम्बन्ध को संख्यात्मक आधार नहीं दे सकते।

13.3 अनुमापन प्रविधियों की आवश्यकता

अनुमापन विज्ञान की एक प्रमुख आवश्यकता है। यथार्थता एवं सही माप किसी भी विज्ञान की परिपक्वता एवं प्रगति की द्योतक है। इस सम्बन्ध में गुडे तथा हाट का यह कथन समीचीन है कि सभी विज्ञानों की प्रवृत्ति अधिकाधिक यथार्थता की दिशा में अग्रसर होने की होती है। इस यथार्थता के कई रूप हैं,परन्तु उसका एक आधारभूत रूप है, क्रमबद्ध श्रेणियों की माप।वैज्ञानिक पद्धति का यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण है,क्योंकि इसके अभाव में हम घटनाओं के मध्य पाये जाने वाले सम्बंधों का परीक्षण कर पाने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं।अनुमापन का एक प्रमुख उद्देश्य यह होता है कि यह शोधकर्ता को सिद्धान्तों तथा प्रस्थापनाओं के परीक्षण योग्य बनाता है। अनुमापन विधियों का प्रयोग वैज्ञानिक इसलिये भी करते हैं कि वे अपनी विश्वदृष्टि की तुलना दूसरे वैज्ञानिकों से कर सकें। शोध निष्कर्षों की तुलना अनुमापन के अभाव में असम्भव नहीं लेकिन कठिन अवश्य होती है।यह आवश्यक नहीं है कि अनुमापन द्वारा हम वास्तविकता का पता लगा ही लें,फिर भी वैज्ञानिकों की यह मान्यता है कि वास्तविकता के सन्निकट पहुंचने के लिये यह सबसे अच्छा तरीका है।अनुमापन द्वारा हम घटनाओं की समानताओं तथा विभिन्ताओं को उनकी संख्या अथवा उनमें होने वाले परिवर्तनों को जान सकते हैं।

13.4 अनुमापन प्रविधियों के प्रकार

मनोवृत्तियों का सम्बन्ध अमूर्त दशाओं से होने के कारण इनकी माप करना एक दुरूह कार्य है लेकिन आज अनेक ऐसे पैमानों का विकास किया जा चुका है जिनके द्वारा मनोवृत्तियों, जैसे-अमूर्त तथ्यों एवं सामाजिक व्यवहारों की माप करना संभव हो गया है। सामाजिक शोध के अन्तर्गत प्रयोग में लायी जाने वाली अनुमापन प्रविधियां भौतिक विज्ञानों से सम्बद्ध अनुमापन प्रविधियों के समान अधिक विकसित, प्रामाणिक एवं विश्वसनीय नही हैं। फिर भी इस दिशा में होने वाले वर्तमान प्रयत्नों के आधार पर यह आशा कर सकते हैं कि भविष्य में सामाजिक मनोवृत्तियों एवं व्यवहारों का एक अधिक विश्वसनीय अनुमापन कर सकना संभव हो जायेगा।इस दिशा में सामाजिक घटनाओं की माप करने के लिये आज जिन प्रमुख अनुमापन प्रविधियों का उपयोग किया जा रहा है। उनमें से कुछ मुख्य अनुमापन प्रविधियां इस प्रकार हैं:

1. अंक पैमाना (Point Scale)

सामाजिक घटनाओं की माप करने में यह एक सामान्यीकृत पैमाना है जिसका उपयोग आज सबसे अधिक किया जाता है। इसका कारण यह है कि इसका उपयोग करने में शोधकर्ता को तुलनात्मक रूप से सबसे कम समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इस पैमाने के द्वारा एक अथवा अधिक समूहों में विभिन्न विषयों के प्रति व्यक्तियों की मनोवृत्तियों की माप की जाती है।इसके निर्माण के लिये अध्ययन-विषय से सम्बन्धित विभिन्न स्थितियों अथवा कथनों को संकलित करके एक सूची में व्यवस्थित कर लिया जाता है, इसके पश्चात् इन कथनों के विषय में उत्तरदाताओं की राय ज्ञात की जाती है। उत्तरदाता अथवा सूचनादाता से यह कहा जाता है कि वह जिस कथन से सहमत हो अथवा जिसे अपने लिये अधिक अनुकूल समझता हो उसके आगे गलत अथवा सही का निशान लगा दे। जिन कथनों के आगे गलत अथवा सही का निशान लगाया जाता है,उन्हें एक अंक प्रदान कर दिया

जाता है। इस प्रकार विभिन्न कथनों को जो अंक प्राप्त होते हैं उन्हीं के आधार पर उत्तरदाता की मनोवृत्तियों को ज्ञात कर लिया जाता है।

अंक पैमाने की सफलता के लिये यह आवश्यक है कि शोधकर्ता ऐसी परिस्थितियों अथवा कथनों के प्रति उत्तरदाता की राय जानने का प्रयास करे जिनकी प्रकृति एक-दूसरे के विरोध में अथवा परस्पर भिन्न हो।

2.मूल मापक या तीव्रता अनुमाप (Qualitative Scale)

इस प्रकार के अनुमापों का प्रयोग मनुष्यों की मनोवृत्तियों, मनोभावों तथा विचारों, रूचियों की तीव्रता को मापने के लिये किया जाता है। इन अनुमापों में मनोवृत्तियें को आवश्यकतानुसार तीव्रता क्रम में तीन, चार अथवा पांच खण्डों में बांटा जा सकता है।

(i) बहुत पसन्द/पसन्द/तटस्थ/अपसन्द/एकदम न पसन्द

(ii) पूर्ण अनुकूल/अनुकूल न प्रतिकूल/पूर्णतया प्रतिकूल

(iii) पूर्ण सहमति/सहमति/अनिश्चित असहमति/पूर्ण असहमति

(iv) अत्यधिक संतुष्ट/संतुष्ट/न संतुष्ट न असंतुष्टअसंतुष्ट/पूर्णतया असंतुष्ट

किसी एक परिस्थिति, विषय या घटना के बारे में व्यक्ति की मनोवृत्ति जानने के लिये उपर्युक्त अनुमापों में से किसी एक का प्रयोग आवश्यकतानुसार किया जा सकता है।

3. पद या श्रेणी सूचक अनुमाप

ये अनुमाप भी तीव्रता मापक अनुमापों के समान ही होते हैं। इनमें तथ्यों को कुछ पदों या श्रेणियों में प्रस्तुत किया जाता है। अन्तर केवल श्रेणी का क्रम में स्थान निर्धारित करने से ही सम्बन्धित है। इस पद का निर्धारण थोड़ी सी इकाइयों की तुलना के आधार पर किया जाता है। इस अनुमान से यह ज्ञात किया जाता है कि व्यक्ति के मन में एक वस्तु,परिस्थिति या घटना के बारे में क्या स्थान है। इन अनुमाप के निम्नलिखित दो प्रकार हैं:

(i) तुलनात्मक युग्म विधि (Paired Comparison)

इस विधि में व्यवसायों के अनेक युग्म (जोड़े) लिखकर सूचनादाताओं को दिये जाते हैं और प्रत्येक में से किसी एक पर चिन्ह लगाने को कहा जाता है। इस प्रकार प्रत्येक व्यवसाय को मिले अंकों अथवा अधिमानों को जोड़ दिया जाता है और सबके माध्यम को अनुमाप का मूल्य माना जाता है।

(ii) होरोबिट्ज विधि (Horobitz Method)

यह पद सूचक या श्रेणी या श्रेणी सूचक अनुमाप का दूसरा रूप है। होरोबिट्ज (Horobitz) ने प्रजातीय पक्षपात को ज्ञात करने के लिये 12 चित्रों को चुना था जिसमें 8 नीग्रों, 4गोरे बच्चों के चित्र थे।

क्रम से 1, 2, 3, 4, 5, 6 बच्चों में बाटकर मनोवृत्ति ज्ञात करके अंकों को जोड़कर फिर अधिमानों के प्रतिशत के आधार पर पक्ष या विपक्ष में निष्कर्ष प्राप्त कर लिया गया।

4. लिकर्ट अनुमाप (Likert Scale)

लिकर्ट अनुमाप को तीव्रताओं के योग का अनुमाप कहा जाता है। यह सबसे अधिक सरल एवं स्पष्ट है।

इस अनुमाप में मदों का एक क्रम होता है जिन पर सूचनादाता को प्रत्युत्तर के लिये कहा जाता है। इस प्रकार के अनुमाप में केवल उन्हीं का प्रयोग किया जाता है जो निश्चित रूप से सहमति अथवा असहमति, अनुकूल अथवा प्रतिकूल व्यक्त करते हैं। सूचनादाता उन्हीं मदों पर सही का चिन्ह लगाता है, जिन्हें वह सही समझता है। प्रायः सहमति वाले मदों को धनात्मक तथा असहमति वाले मदों को ऋणात्मक अंक दिये जाते हैं। सभी मदों के अंकों का योग सूचनादाताओं का कुल गुणांक होता है।

- **प्रक्रिया एवं उदाहरण**

जापनियों के विषय में अमेरिकनों की मनोवृत्ति जानने के लिये लिकर्ट ने पक्ष एवं विपक्ष के 99 कथनों को संकलित किया। अनुमाप 5,4,3,2,1 में 5-दृढ स्वीकृति, 4-स्वीकृति, 3-अनिश्चिता, 2-अस्वीकृति तथा 1-दृढ अस्वीकृति के क्रम से उन्हें भार प्रदान किया गया और इन कथनों को 500 व्यक्तियों के पास इच्छानुसार चिन्ह लगाने के लिये भेज दिया गया। फिर प्रत्येक व्यक्ति द्वारा लगाये गये चिन्हों के भार से जोड़ कर प्राप्तांक निकाल लिये गये। समस्त प्राप्तांकों को क्रमानुसार लगाया गया है। इसके बाद प्रथम चतुर्थक तक के प्राप्तांकों या अंकोंका एक समूह बना दिया गया और तृतीय चतुर्थक के बाद वाले प्राप्तांकों या अंकों का दूसरा समूह बना दिया गया। दोनों समूहों को पृथक-पृथक आवृत्ति विवरण तालिकाओं के रूप में व्यवस्थित किया गया और पृथक-पृथक माध्य-मूल्यों की गणना कर ली गयी।इस प्रकार दोनो मूल्यों का अन्तर ही अनुमान का मूल्य है।

5. थर्सटन का अनुमाप (Thurston Scale)

थर्सटन के अनुमाप को विशेषकर या भेदकर अनुमाप भी कहा जाता है। थर्सटन ने अपने अनुमाप का प्रयोग समूह के सदस्यों की युद्ध,मृत्युदण्ड तथा परिवार नियोजन इत्यादि के बारे में राय जानने के लिये किया था।

- **निर्माण प्रक्रिया एवं उदाहरण**

इस अनुमाप के निर्माण में सामान्यतया 100 या 200 कथनों को संकलित किया जाता है। कथनों के संकलन के बाद उनका सत्यापन किया जाता है और इस प्रक्रिया में उन कथनों को सूची से पृथक कर दिया जाता है। जिनका अध्ययन विषय से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इसके काम को अत्यधिक अनुकूल से अत्यधिक प्रतिकूल तक क्रमबद्ध रूप से रख दिया जाता है। व्यक्तिगत पक्षपात से बचने के लिये सम्पादित कथनों की एक-एक प्रति कुछ विशेषज्ञों या निर्णयकों के पास भेज दी जाती है ताकि प्रत्येक विशेषज्ञ या निर्णायक अपने-अपने निर्णय के अनुसार उन कथनों को विशेषज्ञों या निर्णायकों में जो औसत दिया जाता है। उसी स्तर पर सम्बन्धित कथन को अनुमाप में स्थान दिया जाता है।इस प्रकार कथनों के बहुमत के अनुसार अनुमाप में क्रमबद्ध रूप से रखा जाता है और विवादग्रस्त कथनों को अनुमाप से पृथक कर दिया जाता है।

अनुमाप के निर्माण की अन्तिम अवस्था में उपरोक्त तरीके से चुने हुये सीमित कथनों का सम्पूर्ण अनुमाप के अंतर्गत विभिन्न स्थान प्रदान कर दिये जाते हैं और कथन पर अत्यधिक अनुकूल से अत्यधिक प्रतिकूल तक विस्तृत फैला दिये जाते हैं।

थर्सटन ने चर्च के विषय में लोगों की राय जानने के लिये 130 कथनों को उपयुक्त विधि के अनुसार । से ज्ञ तक 11 श्रेणियों में विभाजित कर लिया। निष्कर्ष में । को सर्वाधिक अनुकूल बिन्दु ज्ञ सर्वाधिक प्रतिकूल बिन्दु और थ् को मूल्यभार वाला बिन्दु माना गया ।

6. बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना (Social Distance Scale of Bogardus)

सामाजिक दूरी की माप करने के लिये बोगार्डस ने सर्वप्रथम जिस पैमाने को विकसित किया। उसी को हम बोगार्डस का सामाजिक दूरी का पैमाना कहते हैं। इस पैमाने के निर्माण के लिये बोगार्डस ने प्रारम्भिक चरण में 100 लोगों की राय के आधार पर कुछ ऐसी सामाजिक परिस्थितियों का चयन किया जिनके द्वारा विभिन्न समूहों के प्रति एक विशेष व्यक्ति अथवा समूह की घटती हुई अथवा बढ़ती हुई सामाजिक दूरी को ज्ञात किया जा सके, इन परिस्थितियों के चयन का उद्देश्य अंग्रेज, स्वीडिश, कोरियन, पोल लोगों के प्रति अमेरिका के नागरिकों की सामाजिक दूरी अथवा घनिष्ठता की सीमा की माप करना था इस प्रकार की सामाजिक दूरी का मापन करने के लिये बोगार्डस ने 7 परिस्थितियों का उपयोग किया, जो इस प्रकार है।

वर्ग	अंग्रेज	स्वीडिश	पोल	कोरियन
विवाह की स्वीकृति				
क्लब में साथी बनाने की स्वीकृति				
पडोस में रहने की स्वीकृति				
एक ही दफ्तर में साथ-साथ कार्य करने की स्वीकृति				
अपने देश में नागरिक के रूप में स्वीकार करने को तैयार करना				
देश में केवल यात्री के रूप में आने की अनुमति देने को तैयार				
अपने देश से बाहर निकाल देने की इच्छा				

बोगार्डस ने उपर्युक्त समूहों के प्रति अमेरिकनों की मनोवृत्ति का माप करने के लिये इस अनुसूची को 1,725 अमेरिकनों में वितरित किया। सभी उत्तरदाताओं को यह निर्देश दिया कि:

1. प्रत्येक दिशा में वे अपनी प्रारम्भिक प्रतिक्रिया को व्यक्त करें।
2. अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते समय किसी विशेष व्यक्ति को ध्यान में न रखकर उस सम्पूर्ण समूह को ध्यान में रखें, तथा
3. प्रत्येक समूह के खाने में 7 वर्गों में से केवल उतने वर्गों के सामने ही निशान लगाये जायें जिनसे उत्तरदाता सहमत हो।

13.5 अनुमापन के कार्य

अनुमापन के कार्य निम्नलिखित हैं:

1. तथ्यों को सांख्यिकीय विधियों द्वारा अध्ययन योग्य बनाना

अनुमापन का मुख्य कार्य यह है कि घटनाओं को इस रूप में प्रदर्शित करना ताकि उन्हें सांख्कीय विधियों द्वारा देखा-परखा जा सके। सामाजिक तथ्यों को प्राप्त करने की कई विधियां हैं,जैसे- साक्षात्कार, प्रश्नावली, प्रेषण आदि तथ्यों को प्राप्ति के बाद उनका विश्लेषण किया जाता है। इसके लिये तथ्यों का वर्गीकरण तथा सारिणीयन करना आवश्यक होता है। सामाजिक घटनाओं के सम्बन्ध में संकलित तथ्यों को परिमाणात्मक रूप देने के लिये सूचनाओं को अंक प्रदान किये जाते हैं।

सूचनाओं को अंक प्रदान करना सांख्किीय दृष्टि से अत्यावश्यक है,क्योंकि इनके आधार पर तथ्यों को सरलता से गणितीय रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है। सभी सांख्किीय विधियां, इस अनुमान पर आधारित है कि तथ्य इस प्रकार के हों कि उनका प्रमाणीकरण किया जा सके। अतः तथ्यों को आंकिक रूप प्रदान किया जाना सांख्किीय विधियों की नितान्त आवश्यकता है।

2. प्राक्कल्पना तथा सिद्धान्त निर्माण में सहायक

शोध प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्राक्कल्पनाओं के द्वारा सिद्धान्तों का परीक्षण करना होता है। सिद्धान्त वे युक्तियां हैं जिनके द्वारा सामाजिक-मनोवैज्ञानिक घटनाओं की व्याख्या की जाती है तथा उनके आधार पर भविष्यवाणी की जाती है। शोधकर्ता अपनी प्राक्कल्पनाओं की रचना इन सिद्धान्तों के द्वारा ही करता है। वह अपने तथ्यों को परीक्षण योग्य बनाने के लिये उन्हें आंकित तथ्यों में परिवर्तित करता है ताकि उनका सांख्किीय आधार पर परीक्षण किया जा सके। अनुमापन विधियां गुणात्मक तथ्यों को परिमाणात्मक तथ्यों में परिवर्तित कर सुनिश्चित प्राक्कल्पनाओ को जन्म देती हैं, जिनका वस्तुपरक परीक्षण किया जाना संभव होता है।

3. तुलना अथवा अन्तर प्रदर्शित करने के साधन के रूप में

अनुमापन का मुख्य कार्य यह है कि वह शोधकर्ता को तथ्यों की विशेषताओं की विभिन्नता के आधार पर तुलना करने योग्य बनाती है। माना कि किसी कमरे में बहुत-सी मेज पड़ी हैं। हम यह जानना चाहते हैं कि इनमें से कौन सी मेज सबसे लम्बी है। इसके लिये हम इंच-टेप के द्वारा मेजों की लम्बाई नापकर सबसे लम्बी मेज मालूम कर सकते हैं। इसी प्रकार एक समूह के व्यक्तियों में से सबसे अधिक वजन वाले व्यक्ति को मालूम करने के लिये उन व्यक्तियों के वजन का माप कर सकते हैं।

4. सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक घटनाओं का आनुभविक वर्णन

वर्णनात्मक शोध अभिकल्प का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक परिवेश तथा उस परिवेश के निवासियों का सविस्तार वर्णन करना होता है। एक समाज वैज्ञानिक का कार्य किसी जन-जाति अथवा किसी जन-समुदाय के क्रिया-कलापों, व्यवहारों तथा रीति-रिवाजों का वर्णन करना हो सकता है। इस प्रकार के वर्णनात्मक शोध को सही तथा सुनिश्चित बनाने के लिये अनुमापन विधियां अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई हैं। एक शोधकर्ता अपने संकलित तथ्यों को वर्गीकृत तथा श्रेणीबद्ध भी करना चाहता है,ताकि उनकी तुलना अन्य शोधकर्ताओं के तथ्यों से की जा सके। इस वर्गीकरण की प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की अनुमापन विधियों का सफल प्रयोग किया जाता है। वर्गीकरण के ये तथ्य उसे प्राक्कल्पनाओं की रचना और अन्ततः सिद्धान्तों के निर्माण में सहायक होते हैं। वर्णनात्मक शोध में सांख्यिकीय तथ्यों के द्वारा एक शोधकर्ता लिंग-अनुपात,विवाह की औसत आयु, परिवार के सदस्यों की औसत संख्या, अध्यित समुदाय के सदस्यों का मुख्य व्यवहार,कर्म तथा जातीय आधार पर समुदाय की वर्ग-संरचना का अध्ययन कर सकता है।

13.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में अनुमापन प्रविधियों की उपयोगिता तथा महत्ता के बारे में बताया गया है। किसी भी विषय को वैज्ञानिक बनाने के लिये कुछ विशेष प्रविधियों की आवश्यकता पडती है। अनुमापन

प्रविधियां एक विशेष प्रविधियां होती हैं जिसके द्वारा अध्ययन को वैज्ञानिक तथा तर्कसंगत बनाया जाता है।

13.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. अनुमापन प्रविधियों को परिभाषित कीजिए। शोध कार्य में अनुमापन प्रविधियों की क्या आवश्यकता है ?
2. अनुमापन प्रविधियों के क्या कार्य हैं ?

13.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- -P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- -Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई-14

प्रक्षेपी प्रविधि

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 प्रक्षेपी प्रविधि (Projective Technique)
14.3 प्रक्षेपी प्रविधि की विशेषताएँ
14.4 प्रक्षेपी प्रविधि के लाभ
14.5 प्रक्षेपी प्रविधि की सीमाएँ
14.6 प्रक्षेपी प्रविधि प्रयोग हेतु सावधानियाँ
14.7 सारांश
14.8 अभ्यास प्रश्न
14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- प्रक्षेपी प्रविधि का अर्थ एव परिभाषाएं समझ सकेंगे।
- प्रक्षेपी प्रविधि की विशेषताओं को जान सकेंगे।
- प्रक्षेपी प्रविधि का लाभ, सीमाएं तथा सावधानियों से परिचित हो सकेंगे।

14.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में प्रक्षेपी प्रविधि का अर्थ, परिभाषा, विशेषता, लाभ एवं सीमाओं तथा सावधानियों के बारे में बताया गया है। प्रक्षेपी प्रविधियों का प्रयोग एक घटना का दूसरी घटना से अन्तसम्बन्ध का पता लगाने हेतु किया जाता है। प्रक्षेपी प्रविधियां अन्तर्सम्बन्धों तथा घटनाओं का विश्लेषण करने हेतु प्रयुक्त होती है।

14.2 प्रक्षेपी प्रविधि

प्रक्षेपी प्रविधि का अर्थ

व्यक्ति हमेशा से किसी न किसी रूप में अपने को प्रत्येक क्रिया में प्रक्षेपित करता रहा है। मानव स्वभाव कुछ इस प्रकार का होता है कि वह अपने जीवन से सम्बन्धित महत्वपूर्ण घटनाओं और विवादग्रस्त मामलों को व्यक्त नहीं करता। इन्ही विवादग्रस्त तथ्यों के द्वारा व्यक्ति की मनोवृत्ति, भावनाओं और विश्वासों को समझने में सहायता मिलती है। व्यक्ति के जीवन में अनेक ऐसी घटनायें होती हैं जिनको वास्तविकता के साथ व्यक्त करने में व्यक्ति के पास शब्द नहीं होते। सामाजिक अनुसंधान में ऐसी पद्धतियों या प्रविधियों को अधिक मान्यता दी जाती है जिनमें प्राथमिक तथ्य उपलब्ध होते हैं।

अनुसंधान का मुख्य उद्देश्य सही तथ्यों को प्राप्त करना होता है। कुछ ऐसे तथ्य जो सामाजिक सूचनाओं से सम्बन्धित होते हैं जैसे-आयु, शैक्षिक योग्यता आदि उन्हें सही रूप में प्राप्त करना आसान होता है, लेकिन कुछ ऐसे भी तथ्य होते हैं जिन्हें या तो जानबूझकर उत्तरदाता सही-सही नहीं बताता। अतः अनुसंधानकर्ता को अप्रत्यक्ष प्रविधियों को अपनाना पड़ता है। प्रक्षेपीय प्रविधियां इन्हीं के अन्तर्गत आती हैं। गुडे तथा हाट (Goode & Hott) के अनुसार, ''प्रक्षेपीय तथ्य की मूल प्रकृति, प्रत्यक्ष तथ्य के विषय में यह है कि इस प्रकार के तथ्य यथासम्भव किसी परिस्थिति की संरचना नहीं करते।'' इस प्रकार यह आशा की जाती है कि उत्तरदाता के उत्तर बहुत कुछ उसकी सच्ची मनोदशा के समीप हों और उनके पूर्वाग्रहों से प्रभावित नहीं हों जैसा कि प्रत्यक्ष विधियों द्वारा परिस्थितियों को संरचित करने में होता है।

अनुसन्धान प्रविधि के सन्दर्भ में ''प्रक्षेपण'' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग फ्रायड (Freud) ने 1841 ई. में किया। मनोविश्लेषात्मक प्रविधियों (Psychoanalytical Techniques) के जन्मदाता के रूप में फ्रायड ने अनेक ऐसी पद्धतियों को भी विकसित किया जिनका उद्देश्य अचेतन मन में दबे हुये तथ्यों को उभारना था। चेतन मन के तथ्यों को जान लेना सुगम व अवचेतन मन के तथ्यों को जानना दुष्कर है, लेकिन अचेतन मन के तथ्यों को निकालना असंभव है। इन्हीं तथ्यों को निकालने की पद्धतियों एवं प्रविधियों के विकास में फ्रायड का सबसे बड़ा योगदान है।

ऐसी बात नहीं है कि मनुष्य से सम्बन्धित अचेतन मन के तथ्यों को निकालने के अन्य प्रकार के प्रयास फ्रायड के पहले नहीं हुये थे, लेकिन ऐसे सभी प्रयास अवैज्ञानिक अथवा काल्पनिक ही कहे जा सकते हैं जैसे-हस्तरेखा द्वारा या अंकों के द्वारा आदि। फ्रायड ने जिन प्रक्षेपीय प्रविधियों का विकास किया है उनसे मन की गहराई में छिपे तथ्यों को उभार सकते हैं जिनकी उपस्थिति का ज्ञान उत्तरदाता में भी नहीं होता। हम अपने अचेतन मन में छिपे तथ्यों से अनभिज्ञ होते हैं एवं नहीं जानते कि कैसे और किन अवसरो पर यह हमारी क्रियाओं में अभिव्यक्त नहीं कर पाता। अधिक से अधिक वह अपने मनोविश्लेषक या मनोचिकित्सक के साथ सहयोग कर सकता है। मनोविश्लेषक जिन-जिन आधारों को उसके समक्ष रखता है जैसे-जैसे निर्देश देता जाता है, वैसे-वैसे उत्तरदाता उन आधारों पर अपनी प्रतिक्रियायें व्यक्त करता है। इन्हीं अभिव्यक्तियों में उसके अचेतन मन के तथ्य उभर आते हैं। प्रक्षेपीय प्रविधियों में हम कुछ आधारों पर उद्दीपनों को उत्तरदाता के समक्ष रखते हैं और उन पर उसकी हुई प्रतिक्रियाओं को तथ्यों का रूप देते हैं। ये तथ्य किसी व्यक्ति के अचेतन मन की दबी मनोदशाओं को इस रूप में उभार देते हैं जैसे वे प्रत्यक्ष तथ्य हों।

इन समस्त समस्याओं का समाधान करने के लिये तथा मनुष्य की भावनाओं, विश्वासों और मनोवृत्तियों का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने के लिये जिस अप्रत्यक्ष विधि को अपनाया जाता है उसे ही प्रक्षेपी विधि के नाम से जाना जाता है।

प्रक्षेपी प्रविधि की परिभाषाएं

पी. वी. यंग **(P V Young)** के अनुसार, ''प्रक्षेपी विधि प्रत्यक्ष प्रश्न पद्धति और स्वयं सूचना के स्थान पर उत्तरदाता को असंरचित उत्तेजक परिस्थिति प्रदान करता है, जिसमें वह स्वतन्त्रतापूर्वक निश्चित रूप से अपने और सामाजिक संसार के सम्बन्ध में विचार प्रकट कर सके।''

फ्रैंक **(Frank)** के अनुसार, ''प्रक्षेपी विधि में एक उत्तेजक परिस्थिति का प्रस्तुतीकरण या चुनाव निहित है जो कि विषय से सम्बन्धित है न कि स्वेच्छापूर्वक प्रयोगात्मकता से । अर्थात् मूल रूप से

विशेष परिस्थिति या दशा में व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले आवेगों-संवेगों के संगठनात्मक स्वरूप से है।''

क्लिपैट्रिक **(Klipatrick)** के अनुसार, ''प्रोजेक्ट एक उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जिसे मन लगाकर सामाजिक वातावरण में किया जाता है।''

स्टीवेंसन **(Stevenson)** के अनुसार, ''प्रोजेक्ट एक समस्यामूलक कार्य है,जिसे स्वाभाविक परिस्थिति में पूरा किया जाता है।''

एण्डरसन **(Anderson)** के अनुसार, ''प्रक्षेपी परीक्षण केवल परीक्षण नहीं वरन् यह गतिशील व्यक्तित्व के मानसिक नियन्त्रीकरण का परीक्षण है, जिसमें प्रक्षेपण निहित है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन एवं अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि प्रक्षेपी प्रविधियों का कार्य उत्तरदाता के लिये एक विशेष प्रेरणा अथवा उद्दीपन प्रदान करना है जिसके अन्तर्गत उत्तरदाता किसी विशेष वस्तु अथवा प्रतीक में अपने व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताओं का आरोपण करता है। प्रक्षेपीय प्रविधियों का उपयोग व्यक्तित्व के रागात्मक पहलुओं के विस्तृत एवं उचित अध्ययन में सहायता प्रदान करता है। व्यक्तित्व के रागात्मक पहलुओं के सन्दर्भ में तब तक कोई निष्कर्ष प्राप्त नहीं किये जा सकते जब तक कि शोधकर्ता उत्तरदाता के चेतन एवं मौखिक प्रत्युत्तरों पर निर्भर न हो। ऐसा इसलिये होता है क्योंकि:

1. उत्तरदाता का व्यवहार सामान्यतः अचेतन भावनाओं एवं संवेगों से सम्बन्धित होता है जिनसे वह अवगत नहीं होता।
2. उत्तरदाता के अपनी भावनाओं से अवगत होने के बावजूद भी वह उन्हें स्पष्ट, उचित एवं प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त करने में अपने आप को असमर्थ पाता है।
3. उत्तरदाता कभी-कभी शोधकर्ता से तथा कभी स्वयं अपने-आप से अनेक बातों को छुपाना चाहता है।

14.3 प्रक्षेपी प्रविधि की विशेषताएं

विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं के अध्ययन एवं अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि प्रक्षेपी विधि की सहायता से व्यक्ति की विभिन्न प्रतिक्रियाओं को उत्तेजित और जाग्रत करने का प्रयास किया जाता है। प्रक्षेपी विधि की प्रमुख विशेषता प्रतिक्रियाओं की प्रमुख अभिव्यक्ति है।

प्रक्षेपी विधि की दूसरी प्रमुख विशेषता मानव की मनोवैज्ञानिक प्रकृति के ज्ञान से सम्बन्धित है। व्यक्ति जो विचार व्यक्त करता है उनके केन्द्र में उस व्यक्ति की मनोवैज्ञानिक विशेषतायें स्पष्ट प्रतीत होती है।

प्रक्षेपी विधि की सहायता से जनमत की जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। इस विधि के द्वारा असामान्य और सामान्य अनके प्रकार के चित्रों को दिखाया जाता है और उत्तरदाता के मन को जानने का प्रयास किया जाता है।

प्रक्षेपी विधि की विशेषता एक यह भी है कि इसके अन्तर्गत मानव के व्यक्तित्व का विश्लेषण किया जाता है। अनुकूल स्थिति में व्यक्ति अपने व्यवहारों के द्वारा किस प्रकार का निर्णय लेता है। प्रक्षेपी विधि से इस आशय की जानकारी प्राप्त होती है।

प्रक्षेपी विधि की सहायता से उत्तरदाताओं की वास्तविकता की जानकारी प्राप्त की जाती है। इसके द्वारा व्यक्ति की आवश्यकताओं का ज्ञान होने के साथ-साथ इसके मूल्य,आदर्श,मापदण्ड और विचार तथा इनमें होने वाले परिवर्तनों के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है।

उपर्युक्त विशेषताओं के अतिरिक्त प्रक्षेपी विधि की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि इसके द्वारा घटनाओं के कार्य-कारण सम्बन्धों की जानकारी की जाती है।

14.4 प्रक्षेपी प्रविधि के लाभ

प्रक्षेपी प्रविधियों के उपयोग से निम्नलिखित लाभ होते हैं:

1. प्रक्षेपी प्रविधियों के माध्यम से व्यक्तित्व के स्नेहित्वपूर्ण पहलुओं को समझने में सहायता मिलती है।
2. ये प्रविधियाँ उन मानवीय भावनाओं एवं मनोवृत्तियों पर ध्यान केन्द्रित करने में समर्थ होती हैं जिनके परिपेक्ष्य में उत्तरदाताओं को स्वयं चेतन रूप से जानकारी नहीं होती ।
3. ये प्रविधियाँ सामान्यतया निदानात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करती हैं। इसीलिये इन प्रविधियों का विस्तृत प्रयोग चिकित्सा विज्ञान के अन्तर्गत किया जाता है।
4. तथ्य संग्रहण में अन्य प्रविधियों की तुलना में ये प्रविधियाँ अधिक गहनता में जाकर सूचना प्राप्त करने में समर्थ होती हैं।
5. प्रक्षेपी प्रविधियों की सहायता से एकत्रित किये गये तथ्यों के उचित रूप से विश्लेषित एवं निर्वचित किये जाने पर विशेष परिस्थितियों के अन्तर्गत प्रदर्शित किये जाने वाले व्यवहार के विषय में भविष्यवाणी की जा सकती है।

14.5 प्रक्षेपी प्रविधि की सीमाएं

प्रक्षेपीय प्रविधियों की निम्नलिखित प्रमुख सीमायें हैं:

1. इन प्रविधियों के प्रयोग के लिये इनकी संरचना, प्रशासन, जांच तथा अंक निर्धारण की दृष्टि से पर्याप्त निपुणता का होना बहुत आवश्यक है।
2. प्रक्षेपीय प्रविधियों के प्रयोग में लाये जाने में अधिक समय लगने की सम्भावनायें प्रबल होती हैं।
3. ये प्रविधियां निश्चित क्षेत्रों में या सीमित क्षेत्रों में प्रयोग में लायी जाती हं ै, या हम कह सकते है कि इनका क्षेत्र सीमित होता है।

14.6 प्रक्षेपी प्रविधि के प्रयोग हेतु सावधानियां

प्रक्षेपी प्रविधि सामाजिक अनुसंधान की एक उपयोगी विधि है। इस विधि से तथ्यों का पता लगाने के लिये कुछ सावधानियाँ आवश्यक हैं। इन सावधानियों के द्वारा प्रक्षेपी विधि को अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है। इस विधि को वस्तुनिष्ठ बनाने तथा उद्देश्य को स्पष्ट करने के लिये निम्नलिखित सावधानियाँ आवश्यक हैं:

1. उद्देश्य को अस्पष्ट रखा जाना चाहिये और काल्पनिक उद्देश्य का निर्माण किया जाना चाहिये।
2. उत्तरदाता के समक्ष अनेक प्रकार की विषय-वस्तु प्रस्तुत करना चाहिये और उससे अपने विषय से सम्बन्धित वस्तुओं को अलग करके निष्कर्ष निकालना चाहिये।

14.7 सारांश

प्रस्तुत इकाई में प्रक्षेपी प्रविधियों के द्वारा किसी अध्ययन को कैसे प्रभावोत्पादक तथा तर्कसंगत बनाया जाय, इसके बारे में बताया गया है सामाजिक विज्ञान के विषयों में एक घटना का दूसरी घटना से सहसम्बन्ध होता है तथा अन्तर्सम्बन्ध भी पाया जाता है। अतः सामाजिक विज्ञान के विषयों में प्रक्षेपी प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है।

14.8 अभ्यास हेतु प्रश्न

1. प्रक्षेपी प्रविधि को परिभाषित करते हुए इसके लाभ एवं सीमाओं को बताइये ?
2. प्रक्षेपी प्रविधि का अर्थ समझाइए तथा इसकी विशेषताओं को बताइये ?

14.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई-15

तथ्य प्रक्रमण सम्पादन :, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारिणीयन

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 तथ्य प्रक्रमण (Data Processing)
    15.2.1 सम्पादन (Editing)
    15.2.2 संकेतन (coding)
    15.2.3 वर्गीकरण (Classification)
    15.2.4 सारिणीयन (Tabulation)
15.3 सारांश
15.4 अभ्यास प्रश्न
15.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्य प्रक्रमण में सम्मिलित सम्पादन के बारे में जान सकेंगे
- संकेतन, वर्गीकरण के बारे में जान सकेंगे
- सारिणीयन के बारे में जान सकेंगे।

15.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में तथ्य प्रक्रमण के बारे में बताया गया है। तथ्य प्रक्रमण के द्वारा आंकडों को ठीक करना तथा संकेन्द्रण का कार्य किया जाता है। इसके अन्तर्गत सम्पादन संकेतन वर्गीकरण तथा सारिणीयन का प्रयोग किया जाता है। तथ्यों या सूचनाओं के सम्पादन की प्रक्रिया में सूचनाओं का सूक्ष्म निरीक्षण कर भूलों या कमियों का सुधार किया जाता है। सांकेतिकीकरण के अन्तर्गत प्रत्येक ऐसे उत्तर को एक संख्या अथवा संकेत से निर्धारित किया जाता है जो एक पूर्व निर्धारित वर्ग में पाया जाता है। वर्गीकरण के अन्तर्गत संख्याओं को उनकी समान और भिन्न विशेषताओं के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों और समूहों में विभाजित किया जाता है तथा सारिणीयन के अन्तर्गत तथ्यों को कालमों (Columns) एवं पंक्तियों (Rows) में प्रस्तुत किया जाता है।

15.2 तथ्य प्रक्रमण

आँकड़ों के प्रक्रमण का सम्बन्ध आँकड़ों के सन्केन्द्रण, पुनर्निधारण तथा इन्हें ठीक करने से है जिससे कि इसका प्रयोग अध्ययनगत समस्या के लिए विश्लेषण हेतु किया जाता है। प्रक्रमण में निम्नलिखित सम्मिलित हैं- सम्पादन, सांकेतिकीकरण, वर्गीकरण एवं सारिणीयन।

15.2.1 सम्पादन(Editing)

अर्थ

अनुसंधान के लिए हम कह सकते हैं कि विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं में अनेक प्रकार की असंगतियाँ हो सकती हैं। अनेक सूचनाएं अस्पष्ट एवं सन्देहजनक भी हो सकती हैं, ऐसी सूचनाओं के अन्दर अनेक अपूर्णताएं हो सकती हैं, जिन्हें दूर किये बिना सामग्री का उपयोग सम्भव नहीं होता, अतः तथ्यों या सूचनाओं के सम्पादन की प्रक्रिया में सूचनाओं का सूक्ष्म निरीक्षण कर भूलों या कमियों का सुधार किया जाता है। इस प्रकार तथ्यों के सम्पादन की प्रक्रिया को तथ्यों के संशोधन एवं परिमार्जन की प्रक्रिया कहा जा सकता है, लेकिन संशोधन या परिमार्जन का तात्पर्य सामग्री की मूल प्रकृति में परिवर्तन करना होता है। यदि सम्पादन करने से सामग्री के मूल स्वरूप में कोई प्रभाव पड़ता है तो सम्पादन की प्रक्रिया दोषपूर्ण है। तथ्यों के सम्पादन की प्रक्रिया में सामान्यतः निष्पक्षता, तथ्यों के परीक्षण की क्षमता,शोध का उद्देश्य, तथ्यों की विश्वसनीयता, सूचनाओं की मात्रा, तथ्यों की एकरूपता आदि बातों का ध्यान रखना आवश्यक है।

15.2.2 संकेतन(Coding)

अर्थ

सांकेतिकीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा आँकड़ें वर्गों में संगठित किये जाते हैं तथा प्रत्येकपद को उस वर्ग के अनुसार जिसमें यह पाया जाता है, एक संख्या अथवा संकेत प्रदान किया जाता है।

सांकेतिकीकरण सामाजिक अनुसंधान के अन्तगर्त अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके अन्तर्गत आंकड़ों को विभिन्न वर्गों में संगठित करते हुए उन्हें संकेत अथवा अंक निर्धारित किए जाते हैं जिसके परिणामस्वरूप आंकड़ों का विश्लेषण अधिक विस्तृत रूप से सम्भव हो पाता है।

परिभाषाएं

सांकेतिकीकरण का अर्थ कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गई निम्नलिखित परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट किया गया है:

गुडे तथा हाट (Goode & Hott) के अनुसार, ''सांकेतिकीकरण एक क्रिया है जिसके द्वारा आंकड़े वर्गों में संगठित किए जाते हैं, तथा प्रत्येक मद को उस वर्ग के अनुसार जिसमें यह पाया जाता है, एक संकेत अथवा संख्या प्रदान की जाती है।''

क्लेयर सेलिज **(Clair)** तथा अन्य के मत में, ''सांकेतिकीकरण वह प्राविधिक कार्यरीति है जिसके द्वारा आंकड़े श्रेणीबद्ध किए जाते हैं। सांकेतिकीकरण के माध्यम से मौलिक आंकड़े ऐसे संकेतों-प्रायः अंकों-के रूप में परिवर्तित कर दिए जाते हैं जिन्हें सारिणीबद्ध किया जा सकता है तथा गिना जा सकता है।''

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि सांकेतिकीकरण की परिभाषा एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में की जा सकती है जिसके अन्तर्गत एक पूर्व निर्धारित वर्ग के अन्तर्गत पाए जाने वाले प्रत्युत्तर को अंक अथवा संकेत निर्धारित किए जाते हैं, जो गिने जा सकते हैं तथा जिन्हें सारिणी के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है।

विशेषताएं

1. संकेतीकण विभिन्न तथ्यों को कुछ वर्गों एवं श्रेणियों में संगठित करने का एक तरीका है।
2. इसमें तथ्यों के प्रत्येक पद को उसके वर्ग के अनुरूप प्रतीक, संकेत या अंक प्रदान किया जाता है।
3. इसमें विभिन्न प्रकार की सूचनाओं को उनकी महत्ता के आधार पर विशेष भार प्रदान किया जाता है।
4. संकेतीकरण एक ऐसी क्रिया-विधि है जिसमें उत्तरदाता से सूचनाएं प्राप्त करने में आसानी रहती है।
5. संकेतीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जो तथ्यों को संकेतों के रूप में परिवर्तित कर सारणीयन के कार्य को सरल बना देती है।

15.2.3 वर्गीकरण (Classification)

अर्थ

वर्गीकरण विज्ञान के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि यह हमारी विचारधारा को एक तर्क तथा अनुकूलतापूर्ण दिशा प्रदान करता है। विज्ञान के अन्तर्गत वर्गीकरण का महत्व इसलिए है क्योंकि यह हमें अनेक घटनाओं के समूह में एकरूपताओं की खोज करने तथा उन्हें स्पष्ट करने में सहायता प्रदान करता है।

परिभाषाएं

कार्न **(Corn)** के अनुसार, ''वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत हम वस्तुओं को उनकी समानताओं एवं सादृश्य के आधार पर वास्तविक अथवा काल्पनिक रूप से समूहों अथवा वर्गों में व्यवस्थित करते हैं तथा जो विविधतापूर्ण वस्तुओं में गुणों की एकता को व्यक्त करती है।''
कोनोर **(Knorr)** के अनुसार, ''वर्गीकरण समंकों (तथ्यों) को उनकी समानता, सादृश्यता के आधार पर वर्गों तथा समूहों में क्रमबद्ध करने तथा व्यक्तिगत इकाइयों की विभिन्नता के बीच उपस्थित गुणों की एकता को प्रकट करने की क्रिया है।''
एलहान्स, ''सादृश्यताओं व समानताओं के आधार पर समंको (तथ्यों) को समूहों तथा वर्गों में व्यवस्थित करने की प्रक्रिया है।''

15.2.4 सारिणीयन (Tabulation)

अर्थ

सामाजिक शोध में केवल विषय या समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन ही नहीं किया जाता, वरन् संकलित आंकड़ों को तालिका या सारिणियों के रूप में प्रकट भी किया जाता है। यह वह विधि है जिसमें संकलित आंकड़ों को व्यवस्थित,बोधगम्य एवं संक्षिप्त बनाया जाता है। इसमें एक ही शीर्षक से सम्बन्धित सूचनाओं को एक साथ प्रदर्शित किया जाता है। सारिणीयन में गुणात्मक तथा

परिमाणात्मक दोनों ही प्रकार के आंकड़ों को संख्यात्मक रूप में प्रकट किया जाता है। और इधर-उधर बिखरे हुये आंकड़ों को एकत्रित करके संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

परिभाषाएं

सारिणीयन की कुछ परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं:

एल्हांस के अनुसार, ''विस्तृत अर्थ में, तथ्यों को स्तम्भों में क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित करने को सारिणीयन कहते हैं।''

कानर के अनुसार, ''सारिणीयन किसी विशेष समस्या को स्पष्ट बनाने के लिए आँकड़ों का नियमित एवं सुव्यवस्थित प्रदर्शन है।''

क्लार्क एवं सकाडे के अनुसार, ''सांख्किीय सारिणी, संक्षिप्त विवरण सहित यह बताने के लिये वे क्या हैं?, संख्याओं का एक तर्कपूर्ण क्रम से प्रस्तुतीकरण है।''

स्पुअर के अनुसार, ''एक साख्यिकीय सारिणी सम्बन्धित तथ्यों का उदग्र खानें तथा समतल पंक्तियों में किया गया वर्गीकरण होता है।''

15.3 सरांश

प्रस्तुत इकाई में तथ्य प्रक्रमण यथा संपादन, संकेतन, वर्गीकरण एवं सारणीयन के विषय में बताया गया है। इसके अन्तर्गत तथ्यों को एकत्र करने के उपरान्त उनका प्रक्रमण किया जाता है जिससे कि शोध के निष्कर्ष सही और विश्वसनीय निकल कर आते हैं। तथ्य प्रक्रमण के आभाव में तथ्यों का सही निष्कर्ष निकाल पाना असम्भव है तथा शोध निरर्थक साबित हो जायेगा।

15.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सम्पादन से आप क्या समझते हैं?
2. संकेतीकरण का अर्थ स्पष्ट करते हुए इसकी विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?
3. वर्गीकरण का अर्थ बताते हुए इसे परिभाषित कीजिए?
4. सारिणीयन तथ्य प्रक्रमण के लिये किस प्रकार उपयोगी है? समझाइये।

15.5 सन्दर्भ ग्रन्थ

- -P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- -Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई-16

तथ्यों का विश्लेषण एवं निर्वचन

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य
16.1 प्रस्तावना
16.2 तथ्यों का विश्लेषण (Data Analysis)
16.3 तथ्य विश्लेषण की पूर्व आवश्यकताएं
16.4 तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया
16.5 तथ्यों का निर्वचन (Data Interpretation)
16.6 सारांश
16.7 अभ्यास प्रश्न
16.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- तथ्यों का विश्लेषण एवं निर्वचन प्रक्रिया को जान सकेंगे।
- निर्वचन सम्बन्धी त्रुटियों को जान सकेंगे।

16.1 प्रस्तावना

तथ्यों का विश्लेषण एवं निर्वचन किसी भी शोध-विषय से संबंधित अध्ययन के लिए आवश्यक होता है | तथ्यों को व्यवस्थित करने की विधि वैज्ञानिक व संख्यिकीय होना चाहिए। तथ्यों का विश्लेषण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शोध से सम्बन्धित सूचनाओं के वर्णन एवं निष्कर्ष के मध्य अन्तर स्थापित किया जाता है।

16.2 तथ्यों का विश्लेषण

तथ्यों के सारिणी के रूप में संग्रहीत किये जाने के उपरान्त हम प्रतिपादित किये गये शोध प्रश्नों के उत्तर विश्लेषण की सहायता से प्राप्त करना चाहते हैं। विश्लेषण का अर्थ आंकड़ों को क्रमबद्ध करना एवं निर्माणकारी तत्वों के रूप में सम्मिलित करना है। विश्लेषण का कार्य विचारपूर्ण आधारशिला की स्थापना करना है जिसकी सहायता से संकलित तथ्यों को उचित संस्थिति एवं सम्बन्धों के रूप में व्यवस्थित किया जा सके। सारिणीबद्ध तथ्यों का तार्किक एवं सांख्यिकीय दोनों प्रकार के तथ्यों के ढंगों का उपयोग करते हुये विश्लेषण किया जाता है और विश्लेषण से प्राप्त परिणामों को अन्य अध्ययन से प्राप्त परिणामों के सन्दर्भ में प्रस्तुत किया जाता है और सापेक्ष गुणों एवं सीमाओं को स्पष्ट करते हुये निष्कर्ष निकाले जाते हैं।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि विश्लेषण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शोध से सम्बन्धित सूचनाओं के वर्णन एवं निष्कर्ष के मध्य अन्तर स्थापित किया जा सके। किसी भी शोध कार्य के लिये आवश्यक होता है कि समस्या या उसके उपयुक्त समाधान का विश्लेषण किया जाये।

पी.वी. यंग (P V Young) के अनुसार, "एक सामाजिक अध्ययनकर्ता यह मानकर चलता है कि संकलित तथ्यों के पीछे स्वयं तथ्यों और आंकड़ों से बढ़कर भी कोई ऐसी वस्तु है जो अधिक महत्वपूर्ण तथा स्थिति पर प्रकाश डालने वाली होती है। वह यह मानकर चलता है कि यदि सुविचारित तथा सुव्यवस्थित तथ्यों को संकलित आंकड़ों के सन्दर्भ में देखा जाय तो उनके महत्वपूर्ण सामान्य अर्थ को समझकर उनके आधार पर वैध सामान्यीकरण को प्राप्त किया जा सकता है। "अतः हम कह सकते हैं कि तथ्यों का विश्लेषण इसी प्रकार के वैध अथवा वैज्ञानिक सामान्यीकरण को प्राप्त करने की एक कार्य-विधि है।''

16.3 तथ्य-विश्लेषण के लिये पूर्व आवश्यकतायें (Pre-requisites of Data Analysis)

तथ्यों का विश्लेषण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया अवश्य है लेकिन इसकी सफलता बहुत बड़ी सीमा तक अनुसन्धानकर्ता के वैयक्तिक गुणों पर निर्भर करती है। एक अनुसन्धानकर्ता व्यवस्थित रूप से तथ्यों का विश्लेषण मात्र तभी कर सकता है जब वह कुछ आवश्यक शर्तों को पूरा करता हो। आवश्यक शर्तें निम्नवत्: हैं:-

1. तथ्यों के विषय में पूर्ण ज्ञान (Complete Knowledge of Facts)

तथ्यों के व्यवस्थित विश्लेषण की आवश्यक शर्त यह है कि शोधकर्ता को उन तथ्यों का पूर्ण और व्यवस्थित ज्ञान हो जिनका उसे विश्लेषण करना है।

2. घटनाओं के सम्बन्ध में अन्तर्दृष्टि (Insight about Events)

शोधकर्ता के सामने बहुत से तथ्य संकलित होते हैं लेकिन वह विश्लेषण करते समय अनेक घटनाओं एवं परिस्थितियों का स्वयं अवलोकन करता रहता है।इन घटनाओं और परिस्थितियों के विषय में शोधकर्ता की अन्तर्दृष्टि जितनी स्पष्ट और गहरी होती है,वह उसकी सहायता से तथ्यों का विश्लेषण उतने ही वैज्ञानिक रूप में करने में सफल हो जाता है।

3. आलोचनात्मक दृष्टि (Critical Vision)

तथ्यों के विश्लेषण का अर्थ मात्र प्राप्त तथ्यों का वर्गीकरण करना अथवा उनकी विवेचना कर देना मात्र नहीं होता । इसके अन्तर्गत विभिन्न तथ्यों के बीच पाये जाने वाले सह-सम्बन्धों को स्पष्ट करने के लिये एक आलोचनात्मक दृष्टि की भी आवश्यकता होती है। पी. वी. यंग (P V Young) के अनुसार, ''विश्लेषण प्रक्रिया की एक महत्वपूर्ण आवश्यक शर्त यह है कि एक ऐसी आलोचनात्मक और अनुशासित दृष्टि विकसित कर ली गई हो, जो तथ्यों के आधार पर एक वैज्ञानिक विचारधारा को प्रस्तुत करने में सक्षम हो सके तथा जिसके आधार पर समस्त तथ्यों के पारस्परिक सम्बन्धों को समझकर उनका आलोचनात्मक परीक्षण किया जा सके।

4. अनुभव, उत्तरदायित्व अथवा बौद्धिक ईमानदारी (Experience, Responsibility and Intellectual Honesty)

तथ्यों के विश्लेषण की प्रामाणिकता बहुत कुछ हद तक वैज्ञानिक कार्य-विधि तथा निर्धारित नियमों के अनुपालन पर निर्भर करती है। तत्पश्चात् भी अनुसंधानकर्ता में जब तक स्वयं भी अनुभव,उत्तरदायित्व तथा बौद्धिक ईमानदारी का गुण नहीं होता है तब तक निर्धारित नियमों का अनुपालन व्यवस्थित रूप से नहीं किया जा सकता। बौद्धिक ईमानदारी वह सर्वप्रमुख आधार है जो व्यक्तिगत अभिनति की सम्भावना को कम कर देता है।

5.अभिनति से स्वतंत्र (Free from bias)

तथ्यों के विश्लेषण के लिये यह भी आवश्यक है कि अनुसन्धानकर्ता अथवा विश्लेषक संकलित तथ्यों के अनुरूप ही विषय को वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत करे। इसका अर्थ यह है कि किसी भी स्थिति में तथ्यों के विश्लेषण में वैयक्तिक पक्षपात अथवा अभिनति का समावेश नही होना चाहिये।

16.4 तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया (Process of Data Analysis)

तथ्यों का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करने के लिये एक कुशल अनुसंधानकर्ता को एक प्रक्रिया के माध्यम से तथ्यों का विश्लेषण करना नितान्त आवश्यक होता है।

उपर्युक्त विवरण से तथ्यों के विश्लेषण की प्रक्रिया बहुत कुछ सीमा तक स्पष्ट हो जाती है। पी वी यंग **(P V Young)** ने विश्लेषण की प्रक्रिया को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया हैः-

1. तथ्यों की माप

तथ्यों को शोध हेतु उपयोगी बनाने के लिये इस बात की अत्यधिक आवश्यकता है कि उनकी परीक्षा कर ली जाये। तथ्यों का पुनर्परीक्षण करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि उसमें यथार्थता एवं विषयकता है या नहीं। विषयकता का गुण विद्यमान नहीं रहने पर उन तथ्यों का पुनः परीक्षण कर लेना आवश्यक है तथा इस बात की जांच भी जरूरी है कि विषयकता का गुण किसी कारण समाप्त हो गया है। यथार्थता की अनुपस्थिति में विश्लेषण कितना भी अच्छी तरीके से किया गया हो उसका कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता है। उन सब बातों के मध्य इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि संकलित तथ्य महत्वहीन या महत्वपूर्ण हैं।

2. रूपरेखा की तैयारी

एक रूपरेखा अध्ययन का वह ढांचा होती है जिस पर सम्पूर्ण अध्ययन आधारित होता है। रूपरेखा तैयार करने से पूर्व महत्वपूर्ण तथ्यों को आसानी से समझा जाना नितान्त आवश्यक है। स्पष्ट तथा मितव्ययी विचारधारा के विकास तथा विविध तथ्यों के विस्तृत क्षेत्र के विषय में सहज तथा क्रमबद्ध स्पष्टीकरण एक रूपरेखा के बिना सम्भव नहीं है। एक रूपरेखा वास्तव में तथ्यों का एक आरम्भिक वर्गीकरण भी होता है जो कि विषय से सम्बन्धित महत्वपूर्ण तथ्यों को पहचानने में हमारी सहायता करता है।

3. तथ्यों का व्यवस्थित वर्गीकरण

मार्गदर्शक के रूप में एक रूपरेखा का निर्माण कर लेने के पश्चात् तथ्यों का वर्गीकरण करने की अवस्था आती है। सामाजिक विज्ञानों में वर्गीकरण विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि सामाजिक घटनाओं में एक परिस्थिति को अनेक कारक प्रभावित करते हैं तथा उन कारकों में अत्यधिक विविधतायें भी होती हैं।

4. अवधारणाओं का निर्माण

एकत्रित तथ्यों का वर्गीकरण कर लेने के बाद अगला चरण अवधारणाओं का निर्माण होता है। अवधारणा के निर्माण का सामाजिक शोध में महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है इसके द्वारा बिना किसी कठिनाई के किसी घटना विशेष या परिस्थिति को समझा जा सकता है।

5. तुलना तथा व्याख्या

संकलित तथ्यों के व्यवस्थित वर्गीकरण और अवधारणाओं का निर्माण कर लेने के बाद तथ्यों के सामान्य प्रतिमान स्पष्ट हो जाते हैं। तब इन प्रतिमानों की तुलना सम्भव हो जाती है। तुलनात्मक विश्लेषण किसी भी वैज्ञानिक निष्कर्ष के लिये आवश्यक होता है। तुलना करने से विभिन्न तथ्यों का स्पष्टीकरण हो जाता है, तथा हम उनकी गहराइयों की और विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकते है।

6. सिद्धान्तों का प्रतिपादन

तथ्यों की व्याख्या के उपरान्त सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है,अतः इसके सम्बन्ध में अत्यधिक सावधानी की आवश्यकता होती है। ये सिद्धान्त वास्तव में व्याख्या के आधार पर निकाले गये निष्कर्षो का अति संक्षिप्त रूप होते हैं। सिद्धान्तों का प्रतिपादन तथ्यों के विश्लेषण का अन्तिम चरण होने के साथ काफी महत्वपूर्ण भी है।

16.5 तथ्यों का निर्वचन

शोधकर्ता का कार्य तथ्य संकलन, तथ्यों का प्रक्रमण करने एवं उनका विश्लेषण करने तक ही सीमित नहीं है अपितु शोध के अन्तिम लक्ष्य की पूर्ति को यथार्थ निष्कर्ष निकालने, सिद्धान्तों का निर्माण करने, पुराने सिद्धान्तों की सत्यता-असत्यता की जांच करने एवं सामान्यीकरणों को प्राप्त करने पर ही होती है। इस कार्य हेतु तथ्यों का निर्वचन शोध प्रक्रिया का एक प्रमुख एवं महत्वपूर्ण चरण है। इसका कारण यह है कि संकलित तथ्यों की उपयोगिता निर्वचन द्वारा ही स्पष्ट होती है। निर्वचन का कार्य अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए अन्यथा त्रुटिपूर्ण निष्कर्ष निकलने की सम्भावनायें बनी रहेंगी।

हार्पर (Harper) के अनुसार, इस बात का ध्यान हमेशा रखा जाना चाहिये कि निष्कर्ष उन मौलिक आंकड़ों या तथ्यों, जिन पर वह आधारित है, से उत्तम नहीं हो सकता। यदि तथ्यों का संकलन सही ढंग से नहीं किया गया है तो उनके विश्लेषण एवं निर्वचन पर समयधन एवं साधनों का अपव्यय होगा। यही बात निर्वचन के लिये भी सही है। ऐसे अध्ययनों से सही निष्कर्ष निकालना या वैज्ञानिक सत्यता की जाचं कर पाना असम्भव होगा।

सिम्पसन एवं काफ्का (Simpson & Kafka) के अनुसार, निर्वचन सम्बन्धी चार महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया जा सकता है:

1. शोधकर्ता को तथ्यों में क्या है, की जानकारी करने की उत्सुकता होनी चाहिये।
2. तर्कपूर्ण चिन्तन का सहारा लेते हुये तथ्यों के विभिन्न पक्षों का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करना चाहिये।
3. तथ्यों की पृष्ठभूमि की जानकारी होनी चाहिये।
4. ठोस निर्वचन के लिये आवश्यक है कि शोधकर्ता स्पष्ट, क्रमबद्ध एवं समालोचनात्मक भाषा का प्रयोग करे।

उपर्युक्त बातों या नियमों का ध्यान नहीं रखने पर निर्वचन और उस पर आधारित निष्कर्ष भ्रामक एवं त्रुटिपूर्ण हो सकते हैं। इन नियमों को ध्यान में रखकर ही सही निर्वचन किया जा सकता है। ऐसे

निर्वचन से ही तथ्यों में मौजूद प्रवृत्तियों के आधार पर प्रामाणिक निष्कर्ष निकाले और वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन किया जा सकता है। उपर्युक्त नियमों को ध्यान में नहीं रखने पर निर्वचन में त्रुटियां आ सकती हैं।

निर्वचन सम्बन्धी त्रुटियाँ (Errors Related to Data Interpretation)

निर्वचन सम्बन्धी त्रुटियों को दो भागों में बांटा जा सकता हैः

1. मिथ्या सामान्यीकरण की त्रुटियां
2. सांख्यिकीय मापों का त्रुटिपूर्ण निर्वचन।

1. मिथ्या सामान्यीकरण की त्रुटियां

तथ्यों के निर्वचन से सम्बन्धित अधिकतर त्रुटियों का कारण मिथ्या या अशुद्ध सामान्यीकरण है। ऐसा उस समय होता है जब कुछ अन्वेषणकर्ता समग्र के किसी एक भाग का अध्ययन एवं विश्लेषण करके उससे प्राप्त होने वाले निष्कर्षों को पूरे समग्र पर लागू कर देते हैं। ऐसी दशा में अपर्याप्त तथ्यों के आंशिक अध्ययन के आधार पर निकाले गये निष्कर्ष या परिणाम भी अशुद्ध या त्रुटिपूर्ण हो जाते हैं। शुद्ध निष्कर्ष निकालने के लिये आवश्यक है कि समग्र की सभी विशेषताओं का प्रतिनिधित्व करने वाली पर्याप्त इकाईयों का अध्ययन किया जाय।

2. सांख्यिकीय मापों का त्रुटिपूर्ण निर्वचन

निर्वचन में विभिन्न सांख्यिकीय मापों जैसे प्रतिशत,माध्य,सूचकांक एवं सह-सम्बन्ध आदि का प्रयोग करते समय इनकी सीमाओं पर भी उचित ध्यान देना आवश्यक है। इसके अभाव में इस त्रुटि के रह जाने की सम्भावना रहती है कि निर्वचन करते समय दो असमान चरों की उपस्थिति से यह समझ लिया जाता है कि दोनों चरों के बीच ही कार्य-कारण सम्बन्ध होते हैं यह निश्चित है कि दोनों चरों के मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों में कोई तीसरा चरण हस्तक्षेप कर रहा हो।

निर्वचन से सम्बन्धित उपर्युक्त दो प्रकार की त्रुटियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि निर्वचन का कार्य उतना आसान नहीं है जितना कि लोग समझते हैं। उचित मात्रा में सतर्कता न बरतने पर प्राप्त निष्कर्षों के भ्रांतिपूर्ण, अवैज्ञानिक, दोषपूर्ण होने की प्रबल सम्भावना रहती है। उचित सावधानी एवं सतर्कता की दृष्टि से निम्नलिखित बातों का ध्यान एक कुशल शोधकर्ता के लिये आंकड़ों के निर्वचन हेतु नितान्त आवश्यक हैः

1. निर्वचन किये जाने वाले तथ्यों की पर्याप्त मात्रा हो।
2. इस बात का निश्चय कर लेना भी आवश्यक है कि प्राप्त तथ्य पूर्णता यथार्थ हों, तात्पर्य यह है उनमें कोई भी तथ्य अशुद्ध नहीं हों।
3. तथ्यों का समरूप या सजातीय एवं तुलना योग्य होना आवश्यक है जिससे कि उनके आधार पर किया गया निर्वचन वस्तुनिष्ठ हो सके।
4. उचित निर्वचन की दृष्टि से यह भी जरूरी है कि सूचनओं का विश्लेषण करते समय वैज्ञानिकता का ध्यान रखा जाये।

अनुसंधान में यदि विश्लेषण एवं निर्वचन के लिये उपर्युक्त बातों का पूर्ण रूप से ध्यान रखा जाये तो यह कहना कोई अतिशयोक्ति न होगा कि अनुसंधान में निष्कर्षों तथा सिद्धान्त निर्माण एवं सामान्यीकरणों तक बहुत सरलता से पहुंचा जा सकता है।

16.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में तथ्यों के विश्लेषण एवं निर्वचन, प्रतिवेदन एवं सांख्यिकी के बारे में बताया गया है। सामाजिक विज्ञान के विषयों में तथ्य को संकलित करने के पश्चात उनका विश्लेषण किया जाता है। तथ्य विश्लेषण में तथ्यों की विस्तृत विवेचना की जाती है तथ्यों की विवेचना के उपरान्त प्रतिवेदन तैयार किया जाता है।

16.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. तथ्यों के विश्लेषण में अन्तर्निहित विभिन्न प्रक्रियाओं का वर्णन कीजिए।
2. तथ्यों के निर्वचन सम्बन्धी त्रुटियों पर प्रकाश डालिए।

16.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई -17

प्रतिवेदन

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 प्रतिवेदन (Report Writing)
17.3 प्रतिवेदन के उद्देश्य
17.4 प्रतिवेदन लेखन विषय सामग्री
17.5 प्रतिवेदन की विशेषताएँ
17.6 सारांश
17.7 अभ्यास प्रश्न
17.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

17.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- प्रतिवेदन का अर्थ एवं उद्देश्यों से परिचित हो सकेंगे।
- प्रतिवेदन की विषय सामग्री को समझ सकेंगे।
- प्रतिवेदन की विशेषताओं तथा प्रतिवेदन के निर्माण से सम्बन्धित सावधानियां समझ सकेंगे।

17.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में प्रतिवेदन के बारे में बताया गया है। शोध प्रतिवेदन में अध्ययनकर्ता किसी शोध विषय से सम्बन्धित जितने भी तथ्यों का संकलन करता है उनका सारिणीयन एवं विवेचन कर लेने के पश्चात् उन पर आधारित निष्कर्षों को एक व्यवस्थित प्रतिवेदन के रूप में ही प्रस्तुत किया जाता है। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन अथवा रिपोर्ट एक प्रकार से समपूर्ण शोध-कार्य का लिखित विवरण है जिसके अभाव में शोध-कार्य को पूरा नहीं माना जा सकता है।

17.2 प्रतिवेदन (Report writing)

अर्थ

सामाजिक शोध कार्य का अन्तिम चरण प्रतिवेदन होता है। शोध द्वारा प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण एवं निर्वचन करने के पश्चात् प्राप्त निष्कर्षों को प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। प्रतिवेदन सम्पूर्ण शोध का लिखित विवरण होता है। प्रतिवेदन के अन्तर्गत समस्या या विषय के चयन से लेकर तथ्यों के विश्लेषण एवं निर्वचन, निष्कर्ष एवं सुझाव तक की समस्त प्रक्रियाओं का उल्लेख किया जाता है। प्रतिवेदन को प्रकाशित या अप्रकाशित प्रलेख के रूप में शोधकर्ताओं द्वारा प्रयोग किया जाता है। यह किसी अन्य शोध के लिये उपयुक्त होता है और इसका उद्देश्य दिये हुये निष्कर्ष की पुनर्परीक्षा अन्य

वैज्ञानिकों द्वारा की जाती है और इसके द्वारा दिये गये निष्कर्ष एवं सुझाव सामाजिक नीति, नियोजन एवं विकास की रूपरेखा को तैयार करने में सहायक होते हैं। अतः यह कहना कोई अतिशयोक्ति न होगा कि प्रतिवेदन किसी भी शोध कार्य को अमलीजामा देने का अन्तिम चरण होता है, और इसमें शोध कार्य के अन्तर्गत उन सभी बातों का उल्लेख किया जाता है जिनके माध्यम से शोधकर्ता द्वारा तथ्यों एवं सूचनाओं की जानकारी प्राप्त की गयी है।

17.3 प्रतिवेदन के उद्देश्य

प्रतिवेदन का प्रमुख उद्देश्य जन सामान्य को समस्या या विषय के बारे में वैज्ञानिक ज्ञान पर आधारित तथ्यों या सूचनाओं की जानकारी प्रदान करना है। प्रतिवेदन सर्वसाधारण को सुलभता से उन बातों की जानकारी कराता है जिनका समस्या या विषय से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सम्बन्ध रहा है। समस्या में रूचि रखने वाले लोगों को विभिन्न तरह की जानकारियां प्रतिवेदन के माध्यम से प्राप्त होती हैं। अमेरिकन मार्केटिंग सोसाइटी। ने लिखा है, ''प्रतिवेदन को तैयार करना शोध का अन्तिम चरण है, और इसका उद्देश्य रूचि रखने वाले लोगों को अध्ययन के सम्पूर्ण परिणाम को विस्तारपूर्वक उल्लेखित करने के माध्यम से समझाना या जानकारी प्रदान करना एवं इस तरह व्यवस्थित करना है जिससे अध्ययनकर्ता तथ्यों को समझाने और स्वयं के लिये निष्कर्षों की प्रामाणिकता का निश्चय करने के योग्य बन जायें।''

प्रतिवेदन के अन्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. समस्या या विषय से सम्बन्धित नवीन ज्ञान की प्राप्ति कराना।
2. वर्तमान ज्ञान में वृद्धि करना।
3. शोध परिणामों को दूसरों तक पहुंचाना।
4. निष्कर्षों की वैधता की जांच करना।
5. सिद्धान्तों का निर्माण करना।
6. भावी शोध के लिये आधार प्रस्तुत करना।

17.4 प्रतिवेदन लेखन के लिये विषय-सामग्री (Subject Matter)

प्रतिवेदन लेखन के लिये आवश्यक विषय-सामग्री का विवरण नीचे दिया जा रहा हैः

1. प्रतिवेदन लेखन का कार्य प्रस्तावना से आरम्भ होता है, इसमें विषय या समस्या का परिचय,शोध की योजना,महत्व आदि विषयों पर संक्षिप्त रूप से प्रकाश डाला जाता है। अधिकांशतः प्रतिवेदन के अन्तर्गत प्रस्तावना में शोध निर्देशक, शोधकर्ताओं का परिचय, शोध में व्यय की गयी धनराशि, सहयोग देने वाली संस्थाओं एवं विभिन्न विद्वानों के परिचय को सम्मिलित किया जाता है, लेकिन वास्तव में प्रस्तावना विषय या समस्या से सम्बन्धित विभिन्न सूचनाओं का संक्षिप्त विवरण होता है।
2. प्रतिवेदन में शोध समस्या के विषय में विवरण प्रस्तुत किया जाता है। इसमें समस्या के अध्ययन की आवश्यकता, उसके चयन का आधार, सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक लाभ, उससे सम्बन्धित पूर्व में किये गये शोध आदि की जानकारी दी जाती है।
3. प्रतिवेदन में शोध के विभिन्न उद्देश्यों का विवरण दिया जाता है। शोध का उद्देश्य व्यावहारिक लाभ एवं सैद्धान्तिक जानकारी प्राप्त करना हो सकता है। प्रतिवेदन में शोध के उद्देश्य के रूप

में इसकी वर्तमान में उपयोगिता एवं भविष्य के लिये नवीन जानकारी, पुराने तथ्यों की जांच आदि उद्देश्यों को सम्मिलित किया जाता है।

4. प्रतिवेदन में विषय का अध्ययन कहां और किस क्षेत्र से सम्बन्धित है, इसका भी उल्लेख किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों या शहरी क्षेत्रों में शोध किया जा रहा है, इसका भी उल्लेख होता है।
5. सूचनायें प्राप्त करने के उपकरण, स्रोत एवं विधियों का प्रतिवेदन में उल्लेख किया जाता है।
6. प्रतिवेदन में इस बात का भी उल्लेख किया जाता है कि समस्या का अध्ययन करने में समग्र से इकाइयों का चयन किस प्रतिदर्शन के आधार पर किया गया है,या सम्पूर्ण समग्र का चयन संगणना पद्धति के आधार पर किया गया है।
7. प्रतिवेदन में संकलित तथ्यों का सम्पादन, संकेतन वर्गीकरण, एवं सारिणीयन करने के पश्चात् विश्लेषण एवं निर्वचन किया जाता है।प्रतिवेदन में परिणामों के साथ-साथ शोध की प्रमुख विशेषताओं, मुख्य-मुख्य बातों एवं निष्कर्षों का भी उल्लेख किया जाता है।
8. प्रतिवेदन में सुझावों का भी उल्लेख होता है। जब शोध कार्य किसी संस्था या सरकार द्वारा कराया जाता है तो सुझाव देना नितान्त आवश्यक होता है। सुझाव प्रतिवेदन के अन्त में दिये जाते हैं। सुझाव सामान्यतः अध्ययनकर्ता के कार्य अनुभवों पर आधारित होते हैं।
9. प्रतिवेदन के अन्त में कुछ आवश्यक सूचनाओं को सम्मिलित किया जाता है। इसमें प्रश्नावली, अनुसूची, कोई दस्तावेज, चार्ट या लेख आदि का विवरण दिया जाता है।

प्रतिवेदन के लिये शोधकर्ता अपने ज्ञान एवं निपुणताओं के माध्यम से प्रतिवेदन की विषय-वस्तु का चयन करता है। यह कोई आवश्यक नहीं कि उपर्युक्त बिन्दुओं के आधार पर ही प्रतिवेदन लिखा जाये, लेकिन फिर भी प्रतिवेदन के लिये सभी शोधकर्ताओं को उपर्युक्त विवरण से कहीं न कहीं सहायता लेनी ही पड़ती है। यह बात अवश्य है कि शोधकर्ता के लिये आवश्यक है कि वह प्रतिवेदन में वस्तुनिष्ठता का परिचय दे जिससे वस्तुस्थिति प्रतिवेदन लेखन में स्पष्ट हो सके।

17.5 प्रतिवेदन की विशेषतायें

एक प्रभावशाली प्रतिवेदन में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहियेः

1. प्रतिवेदन आकर्षक, छपी हुई या टाइप की हुई होनी चाहिये।
2 प्रतिवेदन की भाषा सरल, सुगम्य होनी चाहिये।
3. प्रतिवेदन में तथ्यों की पुनरावृत्ति नहीं होनी चाहिये,क्योंकि पुनरावृत्ति होने से पाठक पढ़ते-पढ़ते बोर हो जाते हैं।
4. शोध के दौरान आने वाली कठिनाइयों का उल्लेख प्रतिवेदन में होना चाहिये।
5. शोध में प्राप्त सफलताओं के साथ-साथ असफलताओं का उल्लेख होना चाहिये।
6. प्रतिवेदन में यह आवश्यक विशेषता होनी चाहिये कि उसमें दिये गये तथ्य पूर्ण रूप से वैज्ञानिक हों, तथा उनमें वैधता हो। उनमें काल्पनिकता का भाव स्पष्ट न हो सके।
7. प्रतिवेदन में अवधारणायें एवं सिद्धान्तों को विकसित करने का प्रयत्न होना चाहिये जिससे कि भावी शोध को दिशा-निर्देश प्राप्त हो सकें।

प्रतिवेदन लेखन में सावधानियां

प्रतिवेदन तैयार करने के लिये केवल इसकी अन्तर्वस्तु का ज्ञान होना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि प्रतिवेदन तैयार करना एक तकनीकी कार्य है जिसमें अनुसंधानकर्ता को अनके बातों का ध्यान रखते हुये अपने कार्य को पूरा करना होता है। इस सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि सभी अनुसंधान कार्यों से सम्बन्धित अध्ययन विषयों एवं प्राप्त तथ्यों की प्रकृति एक-दूसरे से अत्यधिक भिन्न होती है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक प्रतिवेदन को पढ़ने वाले व्यक्तियों का स्तर और कार्य-क्षेत्र भी एक-दूसरे से भिन्न हो सकता है। इस स्थिति में प्रतिवेदन को तैयार करते समय विभिन्न यांत्रिक साधनों की सहायता से न केवल निष्कर्षों को व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत करना आवश्यक है बल्कि यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि प्रतिवेदन की अन्तर्वस्तु में सभी वर्गों के पाठकों की रूचि बनी रहे। इस दृष्टिकोण से प्रतिवेदन को तैयार करने में अनके सावधानियां रखना आवश्यक है।
इन्हीं के सन्दर्भ में एक प्रतिवेदन को अच्छा स्वरूप प्रदान किया जा सकता हैः

1. रूपरेखा का निर्माण एवं स्पष्टीकरण (Clarification and Structurisation of Synopsis)

प्रतिवेदन को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के लिये सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि प्रारम्भ में ही उसकी एक रूपरेखा का निर्माण कर लिया जाये। इससे शोधकर्ता को यह निर्धारित करना आवश्यक होता है कि विभिन्न विषयों को प्रस्तुत करने का क्रम क्या होगा,किन तथ्यों के विश्लेषण पर अधिक बल देना है तथा किन तथ्यों के आधार पर निष्कर्षों की प्रामाणिकता को सिद्ध करना है। इसी स्तर पर शोधकर्ता को पुनः इस बात का मूल्यांकन करना आवश्यक है कि प्रतिवेदन में प्रस्तुत किये जाने वाले तथ्य परिकल्पना से सम्बद्ध हैं अथवा नहीं।

2. पाठकों की प्रकृति (Nature of Readers)

किसी प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि इसे पढ़ने वाले लोगों का बौद्धिक स्तर एवं प्रकृति क्या होगी।

3. अध्ययन का क्षेत्र (Scope of Study)

किसी अध्ययन विषय की प्रकृति चाहे कितनी भी सीमित हो, सामाजिक अध्ययनों में उस विषय से सम्बन्धित सभी लोगों के विचारों का समावेश नहीं किया जा सकता। इस स्थिति में प्रतिवेदन के आरम्भ में ही शोधकर्ता को यह स्पष्ट कर देना आवश्यक होता है कि अध्ययन की सीमायें क्या हैं।

4. संतुलित भाषा का उपयोग(Use of Balanced Language)

प्रतिवेदन तैयार करने के लिये भाषा के बारे में अत्यधिक सावधानी रखना विशेष रूप से महत्वपूर्ण होता है। एक प्रतिवेदन तभी अच्छा हो सकता है जब उसमें संतुलित, सरल, तथ्ययुक्त एवं वैज्ञानिक भाषा का प्रयोग किया जाये। मात्र इसी के द्वारा शोध के परिणामों को सरल एवं स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रतिवेदन प्रस्तुत करने वाला व्यक्ति एक साहित्यकार अथवा कहानीकार नहीं होता जो तथ्यों की अपेक्षा भाषा के सौन्दर्य में अधिक रूचि लेता हो।

5. सांख्यिकी का प्रयोग(Use of Statistics)

शोध-प्रतिवेदन को वस्तुनिष्ठ और संक्षिप्त बनाने के लिये विभिन्न तथ्यों को सांख्यिकीय सारिणि में प्रस्तुत करना आवश्यक होता है।इतना ही नहीं शोधकर्ता के लिये यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि सांख्यिकीय गणनाओं के द्वारा विभिन्न तथ्यों का माध्यमूल्य, मानक विचलन एवं सह-सम्बन्ध आदि ज्ञात करके घटनाओं की प्रकृति को स्पष्ट किया जाये।

6. तथ्यों की पुनरावृत्ति से बचाव (Avoiding Repeatations)

प्रतिवेदन को प्रस्तुत करते समय यह ध्यान रखना अधिक आवश्यक है कि एक ही तथ्य को घुमा-फिरा कर बार-बार प्रस्तुत न किया जाये। अनेक बार ऐसा होता है कि शोधकर्ता जिस तथ्य को बहुत महत्वपूर्ण समझता है उसे वह विषय के प्रत्येक पक्ष की विवेचना करते समय बार-बार प्रस्तुत करने लगता है। स्वाभाविक है कि ऐसा करने से प्रतिवेदन के प्रति पाठकों की रूचि कम हो जाती है।

7. यांत्रिक साधनों का समुचित उपयोग(Use of mechanical Tools)

प्रतिवेदन को प्रस्तुत करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि विभिन्न यांत्रिक साधनों की सहायता से उसे अधिक से अधिक विश्वसनीय रूप प्रदान किया जाये।यह यांत्रिक साधन पद ,टिप्पणियों, मानचित्रों, रेखाचित्रों, चार्ट तथा संदर्भ-सूची आदि के रूप में होते हैं।

8. सिद्धान्तों एवं भावी सम्भावनाओं का समावेश (Inclusions of Implications Future Possibilities)

किसी प्रतिवेदन को उत्तम बनाने के लिये यह ध्यान रखना भी आवश्यक है कि प्राप्त तथ्यों एवं उनके कार्य-कारण सम्बन्धों के आधार पर कुछ निश्चित सामान्यीकरण प्रस्तुत किये जायें। ऐसे सामान्यीकरणों का उद्देश्य विभिन्न घटनाओं के कारणों एवं प्रभावों का वैज्ञानिक आधार पर विश्लेषण करना होता है।

9. भौतिक आर्कषण (Physical Attraction)

एक अन्तिम विशेषता के रूप में प्रतिवेदक को ध्यान रखना आवश्यक है कि प्रतिवेदन का भौतिक-स्वरूप आकर्षक हो।यह सच है कि भौतिक आकर्षण से ही कोई प्रतिवेदन बहुत आकर्षक नहीं बन सकता लेकिन प्रतिवेदन के प्रति प्रारम्भिक रूचि उत्पन्न करने में इसका महत्व निश्चित ही होता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि प्रतिवेदन तैयार करने की समस्त सावधानियों का सम्बन्ध प्रतिवेदन को एक उत्तम और वैज्ञानिक रूप प्रदान करने से है। एक शोधकर्ता इन प्रविधियों को जितना अधिक स्वीकार करता है वह उतने ही उत्तम प्रतिवेदन को प्रस्तुत करने में सफल होता है।

17.6 सारांश

कोई अध्ययन चाहे सामाजिक हो अथवा प्राकृतिक, पर उससे सम्बन्धित तथ्यों एवं निष्कर्षों को प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता अवश्य होती है। एक शोधकर्ता द्वारा प्राप्त निष्कर्ष चाहे कितने भी महत्वपूर्ण हों लेकिन यदि शोध-प्रतिवेदन के द्वारा उनका पाठकों में समुचित रूप से सम्प्रेषण नहीं हो पाता तो उनका कोई भी व्यावहारिक महत्व नहीं होता । इस दृष्टि से प्रतिवेदन के आरम्भ से अन्त तक अध्ययन-विषय की विभिन्न इकाइयों, पारिभाषिक शब्दों, तथ्यों तथा निष्कर्ष

को इस प्रकार प्रस्तुत करना अत्यन्त आवश्यक होता है जिससे उनकी प्रासंगिकता एवं अभिप्राय को सभी के द्वारा समझा जा सके।

17.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रतिवेदन लेखन में किन-किन बातों को सम्मिलित किया जाता है।
2. प्रतिवेदन के मुख्य उद्देश्य क्या हैं? एक आदर्श प्रतिवेदन की क्या विशेषताएं होनी चाहिए।
3. प्रतिवेदन को तैयार करने में किन-किन सावधानियों का ध्यान रखना पडता है।

17.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई -18

सांख्यिकी : अवधारणा, चरण, तथा महत्व

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य
18.1 प्रस्तावना
18.2 सांख्यिकी (Statistics)
18.3 सांख्यिकी के चरण
18.4 सांख्यिकी का महत्त्व
18.5 सारांश
18.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
18.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- साख्यिकी की अवधारणा एवं अर्थ के बारे में जान सकेंगे।
- सांख्यिकी के चरण, सीमाएं एवं महत्व को समझ सकेंगे।

18.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी की अवधारणा, अर्थ, चरण, सीमायें तथा महत्व के बारे में बताया गया है। सांख्यिकी का प्रयोग किसी भी विषय का वैज्ञानिक अध्ययन तथा विश्वसनीय आंकडे प्राप्त करने के लिये किया जाता है। सांख्यिकी के द्वारा आंकडों का त्वरित तथा गहन विश्लेषण संभव हो जाता है।

18.2 सांख्यिकी (Statistics)

अवधारणा एवं अर्थ (Concept and Meaning)

सांख्यिकी के सर्वत्र प्रयोग के कारण आधुनिक युग सांख्यिकी का युग कहा जाता है। कैसे भी तथ्य हों - चाहें प्राकृतिक, आर्थिक अथवा सामाजिक सभी को सांख्यिकीय भाषा में मापा जा सकता है, प्रस्तुत किया जा सकता है तथा उनका निवर्चन किया जा सकता है। प्रत्येक ज्ञान के क्षेत्र में सांख्यिकी का प्रयोग एक अनिवार्यता बन गयी है। आज यदि आप किसी तथ्य को संख्या द्वारा प्रकट नहीं कर सकते तो उसकी सत्यता में संदिग्धता बनी रहेगी। यहाँ तक कहा जाता है, कि ''जो कुछ आप कह रहे हैं, यदि उसे संख्या में माप सकते हैं तथा व्यक्त कर सकते हैं, तब तो आप कुछ जानते है अन्यथा आपका ज्ञान अल्प एवं असन्तोषजनक है।'' जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सांख्यिकी का महत्वपूर्ण स्थान है।

अंग्रेजी भाषा के 'स्टैटिस्टिक्स' शब्द का तीन अर्थों में प्रयोग होता है। प्रसिद्ध विद्वान टेट (Tate) के इस कथन से स्पष्ट है, ''आप समंकों से सांख्यिकीय विज्ञान द्वारा सांख्यिकीय माप(माध्य, अपकिरण

व विषमता के माप आदि) की संगणना करते हैं। इस प्रकार तीन अर्थ हुए: (1) समंक, (2) सांख्यिकी विज्ञान, (3) सांख्यिकीय माप। परन्तु सामान्यतः यह पहले दो अर्थों में ही प्रयोग होता है- समंक, बहुवचन के रूप में तथा सांख्यिकीय विज्ञान एकवचन के रूप में। प्राचीनकाल में यह शब्द सामान्यतः बहुवचन के रूप में प्रयुक्त होता था। परन्तु अब दोनों रूपों बहुवचन एवं एकवचन में होता है।

सांख्यिकी को समय-समय पर भिन्न-भिन्न विद्वानों के द्वारा भिन्न-भिन्न रूपों में परिभाषित किया गया है। इन परिभाषाओं की विविधिता का सर्वप्रथम कारण आधुनिक युग में सांख्यिकी के क्षेत्र का विस्तृत होना है। प्रारम्भिक काल में सांख्यिकी को मात्र राज्य के मामलों तक ही सीमित रखा गया था। शासन को सुचारू रूप से चलाने, राज्य एवं सैन्य संचालन, सेना की संख्या, करों में आवश्यकतानुसार कटौती व बढ़ोत्तरी आदि कार्यों के लिए इसका उपयोग होता था। परन्तु आज इसे सम्पूर्ण मानव क्रियाओं की परिधि के रूप में स्वीकारा गया है। आज मानव जीवन का शायद ही कोई ऐसा क्षेत्र हो जहां सांख्यिकी का उपयोग न हो। आर्थिक सामाजिक व प्राकृतिक सभी तथ्यों को सांख्यिकी के रूप में मापा जा सकता है। ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों में सांख्यिकी का प्रयोग हो रहा है। पुरानी परिभाषाओं में इसका क्षेत्र अत्याधिक संकुचित होने के कारण उन्हें विस्तृत रूप में विभाजित किया गया है। सांख्यिकी को दो विधियों में विभाजित किया गया हैं। कुछ विद्वानों ने इसे सांख्यिकी समंक में प्रस्तुत किया है जैसे- संख्यात्मक कथनों के तथ्यों के रूप में। अन्य ने इसे सांख्यिकीय रीतियों में परिभाषित किया है जिसमें सम्पूर्ण सिद्धान्तों और प्रविधियों का प्रयोग आकड़ों के संग्रह और विश्लेषण के रूप में करते हैं। कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नलिखित हैं:

होर्स स्क्रेस्ट (Horse Scrates) के अनुसार, ‘‘सांख्यिकी से तात्पर्य तथ्यों के उन समूहों से है जो कई कारणों से निश्चित सीमा तक प्रभावित होते हैं, संख्याओं में व्यक्त किये जाते हैं, एक उचित मात्रा की शुद्धता के अनुसार गिने या अनुमानित किये जा सकते हैं, किसी निश्चित उद्देश्य के लिए व्यवस्थित ढंग से संग्रहित किये जाते हैं जिन्हें एक दूसरे से सम्बन्धित रूप में प्रस्तुत किया जाता है।’’

केन्डाल (Candal) के अनुसार, ‘‘सांख्यिकी वैज्ञानिक विधि की वह शाखा है जो प्राकृतिक पदार्थों के समूह की विशेषताओं को मापकर या गिनकर प्राप्त की गयी साम्रगी से सम्बन्धित है।’’

क्राक्सटन (Crogstan) एवं काउडेन (Couden) के अनुसार, ‘‘सांख्यिकी वह विज्ञान है जिसको संख्या सम्बन्धी समंकों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और निर्वचन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।’’

उपरोक्त परिभाषाओं के तर्कपूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट है कि सांख्यिकी की परिभाषा में क्रांक्सटन और काउडेन की परिभाषा अत्यधिक वैज्ञानिक और वास्तविक (सजीव) है।

इस प्रकार हम निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि ‘‘सांख्यिकी एक विज्ञान और कला है जो सामाजिक, आर्थिक, प्राकृतिक व अन्य समस्याओं से सम्बन्धित समंकों के संग्रहण, वर्गीकरण, सारिणीयन, प्रस्तुतीकरण, सम्बन्ध स्थापन, निर्वचन और पूर्वानुमान से सम्बन्ध रखती है ताकि निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति हो सके।’’

18.3 सांख्यिकी के चरण

क्रांक्सटन और काउडेन की परिभाषा से सांख्यिकी अनुसंधान के चार चरण स्पष्ट होते हैं जो निम्नलिखित हैं:

1. समंकों का संकलन्
2. समंकों का प्रस्तुतीकरण,
3. समंकों का विश्लेषण, तथा
4. समंकों का निर्वचन।

उपरोक्त चरणों में एक और चरण समंकों का संगठन भी जोड़ा जा सकता है क्योंकि सांख्यिकी की व्याख्या समंकों के संग्रहण, प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण और निर्वचन से सम्बन्ध रखती है। सांख्यिकी अनुसंधान में तथ्यों या समंकों के पाँच चरण निम्नलिखित हैं:

1. समंकों का संकलन

सांख्यिकी अनुसंधान में समंकों(तथ्य) का संकलन प्रथम एवं आवश्यक चरण है। समंकों(तथ्यों) को मनमाने ढ़ंग से एकत्रित नहीं किया जाता है विभिन्न उपकरणों एवं प्रविधियों की सहायता से सावधानीपूर्वक संकलित करते हैं। यदि तथ्य संग्रहण उचित रूप से न किया गया हो तो निष्कर्ष निकालने में अनुसंधानकर्ता पथभ्रष्ट हो सकता है। तथ्य प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में भी उपलब्ध होते हैं या अनुसंधानकर्ता स्वयं उन्हें एकत्रित करता है। प्रथम स्तरीय समंकों का संकलन(प्राथमिक तथ्य) सांख्यिकीवेत्ता के लिए कठिन व आवश्यक कार्य होता है। इसमें शोधकर्ता स्वयं या अपने सहायकों की सहायता से आंकड़ों को संग्रहित करता है। इसके अतिरिक्त वे तथ्य या सूचनाएं जिन्हें शोधकर्ता स्वयं संकलित नहीं करता है बल्कि जो पहले से प्रकाशित या अप्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं, द्वैतीयक तथ्य (Secondary Data) कहलाते हैं।

2. संगठन

प्रकाशित स्रोत से एकत्रित किये गये तथ्य अधिकांशतः संगठित रूप में होते हैं सर्वेक्षण में एकत्रित समंकों को व्यवस्थित करते हैं। संगठन में प्रथम चरण तथ्यों का सम्पादन होता है। एकत्रित समंकों का सावधानीपूर्वक सम्पादन किया जाता है। सम्पादन में संकलित समंकों की शुद्धता की जांच, भूल-चूक तथा अशुद्धता या गलतियों को दूर कर उन्हें व्यवहार योग्य बनाते हैं। समंकों के सम्पादन के पश्चात् अगला चरण उनका वर्गीकरण होता है। वर्गीकरण का उद्देश्य होता है कि तथ्यों (समंकों) को कुछ सामान्य विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करना। तत्पश्चात संगठन का अन्तिम चरण सारिणीयन होता है। इसका उद्देश्य तथ्यों (समंकों) को पंक्तियों (खानों) में व्यवस्थित करना है यह तथ्यों को उचित रूप में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित करता है।

3. प्रस्तुतीकरण

समंकों के संकलन वर्गीकरण और सारिणीयन के पश्चात उसे प्रस्तुतीकरण के लिए तैयार करते हैं। समंकों को क्रमागत रूप में सांख्यिकी विश्लेषण में सुगमता के लिए उनका प्रस्तुतीकरण करते हैं। इन संग्रहीत आंकड़ों को दो विधियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है:

1. चित्रमय प्रदर्शन, तथा
2. बिन्दुरेखीय प्रदर्शन।
3. विश्लेषण

समंकों के संकलन, सम्पादन, वर्गीकरण, सारिणीयन और प्रस्तुतीकरण के पश्चात इनका विश्लेषण करते है। यह उपरोक्त विधियाँ सांख्यिकी विश्लेषण की प्राथमिक अवस्था हैं। इससे समंकों (तथ्यों)

की सभी महत्वपूर्ण विशेषताएं स्पष्ट नहीं होती हैं। समंकों के विश्लेषण का उद्देश्य है कि सूचनाओं को इसमें विभिन्न गणितीय विधियां- माध्य, विचरण, विषमता, सहसम्बन्ध आदि का उपयोग होता है। इन विधियों द्वारा आंकड़ों की परस्पर तुलना की जाती है।

4. निर्वचन

समंकों के विश्लेषण के पश्चात सांख्यिकी अनुसंधान की अन्तिम अवस्था सांख्यिकी निर्वचन है। सांख्यिकी निर्वचन का कार्य अत्यन्त लचीला एवं महत्वपूर्ण है इसके लिए कुशलता एवं अनुभव का होना आवश्यक है। यदि (तथ्य) समंक विश्लेषण का उचित रूप से निर्वचन न किया जाए तो अनुसंधान के सम्पूर्ण उद्देश्य का भ्रमक एवं दोषपूर्ण निष्कर्ष निकलेगा।

सांख्यिकी की सीमाएँ

सांख्यिकी का मानव जीवन के सभी क्षेत्र में अत्यधिक प्रयोग हो रहा है। सांख्यिकी में समंको के उचित संकलन तथा सही विश्लेषण से समस्या का हल सही निकलता है। इसके अत्यधिक महत्वपूर्ण व उपयोगी होने पर इसकी सीमाओं का ज्ञान होना भी आवश्यक है। सांख्यिकी की कुछ आवश्यक सीमाएं निम्नलिखित हैं-

1. सांख्यिकी केवल संख्यात्मक (गुणात्मक नहीं) विशेषताओं का अध्ययन कर सकती है|

सांख्यिकी विज्ञान के अन्तर्गत केवल संख्या में व्यक्त तथ्यों को अध्ययन के प्रयोग में लाती है जिनका संख्यात्मक स्वरूप होता है। गुणात्मक पहलू जैसे ईमानदारी, गरीबी, सभ्यता आदि जिनको संख्या में व्यक्त नहीं किया जा सकता है अतः इनका सांख्यिकी विश्लेषण सम्भव नहीं है। उदाहरण- समूहों के सदस्यों के बुद्धि का अध्ययन उनके किसी परीक्षा में दिये गये अंको के आधार पर किया जा सकता है।

2. सांख्यिकी व्यक्तिगत इकाई का अध्ययन नहीं करती है|

सांख्यिकी विवेचन मुख्यतः सामूहिक होता है, व्यक्तिगत विशेषताओं का इसमें अध्ययन नहीं होता है। व्यक्तिगत इकाईयों को किसी सांख्यिकी समंक से नहीं जोड़ा जा सकता है। इसके अलग स्वरूप का सांख्यिकी अध्ययन में कोई अर्थ नहीं होता है। उदाहरण- मैकाइवर के अनुसार, ''हजारों व्यक्तियों का कष्ट एक अकेले ह्दय की व्यथा से इसलिए बड़ा नहीं होता है क्योकि उसे हजारों व्यक्ति सहन करते हैं। एक व्यक्ति की व्यथा कहीं अधिक तीव्र होती है।''

3. सांख्यिकीय उत्तरदायित्व का दुरूपयोग|

सांख्यिकी की सबसे आवश्यक सीमा है कि उसका उपयोग अनुभवी व्यक्ति के द्वारा किया जाए। अनभिज्ञ (अयोग्य) व्यक्ति के हाथों में यह औजार अत्यधिक खतरनाक है। सांख्यिकी वह विज्ञान है जिसको एक कुशल तथा अत्यधिक अभ्यासरत व्यक्ति प्रयोग कर सकता है। सांख्यिकी औजारों का अयोग्य और अकुशल व्यक्तियों के प्रयोग से अत्यधिक निराशापूर्ण परिणाम आयेगा।

4.सांख्यिकी प्रणालियाँ गहन अध्ययन के लिए अनुपयुक्त होती हैं|

मानव स्वभाव अत्यधिक जटिल और दुरूह है कुछ प्रश्न पूछ कर समंकों का संकलन करके मानव व्यवहार के सम्बन्ध में कोई नियम नहीं बनाए जा सकते हैं। इसके लिए धैर्य, दीर्घकालीन समय तथा लगन के साथ अध्ययन की आवश्यकता होती है।

5.सांख्यिकी समंकोंमें एकरूपता और सजातीयता होती है|

सांख्यिकी में जो समंक(तथ्य) एकत्र होते हैं उनमें एक जैसे गुण होने चाहिए तो परिणाम ठीक होगा अन्यथा नहीं। उदाहरण- किसी निश्चित समय में चावल का औसत मूल्य ज्ञात करना है तो उचित परिणाम के लिए आवश्यक है कि समस्त स्थानों पर उसी प्रकार के चावल के मूल्यों को एकत्र किया जाए। अन्यथा परिणाम अशुद्ध होगा। विजातीय आकड़ों से परिणाम की तुलना नहीं की जाती है इससे परिणाम अशुद्ध होता है।

6.सांख्यिकी के नियम यथार्थ नहीं हैं |

भौतिकी व प्राकृतिक विज्ञानों की तरह सांख्यिकी के नियम पूर्णता सत्य नहीं होते हैं यह केवल सन्निकट सत्यता पर आधारित हैं। सांख्यिकी विश्लेषण के आधार पर हम बात सम्भाविता के आधार पर करते है न कि निश्चितता के आधार पर।

18.4 सांख्यिकी का महत्व

वर्तमान समय में सांख्यिकी का स्वरूप केवल संख्यात्मक तथ्यों के संग्रहण के रूप में ही नहीं बल्कि मानव विकास के साथ इसकी उपयोगिता भी सभी क्षेत्रों में बढ़ रही है। आज इसे राज्य के मामलों तक ही नही बल्कि इसका प्रयोग मानव ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र सामाजिक, भौतिक, जैविक, मनोविज्ञान, शिक्षाशास्त्र, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, और प्रशासन आदि सभी में हो रहा है। इसकी गणना (गिनती) किसी एक विभाग में करना मुश्किल है। यह मानव प्रयास के सभी क्षेत्र में उपयोगी हो रहा है।

18.5 सारांश

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी की उपयोगिता के बारे में बताया गया है। वास्तव में सांख्यिकी का प्रयोग सूत्रों, सिद्धान्तों की सहायता से किया जाता है तथा सांख्यिकी के द्वारा वृहद आंकडों को अल्प समय तथा त्वरित गति से विश्लेषित किया जा सकता है।

18.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सांख्यिकी से आप क्या समझते हैं? इसके महत्व को बताइये।
2. सांख्यिकी की सीमाओं को समझाइये।

18.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Poinare, Quoted by G. Pandey & A. Pandey, Research Methodology.
- Young, P. V., Scientific Social Survey and Research, Asia Publishing House, Bombay.
- Simpson and Kafka, Basic Statistics.

- Sanchcti D. C. & Kapoor U. K., Statistics (Theory, Methods & Application) Sultan Chand & Sons, 1995.
- Conover, W. J., *Practical Nonparametric Statistics,* 2nd ed., New York, NY, John Wirey & Sons, 1980.
- Gibbons, J. D., *Nonparametric Statistical Inference,* New York, NY, Marcel Dekker, 1985.
- Lehmann, E. L., *Nonparametrics: Statistical Methods Based on Ranks,* San Francisco, CA, Holden-Day, 1975.
- सिंह ए.एन. एवं गर्ग, नेहा, सांख्यिकी के सिद्धान्त

इकाई -19

सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका

इकाई की रूपरेखा :

19.0 उद्देश्य
19.1 प्रस्तावना
19.2 सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका (Role of Computer in Solving Statistical Problems)
19.3 कम्प्यूटर की विशेषताएँ
19.4 कम्प्यूटर का इतिहास
19.5 कम्प्यूटर का वर्गीकरण
19.6 कम्प्यूटर प्रणाली
19.6.1 हार्डवेयर
19.6.2 सॉफ्टवेयर
19.7 सारांश
19.8 अभ्यास प्रश्न
19.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

19.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- कम्प्यूटर का अर्थ, विशेषताओं तथा कम्प्यूटर के इतिहास से परिचित हो सकेंगे।
- सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका को समझ सकेंगे।

19.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका के बारे में बताया गया है। वर्तमान समय में कम्प्यूटर का प्रयोग लगभग सभी क्षेत्रों में होने लगा है। कम्प्यूटर का प्रयोग संख्यिकी से सम्बन्धित समस्याओं को सुलझाने में किया जाता है। कम्प्यूटर के द्वारा सांख्यिकी समस्याओं का समाधान कम समय में किया जा सकता है तथा इसका हल भी मानवीय गणनाओं की अपेक्षा ज्यादा सही होता है।

19.2 सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका

कम्प्यूटर का अर्थ

यह शब्द कम्प्यूटर 'compute' शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ गणना करना है। कम्प्यूटर को एक calculating device कहा जाता है जो अंकगणितीय गणनाओं तथा तथ्यों के (arithmetic) और logical operations को क्रियान्वित करता है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि कम्प्यूटर एक device है जो तथ्यों (data) का प्रक्रमण (processing) करता है। कम्प्यूटर न केवल तथ्यों के संग्रहण (data storage) और प्रक्रमण (processing) का काम करता है बल्कि इसके द्वारा हम Memory में भण्डारित (stored) तथ्यों (data) को Memory से retrieve भी कर सकते हैं।

कम्प्यूटर मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं-

1. डिजिटल कम्प्यूटर (Digital Computer)
2. एनालाग कम्प्यूटर(Analog Computer)

19.4 कम्प्यूटर की विशेषताएं

1. कम्प्यूटर के कार्य करने की क्षमता बहुत अधिक है। इस विशेषता से user का समय बचता है। यह Millions, Billions निर्देशों (Instructions) का बहुत कम सेकेन्ड में ही प्रक्रमण (process) कर देता है।
2. कम्प्यूटर की संचय क्षमता बहुत अधिक है, अतः कम्प्यूटर में आंकड़ा का संग्रहण (data store) करके अपनी सुविधा के अनुसार प्रक्रमण (process) कर सकते हैं।
3. कम्प्यूटर हमेशा सही परिणाम (accurate result) देता है।
4. कम्प्यूटर कैलकुलेटर से बेहतर मशीन है यह गणनात्मक (arithmetic) तथा logical दोनों ही प्रकार के कार्य (functions) निष्पादित (perform) करता है।

19.4 कम्प्यूटर का इतिहास (History of Computers)

आज से लगभग दो हजार वर्ष पूर्व अबेकस (abacus) के साथ ही कम्प्यूटर का अविष्कार हुआ। प्रारम्भ में इसका उपयोग व्यापारी वर्ग द्वारा ही किया जाता था। फिर धीरे-धीरे कम्प्यूटर के स्वरूप में निरन्तर परिवर्तन होते-होते यह आज के अत्याधुनिक आकार लैपटाप (laptop) एवं पामटाप (palmtop) में आ गया है तथा इसके उपयोग में भी क्रान्तिकारी वृद्धि हुई। (कतिपय उन्नतशील देशों में तो सारा कार्य ही कम्प्यूटर्स के माध्यम से ही किया जा रहा है।) ई-कामर्स (E-commerce) के माध्यम से घर बैठे सारी दुनिया से व्यापार किया जा रहा है। पारम्परिक डाक का स्थान ई-मेल (E-mail) ने ले लिया है जिसके माध्यम से अब सूचनायें तीव्रगति के साथ-साथ सस्ती दर पर भेजी जा रही है। इन्टरनेट (Internet) के द्वारा आप किसी भी विषय की अधिकतम जानकारी घर बैठे कर सकते हैं। अपने देश में भी कम्प्यूटरीकरण तेजी से हो रहा है। सरकारी कार्यालयों, रेलवे, एयरवेज एवं बैंक के कार्य अब इस देश में भी कम्प्ययूटर्स के माध्यम से किये जा रहे हैं।

कम्प्यूटर की पीढियाँ (Computer Generations)

1. प्रथम पीढ़ी (1946-1954)

प्रथम पीढ़ी में कम्प्यूटर में प्रक्रमण (processing) के लिए इलेक्ट्रानिक वाल्वस या वैक्यूम ट्यूब्स का इस्तेमाल होता था।

2.द्वितीय पीढ़ी (1955-64)

इस पीढ़ी में वैक्यूम ट्यूब्स के स्थान पर integrated circuits का प्रयोग होता था।

3.तृतीय पीढ़ी (1965-1974)

इस पीढ़ी में सी.पी.यू. (CPU components) के लिए integrated circuits का इस्तेमाल होता था।

4.चतुर्थ पीढ़ी (1975-अब तक)

इस पीढ़ी में सी.पी.यू. (CPU components) के लिए VLSI Chip का इस्तेमाल किया जाने लगा।

19.5 कम्प्यूटर्स का वर्गीकरण (Classification of Computers)

आकार एवं क्षमताओं के अनुसार कम्प्यूटर्स तीन प्रकार से वर्गीकरण किया जा सकता है-प्रथम-माइको कम्प्यूटर(Micro Computer), द्वितीय-मिनी कम्प्यूटर(Mini Computer), तथा तृतीय-सुपर कम्प्यूटर(Super Computer)। सामान्य रूप से माइक्रो कम्प्यूटर ही प्रयोग में आते हैं और इनको डेस्कटाप (Desktop) कम्प्यूटर अथवा पर्सनल कम्प्यूटर (PC) भी कहा जाता है। मिनी कम्प्यूटर माइको कम्प्यूटर की अपेक्षा अधिक आधुनिक होते हैं और उनकी संगणन (calcution) क्षमता भी अधिक होती है। सुपर कम्प्यूटर सबसे अधिक संगणन क्षमता वाले होते हैं और उनका आकार भी छोटा होता है। इस प्रकार के कम्प्यूटर्स अधिकतर मौसम के पूर्वानुमान तथा अंतरिक्ष शोध में प्रयोग में लाये जाते हैं।

19.6 कम्प्यूटर प्रणाली (Computer System)

कम्प्यूटर सिस्टम के मुख्य रूप से दो भाग होते हैं।

1. एक भाग हार्डवेयर (Hardware) कहलाता है जिसे छुआ एवं देखा जा सकता है
2. दूसरा भाग साफ्टवेयर (Software) अर्थात् प्रोग्राम जिसके द्वारा हम कम्प्यूटर से पारस्परिक क्रिया करते हैं।

कम्प्यूटर के विभिन्न भाग (Parts of Computer)

19.6.1 हार्डवेयर (Hardware)

कम्प्यूटर के पार्ट्स जिनको देखा एवं छुआ जा सकता है उसे हार्डवेयर (Hardware) कहते हैं। हार्डवेयर के निम्नलिखित भाग होते है होते हैं:

1. सी.पी.यू. (सेन्ट्ल प्रोसेसिंग यूनिट)- CPU (Central Processing Unit)

यह कम्प्यूटर का मुख्य भाग है जिसके माध्यम से निष्कर्ष प्राप्त किये जाते है। इसी भाग द्वारा कम्प्यूटर पर किये गये किसी कार्य का अंतिम परिणाम प्राप्त होता है।

2. रोम (रीड ओनली मेमोरी)- ROM (Read Only Memory)

यह कम्प्यूटर की स्थाई याददाश्त है जिसमें कम्प्यूटर में स्थापित सभी प्रकार की डिवाईसेज भण्डारित होती है।

3. रैम (रेन्डम एक्सेस मेमोरी)-RAM (Random Access Memory)

यह कम्प्यूटर की एक अस्थायी याददाश्त (मेमोरी) है जो कम्प्यूटर में भण्डारित की जा सकती है। यह कम्प्यूटर का स्विच बन्द करते ही तुरन्त गायब हो जाती है।

4. स्टोरेज व्यवस्था (Storage System)

कम्प्यूटर में सभी सूचनाओं व डेटा का भण्डार फ्लापी(Floppy), सी.डी(CD), चुम्बकीय टैप्स (Magnetic Tapes) एवं हार्ड डिस्क (Hard Disk) में किया जाता है। सभी डेटा शून्य (0) व एक (1) जो बाइट्स (Bytes) कहलाते हैं, के माध्यम से स्टोर किये जाते हैं । फ्लापी, चुम्बकीय टेप तथा हार्ड डिस्क में सूचनायें चुम्बकीय परतों तथा सी.डी. में Bits के माध्यम से भण्डार की जाती है जिसको बाद में लैजर बीम (Laser Beam) के माध्यम से पढ़ा जाता है।

5. पेरी फेरल्स (Peripherals)

सभी आन्तरिक व वाह्य युक्ति (Input and Output Devices) जो सेन्ट्रल प्रोसेसिंग यूनिट (CPU) के साथ लगी होती हैं को पेरी फेरल्स कहा जाता है। पेरी फेरल्स के हिस्से निम्नलिखित हैं:

इनपुट डिवाइस (Input Devices)

जिस युक्ति से हम कम्प्यूटर को सूचना प्रदान (data input) करते हैं उसे इनपुट डिवाइस (Input Devices) कहा जाता है। इस व्यवस्था के उदाहरण है कीबोर्ड (Keyboard), माउस (Mouse) ज्वाय स्टिक (Joystick) बार कोड रीडर (Bar Code Reader) आप्टिकल मार्क रीडर (Optical Mark Reader) चुम्बकीय स्याही करेक्टर रीडर (Magnetic Ink Character Reader) आदि।

(i) कीबोर्ड (Keyboard)

यह मुख्य इनपुट डिवाईस है जो टाइप राईटर की भाति होती है। कीबोर्ड दो प्रकार की(Keys) होती है, एक अल्फान्यूमेरिक की (Alphanumeric Keys) कहलाती है तथा दूसरी फन्क्शनल की (Functional Keys) कहलाती है। अल्फान्यूमेरिक की द्वारा कम्प्यूटर की स्क्रीन (Screen) पर टाइप किया जाता है तथा फन्क्शनल की द्वारा अन्य कार्य किये जाते हैं। Alt, Ctrl, Tab, Shift आदि फन्क्शनल की है।

(ii) माउस (Mouse)

यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण इनपुट डिवाइस है। इसका बाईं ओर का बटन दबाने पर कम्प्यूटर स्क्रीन पर तीर के चिन्ह (cursor) को घुमा कर इच्छित आईकान (icon) या स्थान पर पहुचा जाता है। माउस में सामान्यतः तीन बटन होते हैं परन्तु विन्डोज आपरेटिंग प्रणाली (Windows Operating System) में केवल दो बटनों का उपयोग होता है तथा तीसरे बटन का उपयोग यूनिक्स (Unix) आपरेटिंग सिस्टम में होता है। सामान्यतः बायें बटन का ही उपयोग होता है। दायें बटन का उपयोग किसी आप्शन (Option) को शार्टकट तरीके से लाने के लिए होता है।

(iii) बार कोड रीडर (Bar Code Reader)

इसके द्वारा डाटा को बारीक व मोटी लकीरों के मध्य की दूरी के रूप में कोड किया जाता है। इनका उपयोग किसी कम्पनी द्वारा निर्मित सामान की पहचान करने के लिए किया जाता है। इसे अंतरराष्ट्रीय स्तर के सामानों पर देखा जा सकता है।

(iv) आपटिकल मार्क रीडर OMR (Optical Mark Reader)

इसके द्वारा किसी कागज पर कोई चिन्ह विशेष है या नहीं, को देखा जाता है। इस युक्ति का उपयोग परीक्षाओं की उत्तर पुस्तिकाओं के जाँचने में किया जाता है।

(v) आपटिकल कैरेक्टर रीडर OCR (Optical Character Reader)

यह OMR से अधिक उच्चीकृत (superior) डिवाइस है जो न केवल चिन्ह को पहचानता है बल्कि इसके आकार को भी पहचान लेता है। बैंकों द्वारा इसका उपयोग चेकों के नम्बर पढ़ने में किया जाता है।

(vi) मैगनेटिक इंक करेक्टर रीडर MICR (Magnetic Ink Charater Reader)

इसमें एक विशेष प्रकार की रोशनाई का प्रयोग किया जाता है जिसके द्वारा किये गये लेखन का चुम्बकीकरण करके पढ़ा जा सकता है। बैंकों के Debit card, Credit Card में इसी रोशनाई का प्रयोग किया जाता है।

आउटपुट डिवाईसेज (Output Devices)

यह कम्प्यूटर के वे भाग हैं जिनसे हमें कम्प्यूटर पर किये गये कार्य के परिणाम प्राप्त होते हैं। यह डिवाइसेस है मानीटर, प्रिन्टर, प्लाटर आदि।

(i) मानीटर (Monitor)

इसे VDU, Visual Display Unit भी कहा जाता है। यह कम्प्यूटर का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है। मनीटर देखने में टी.वी. स्क्रीन की तरह होता है। मानीटर पर कम्प्यूटर द्वारा किया गया प्रत्येक कार्य प्रदर्शित होता है जिसे देखकर कम्प्यूटर पर कार्य किया जाता है।

(ii) प्रिन्टर (Printer)

कम्प्यूटर पर किये गये किसी कार्य को प्रिन्टर द्वारा कागज पर प्रिन्ट करने को चतपदजपदह कमअपबम कहते हैं। यह तीन तरह के होते है, डाट मैट्रिक्सय, इंक जेट व लेजर प्रिन्टर।

(iii) प्लाटर (Plotter)

इसके द्वारा मानचित्र बनाये जाते हैं।

19.6.2 साफ्टवेयर (Software)

यह कम्प्यूटर का वह भाग है जिससे कम्प्यूटर संचालित होते हैं। यह एक प्रोग्राम होता है जिसकी सहायता से हम हार्डवेयर के सम्पर्क में आते हैं।
साफ्टवेयर दो प्रकार के होते हैं:

1. सिस्टम साफ्टवेयर (System Software)
2. एप्लीकेशन साफ्टवेयर (Application Software)

सिस्टम साफ्टवेयर (System Software)

यह वह प्रोग्राम है जिसकी सहायता से एप्लीकेशन प्रोग्राम चलाये जाते हैं। यह एक एकीकृत विशेष प्रोग्राम है जो कम्प्यूटर के mechanical parts को निष्पादित अवस्था (functional state) में लाने का कार्य करता है।

एप्लीकेशन साफ्टवेयर (Application Software)

यह कम्प्यूटर के वे प्रोग्राम हैं जिसके द्वारा डाटा प्रोसेसिंग का कार्य किया जाता है उदाहरणार्थ रिपोर्ट तैयार करना इत्यादि। एम.एस. आफिस (MS Office), लोटस, स्मार्ट, सूट, कोरेल,पेज मेकर(Pagemaker), आटो कैड (Auto CAD) आदि एप्लीकेशन साफ्टवेयर के उदाहरण हैं।

प्रचालन तंत्र (Operating System)

प्रचालन तंत्र (Operating System) एक सिस्टम साफ्टवेयर है जो user और मशीन के बीच के संचार का माध्यम है। साथ ही साथ यह कम्प्यूटर के हार्डवेयर को भी संचालित करता है। यहuser द्वारा दिए निर्देशों को मशीन की भाषा में परिवर्तित करता है तथा फिर मशीन की भाषा को दुबारा user की भाषा में परिवर्तित करने का कार्य करता है।

- **सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की भूमिका (Role of Computer in Solving Statistical Problems)**

कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए विकास ने सांख्यिकी को भी संस्थाओं (संगठनों) में निर्णय निर्धारण प्रक्रिया (Decision Making Process) में अपनी भागीदारी बनाए रखने का सामर्थ्य प्रदान किया है।

सांख्यिकी समस्याओं की दीर्घसूत्री गणना (Complex Formulae Calculations) में समय अधिक लगता है। कम्प्यूटर के विकास ने सांख्यिकी प्रविधियों (Statistical Techniques) को त्वरित किया। व्यापार वाणिज्य तथा सरकारी प्रशासनिक क्षेत्र की सामने आने वाली जटिल समस्याओं, योजना निर्माण (Planning) आदि सभी क्षेत्रों में सांख्यिकी प्रविधियों की अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका है। कम्प्यूटर के माध्यम से सांख्यिकी की गणनात्मक प्रविधियों को अत्यधिक सहायता प्राप्त हुई है। अंकगणितीय गणनाओं तथा तथ्यों के संग्रहण, विश्लेषण आदि में तथा निर्णय निर्धारण (Decision Making) में सहायता प्राप्त हुई हैं। कम्प्यूटर निर्माणक (Computer Manufacturer) कम्प्यूटर सिस्टम में सांख्यिकी प्रविधियों की गणनात्मक (गणितीय) समस्याओं को हल करने के लिए नये साफ्टवेयर पैकेज विकसित कर रहे हैं। विश्वविद्यालय के शैक्षिक विभाग, अनुसंधान संस्थाएं भी विभिन्न सांख्यिकी समस्याओं के लिए साफ्टवेयर पैकेज तैयार कर रहे हैं।

19.7 सारांश

कम्प्यूटर एक ऐसा यंत्र है जिससे कम से कम समय में कार्य को किया जा सकता है। कम्प्यूटर का प्रयोग दीर्घसूत्रीय गणनाओं को हल करने में किया जाता है। दीर्घसूत्रीय गणनाओं को कैलकुलेटर अथवा अन्य किसी यंत्र के द्वारा भी हल किया जा सकता है परन्तु समय अधिक लगता है इस प्रकार कम समय में कम्प्यूटर द्वारा गणनाओं को हल किया जा सकता है। सांख्यिकी समस्याओं के समाधान में कम्प्यूटर की महत्वपूर्ण भूमिका है।_

19.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कम्प्यूटर से आप क्या समझते हैं? इसके इतिहास पर प्रकाश डालिये।
2. कम्प्यूटर का वर्गीकरण समझाइयें।
3. हार्डवेयर के विभिन्न भागों का उल्लेख कीजिए |
4. सॉफ्टवेयर के प्रकारों की विवेचना कीजिए |

19.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Simpson and Kafka, Basic Statistics.
- Sanchcti D. C. & Kapoor U. K., Statistics (Theory, Methods & Application) Sultan Chand & Sons, 1995.
- सिंह, ए.एन., संख्यिकी एवं कम्पयूटर।

इकाई -20

तथ्य (समंक) प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य
20.1 प्रस्तावना
20.2 प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक
20.3 प्राथमिक समंक एकत्र करने की विधियाँ
20.4 द्वितीयक समंक के स्त्रोत
20.5 सारांश
20.6 अभ्यास प्रश्न
20.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

20.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:तथ्य संकलन के बारे में जान सकेंगे।

- प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक से परिचित हो सकेंगे।
- तथ्य संकलन के स्रोतों के बारे में जान सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में तथ्यों (Data) के प्रकार , प्राथमिक एवं द्वितीयक समंक तथा तथ्य संकलन के स्रोतों के बारे मे बताया गया है। तथ्यों का संकलन किसी भी अध्ययन के लिये एक अनिवार्य आवश्यकता है। तथ्यों के संकलन के द्वारा किसी भी विषय अथवा समस्या से जुडे आंकडें एकत्र किये जाते हैं।

तथ्य या समंक (Data)

प्रारम्भिक विवेचना के अनुसार अनुसंधानकर्ता के सामने सबसे बड़ी समस्या तथ्यों और वास्तविक सूचनाओं को एकत्र और प्राप्त करना है। तथ्यों का संकलन अत्यधिक सावधानी से और ध्यानपूर्वक करना चाहिए क्योकि यह सांख्यिकी विश्लेषण की नींव होते हैं। इसमें दोष या त्रुटि होने से पूरा विश्लेषण (अनुसंधान) प्रभावित होगा और निष्कर्ष अशुद्ध होगा।

20.2 प्राथमिक और द्वितीयक समंक(तथ्य)

समंक का संकलन प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतो में किया जाता है। प्राथमिक स्रोत में समंक का संकलन अनुसंधानकर्ता स्वयं करता है। अनुसंधानकर्ता स्वयं वास्तविक अध्ययन क्षेत्र में जाकर समस्या से संबन्धित तथ्यों को अपने प्रयोग में लाने के लिए इकट्ठा करता है और इसे प्रारम्भ से अन्त तक अपने ढंग से नये सिरे से एकत्रित करता है। द्वितीयक समंक वे होते हैं जिनका संकलन अनुसंधानकर्ता स्वयं नहीं करता है बल्कि यह पहले से ही किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा संकलित होते हैं। उदाहरण स्वरूप- औद्योगिक मंत्रालय के द्वारा संग्रह्ति समंक विभिन्न सार्वजनिक सूचना की

उपस्थिति द्वारा निर्मित किये जाते हैं जो प्राथमिक समंक होते हैं यदि औद्योगिक मंत्रालय तथ्यों का संग्रहण किसी दूसरे संस्था जैसे एन.एस.ओ. (राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण संगठन) से एकत्रित करता है तो वह मंत्रालय के द्वितीयक समंक होते हैं। प्राथमिक समंको के संकलन के लिए अत्यधिक अनुभव व जानकारी की आवश्यकता होती है।

प्राथमिक समंक(Primary Data)

ऐसे समंक जिन्हें अनुसंधानकर्ता अपने बुद्धि के आधार पर स्वयं योजनाबना कर संग्रहीत करता है उन्हें प्राथमिक समंक कहते हैं। उदाहरण- जनसंख्या सर्वेक्षण के समंक प्राप्त करने के लिए सामान्य रजिस्ट्रार कार्यालय और सर्वेक्षण आयोग, गृह मंत्रालय के द्वारा प्राप्त समंक प्राथमिक समंक हैं।

द्वितीयक समंक (Secondary Data)

धन, समय, और संसाधनों की कमी के कारण अनुसंधानकर्ता के लिए हमेशा सम्भव नहीं हो पाता है कि वह स्वयं समंक एकत्रित करे।

अनुसंधानकर्ता के अलावा किसी अन्य व्यक्ति या संस्था के द्वारा एकत्रित समंक को द्वितीयक समंक कहते हैं। द्वितीयक समंको का उपयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए क्योकि यह भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से संग्रहित किये जाते हैं जो अनुसंधानकर्ता केअनुसंधान के लिए पूर्ण रूप से तार्किक नहीं होते हैं।

द्वितीयक समंक से लाभ :

1. यह अन्य विधियों की अपेक्षा सूचनाओं के उपयोग के लिए अत्यधिक सुविधाजनक हैं। इसमें समंको के मुद्रण संकलन, प्रगणक, सूचना सम्पादन, सारिणीयन और परिणाम आदि की कोई आवश्यकता नहीं होती है। इसमें अनुसंधानकर्ता को अत्यधिक श्रम नहीं करना पड़ता है।
2. द्वितीयक समंकों को प्राथमिक समंकों की अपेक्षा अत्यधिक तीव्र गति से आसानी से प्राप्त किया जाता है।
3. कभी-कभी प्राथमिक समंकों का संग्रहण असम्भव होता है जैसे जनगणना तथ्यों को अकेले या अनुसंधानकर्ताओं के संगठन के द्वारा संग्रहित नहीं किया जा सकता है। इसमें प्राथमिक समंक के स्थान पर हमेशा द्वितीयक समंक का प्रयोग होता है।

यद्यपि द्वितीयक समंक के प्रयोग में दो कठिनाइयों का सामना करना पड़ता हैः

(अ) आवश्यकता के अनुसार इसको खोजने में कठिनाई होती है।

(ब) इन समंकों में यर्थाथता की कमी होती है।

प्राथमिक और द्वितीयक समंक के मध्य चुनाव(विकल्प)

अनुसंधानकर्ता को प्रारम्भ में ही यह अवश्य निश्चित कर लेना चाहिए कि वह अनुसंधान में प्राथमिक या द्वितीयक समंक का उपयोग करेगा। इन दोनों के मध्य चुनाव निम्नलिखित बातों पर निर्भर करता है-

(अ) सूचना के प्रकार (स्वभाव) और क्षेत्र पर

(ब) आर्थिक या वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता

(स) समय की उपलब्धता

(द) यथार्थता की निश्चित माप

(य) संग्रहित संस्थाओं(जैसे-वह व्यक्तिगत, संस्थात्मक और सरकारी संस्था)

इन तथ्यों के आधार पर हम यह निर्धारित कर सकते हैं कि इसमें (प्राथमिक या द्वितीयक समंकों) में कौन विश्लेषण के आधार पर अधिक उपयुक्त हैं।

20.3 प्राथमिक समंकों को एकत्रित करने की विधियां

प्राथमिक समंकों को एकत्रित करने की निम्न प्रमुख विधियां हैं

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार
2. अप्रत्यक्ष मौखिक साक्षात्कार
3. प्रेषित प्रश्नावली विधि
4. संवाददाताओं द्वारा सूचना प्राप्ति
5. प्रगणकों द्वारा अनुसूची को भरना

1. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार

इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता सूचना देने वालों से प्रत्यक्ष (आमने-सामने) सम्बन्ध स्थापित कर सूचना (समंक) प्राप्त करता है। इसमें अनुसंधानकर्ता निरीक्षण का सहारा लेता है। सर्वेक्षण में तथ्यों से सम्बन्धित मामलों और समंको को एकत्रित करने के लिए साक्षात्कारकर्ता प्रश्नों को पूछता है।

गुण

प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार के उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

i. प्रत्यक्ष व्यक्तिगत साक्षात्कार में वांछित सूचनाओं के अतिरिक्त और भी सूचनाएं प्राप्त होती हैं जो अनुसंधान के लिए उपयोगी होती हैं।

ii. इस विधि के द्वारा प्राप्त समंक अत्यधिक सही होते हैं क्योकि साक्षात्कारकर्ता प्रश्न में किसी प्रकार की शंका होने पर उसकी उचित सूचना लेता है।

iii. इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता सुविधापूर्वक प्रश्नों का हेरफेर कर लचीले ढंग से सभी - प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर लेता है अतः यह एक लचीलात्मक विधि है।

सम्प्रेषण की भाषा को अनुसंधानकर्ता सूचनादाता के शैक्षिक स्तर और प्रस्थिति के अनुसार रखता है। जिससे सूचनादाता को कोई असुविधा न हो।

अनुसंधानकर्ता अपने निरीक्षण में ही सूचना देने वालों की शुद्धता की जाँच कर लेता है।

सीमाएं

i. यह विधि अत्यधिक महंगी होती है अत्यधिक लोगों के साक्षात्कार एक बड़े क्षेत्र में फैला होता है जिसमें धन अधिक व्यय होता है।

ii. अन्य विधियों की अपेक्षा इस विधि में पक्षपात हो सकता है।

iii. इसमें साक्षात्कारकर्ता को अनुभवी और निरीक्षण में कुशल होना चाहिए। अन्यथा वह इच्छित सूचनाओं की प्राप्ति नहीं कर सकता है।

iv. इस विधि में अन्य विधियों की अपेक्षा सूचना एकत्र करने में अत्यधिक समय व्यय होता है।

2. अप्रत्यक्ष मौखिक साक्षात्कार

इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता ऐसी तीसरी पार्टी से सम्पर्क करता है जिसे साक्षी कहते हैं जो सूचनाओं की आवश्यक जानकारी देने में समर्थ हो। इस विधि का प्रयोग सामान्यतः ऐसी जानकारी प्राप्त करने में होता है जिसके तथ्य (समंक) जटिल हों या सूचना देने वाले उत्तरदाता प्रश्नों के उत्तर देने में अयोग्य हो। जैसे- किसी विश्वविद्यालय में छात्रों ने आन्दोलन कर दिया तो विश्वविद्यालय प्रशासन इसकी जानकारी कि आन्दोलन किस कारण हुआ इसी विधि द्वारा प्राप्त करेगा।

गुण

i. इस विधि में व्यक्तिगत पक्षपात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।
ii. इस विधि के द्वारा सूचनादाता की गुप्त सूचनाओं की भी जानकारी होती है।
iii. इस विधि में एक से अधिक व्यक्तियों से सूचनाओं की वास्तविक जानकारी प्राप्त की जा सकती हैं।

सीमाएं

i. इस विधि में अत्यधिक शुद्धता नहीं होती है क्योकि अनुसंधानकर्ता स्वयं उपस्थिति नहीं होता है।
ii. इस विधि का प्रयोग सूचना के अप्रत्यक्ष स्रोत के रूप में होता है। जब प्रत्यक्ष स्रोत उपस्थिति नहीं होते हैं।
iii. इस विधि में भिन्नभिन्न सूचना प्राप्त होने से समंकों की -भिन्न व्यक्तियों के द्वारा भिन्न-जाती एकरूपता समाप्त होहै।

1) संवाददाताओं द्वारा सूचना प्राप्ति

इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता भिन्नभिन्न क्षेत्रों से सूचना एकत्र करने के लिए स्थानीय व्यक्ति या संवाददाता को नियुक्त करता है। यह संवाददाता सूचनाओं को एकत्रित कर उसे उस मुख्य कार्यालय या अनुसंधानकर्ता को भेज देते हैं जहाँ पर समंक संग्रहण की प्रक्रिया होती है। समाचार पत्रों की संस्थाओं मे अधिकांशतः यही विधि अपनायी जाती है।

यह विधि प्रायः उन परिस्थितियों में ज्यादा उपयोग में लायी जाती है जहाँ विस्तृत क्षेत्र में नियमित अन्तराल में सूचनाएं एकत्रित की जाती हैं।

गुण

i. यह विधि विस्तृत क्षेत्र से सूचना प्राप्त करने के लिए उपयुक्त होती है।
ii. इसमें धन, समय, व परिश्रम कम लगता है।

दोष

i. इसमें सूचना प्राप्त करने में समय अधिक लग जाता है।
ii. इस विधि में उच्च स्तर की शुद्धता नहीं होती है।

प्रेषित प्रश्नावली विधि

इस विधि में प्रश्नों की एक सूची सर्वेक्षण के लिए तैयार की जाती है जिसे प्रश्नावली कहते हैं और इसे विभिन्न सूचनादाताओं के पास डाक द्वारा भेजते हैं। प्रश्नावली में प्रश्न दिये होते हैं और उनके उत्तर के लिए जगह होती है। सूचनादाता को उसी के साथ एक प्रार्थना पत्र भेजा जाता है जिसमें प्रश्नावली भरने और उसे निश्चित समय में वापस भेजने की सूचना दी जाती है।

गुण

i. जब अनुसंधान का क्षेत्र अत्यधिक बड़ा होता है तब यह विधि समंक संग्रहण के लिए आसानी से प्रयोग की जा सकती है।
ii. यह अन्य की अपेक्षा सस्ती होती है और इसमें सूचना सही समय पर प्राप्त होती है।
iii. स्वयं सूचकों के द्वारा भरी जाने के कारण मौलिक एवं निष्पक्ष होती है।

दोष

i. यह विधि तभी उपयोग में लायी जा सकती है, यदि उत्तरदाता शिक्षित हो।
ii. यदि सूचना देने वाले में रूचि की कमी है तो सही समय पर सही ढंग से भरी हुई प्रश्नावली प्राप्त नहीं होती है।
iii. इसमें उत्तरों में अनिश्चितता की सम्भावना अधिक होती है।
iv. यदि प्रश्नावली सरल नहीं हुई तो उत्तर अशुद्ध मिलेंगे।

इस विधि को प्रभावशाली बनाने के लिए निम्न सुझाव पर ध्यान देना चाहिएः

1) प्रश्नावली बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उत्तरदाता पर अत्यधिक बोझ न हो अन्यथा वह उसे वापस नहीं करेगा।
2) उसमें डाक टिकट पहले से लगे होने चाहिए।
3) उसमें वर्जित प्रश्नों को शामिल नहीं करना चाहिए।
4) नमूना बड़ा होना चाहिए।

प्रगणकों द्वारा अनुसूचियों का भरना

समंक संग्रहण की इस विधि में प्रगणकों द्वारा सूचनादाताओं से पूछकर प्रश्नावली तथा अनुसूची भरवाते हैं। इसमें प्रगणक (साक्षात्कारकर्ता) अपनी हस्त- लेखन मे अनुसूची स्वयं उत्तरदाता से उत्तर पूँछकर भरता है। इसमें प्रगणक अलग-अलग क्षेत्र में जाकर सूचनादाताओं से सम्पर्क स्थापित कर उनसे पूछकर अनुसूची भरते हैं।

गुण

i. यह विधि अशिक्षित उत्तरदाता पर भी प्रयोग में लायी जा सकती है।
ii. उत्तरों की सत्यता की जांच का उचित अवसर मिलता है।
iii. इस विधि में बहुत ही कम सूचनादाता ऐसे होते है जो व्यक्तिगत रूप से सूचना नहीं देते।

सीमाएं

i. यह विधि महंगी पड़ती है क्योकि प्रगणक व्यवसायिक होते हैं।
ii. प्रगणक की कुशलता धि की सफलता निर्भर करती है।पर ही इस वि (निपुणता)

iii. इसमें प्रगणकों की पक्षपात की भावना से निष्कर्ष अविश्वसनीय हो जाते हैं।

iv. इसमें साक्षात्कारकर्ता के व्यक्तित्व में भिन्नता होने के कारण उत्तर में भी भिन्नता मिलती है। यह भिन्नता प्रत्यक्ष स्पष्ट नहीं होती है।

प्रश्नावली निर्माण प्रक्रिया

प्रश्नावली विधि के द्वारा समंक संग्रहण की विधि की सफलता उचित रूप से प्रश्नावली निर्माण प्रक्रिया के ऊपर निर्भर करती हैं। प्रश्नावली निर्माण के लिए अत्यधिक अनुभव और कुशलता की आवश्यकता होती हैं। कुछ सामान्य सिद्धान्त प्रश्नावली बनाने में मदद करते हैं जो निम्नलिखित हैं:

(1) सहगामी पत्र- सर्वेक्षण करने वाले व्यक्ति को इसमें स्वयं के बारे में और सर्वेक्षण के उद्देश्य की जानकारी देनी चाहिए। इसमें निम्नलिखित बातें होनी चाहिए :

- (अ) यह सहगामी पत्र अच्छे कागज पर साफ व सुन्दर टाइप से आकर्षित शीर्षक सहित छपा हो जो उत्तरदाता को आकर्षित कर सके।
- (ब) उसमें एक स्वयं का पता लिखा डाक लिफाफा लगा होना चाहिए जिससे उत्तरदाता को प्रश्नावली लौटाने में सुविधा हो।
- (स) उत्तरदाता को यह विश्वास दिलाना चाहिए कि उसके उत्तरों को गुप्त रखा जाएगा।
- (द) यदि उत्तरदाता की रूचि हो तो उसे सर्वेक्षण के परिणाम की एक कापी देने का वादा करना चाहिए।

(2) प्रश्नों की संख्या कम होनी चाहिए।

(3) प्रश्नों को तार्किक रूप से व्यवस्थित करना चाहिए।

(4) प्रश्न छोटे तथा सरल होने चाहिए।

(5) संदिग्ध व गुप्त प्रश्नों से बचना चाहिए।

(6) व्यक्तिगत प्रश्नों से बचना चाहिए।

(7) सूचना प्रपत्र में आवश्यक नियम देने चाहिए।

(8) उद्देश्यपूर्ण उत्तर वाले प्रश्नों का निर्माण करना चाहिए।

(9) गणनात्मक प्रश्नों से बचना चाहिए।

(10) प्रश्नावली का पूर्व परीक्षण।

(11) यदि सम्भव हो तो उत्तरों की एक अनुमानित जांच कर लेनी चाहिए।

(12) सारिणीयन विधि का पूर्व निर्धारण कर लेना चाहिए।

20.4 द्वितीयक समंकों के स्रोत

द्वितीयक समंकों के स्रोतों को दो भागों में बांटा गया है-

(अ) प्रकाशित स्रोत(Published Sources)

द्वितीयक समंक का संग्रहण सरकारी, अर्द्धसरकारी सामान्य संस्थाओं और अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं का समय-समय पर प्रकाशन करता है (वार्षिक, मासिक एवं साप्ताहिक आदि) यह समंक एकत्रित कर इसका प्रकाशन करते हैं।

(ब) अप्रकाशित स्रोत (Unpublished sources)

सभी सांख्यिकीय सामग्री हमेशा प्रकाशित नहीं होती हैं। बहुत से स्रोत सरकार, संस्थाओं, अनुसंधान संस्थाओं और विभिन्न अनुभवी व्यक्तियों आदि के द्वारा एकत्र किये गये अप्रकाशित होते हैं। यदि आवश्यकता हो तो इनका उपयोग किया जा सकता है।

द्वितीयक समंक के प्रयोग में सावधानी

बाउले के अनुसार- ''द्वितीयक समंकों को उसी रूप में जैसा का तैसा स्वीकार नहीं करना चाहिए''। इसका कारण है कि कई कारणों से इन समंकों में अनेक त्रुटिया हो सकती हैं जैसे पक्षपात, क्षेत्र व उद्देश्य की भिन्नता, अंकगणितीय त्रुटियाँ आदि। अतः इन समंकों के प्रयोग से पहले अनुसंधानकर्ता को निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए-

1) अनुसंधान के लिए समंकयोग्य हैं कि नहीं।
2) अनुसंधान के उद्देश्य की दृष्टि से समंक उचित हैं कि नहीं।
3) समंक यथार्थ हैं कि नहीं।

20.5 सारांश

इस इकाई में तथ्य समंकों के प्राथमिक तथा द्वितीयक समंकों के बारे में बताया गया है। समंक का संकलन प्राथमिक और द्वितीयक स्रोतो में किया जाता है। प्राथमिक स्रोत में समंक का संकलन अनुसंधानकर्ता स्वयं करता है। अनुसंधानकर्ता स्वयं वास्तविक अध्ययन क्षेत्र में जाकर समस्या से संबन्धित तथ्यों को अपने प्रयोग में लाने के लिए इकट्ठा करता है और इसे प्रारम्भ से अन्त तक अपने ढंग से नये सिरे से एकत्रित करता है। द्वितीयक समंक वे होते हैं जिनका संकलन अनुसंधानकर्ता स्वयं नहीं करता है बल्कि यह पहले से ही किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा संकलित होते हैं।

20.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्राथमिक समंकों को एकत्रित करने की विधियों पर प्रकाश डालियें |
2. द्वितीयक समंकों के स्रोतों की विवेचना कीजिए |

20.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- P. V. Young,(1968) Scientific Social survey and Research.
- G.A. Lundberg (1951), Social Research.
- Goode and Hatt (1954) Methods in Social Research.
- C.A.Moser ,Survey Methods in Social Investigation

इकाई - 21

चित्रों द्वारा सांख्यिकीय समंकों का प्रदर्शन

इकाई की रूपरेखा

21.0 उद्देश्य

21.1 प्रस्तावना

21.2 चित्रों द्वारा सांख्यिकीय समंकों का प्रदर्शन (Diagrammatic Representation of the Statistical Data)

21.3 चित्रों के प्रकार

21.4 चित्र लेख

21.5 आवृत्ति वक्र

21.6 सारांश

21.7 अभ्यास प्रश्न

21.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

21.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- चित्रों द्वारा सांख्यिकी समंकों के प्रदर्शन को समझ सकेंगे।
- चित्र बनाने के सामान्य नियम, चित्रों के प्रकार को जान सकेंगे।

21.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में चित्रों द्वारा सांख्यिकी समंकों का प्रदर्शन के बारे में बताया गया है। तथ्यों का चित्रों तथा ग्राफ के रूप में प्रदर्शन से मस्तिष्क पर अत्यधिक स्थायी प्रभाव पड़ता है। तथ्यों की आपस में तुलना करने हेतु ग्राफ और चित्रों से हमेशा तुलनात्मक रूप का महत्व जितना स्पष्टहोता है उतना किसी अन्य विधि से सम्भव नहीं है। यह तथ्यों के विवरणात्मक अध्ययन में समय और परिश्रम दोनों को बचाता है।

21.2 चित्रों द्वारा सांख्यिकीय समंकों का प्रदर्शन (Diagrammatic Representation of the Statistical Data)

सांख्यिकीय समंकों का चित्रात्मक और बिन्दुरेखीय प्रदर्शन निश्चित रूप से एक साधारण व्यक्ति के सरल और अच्छे ढंग से सांख्यिकीय व्याख्या को समझने के लिए आवश्यक औजार है। तथ्यों का वर्गीकरण और सारिणीयन कर देने से तथ्यों के ढेर को व्यवस्थित व क्रमबद्ध किया जाता है परन्तु इसका स्वरूप शुष्क, भ्रमित और बिखरा हुआ है। यदि तथ्य संख्या व आकार में बड़े हों तो इनके अध्ययन के लिए अधिक समय और मस्तिष्क पर अत्यधिक जोर देने की आवश्यकता होती है। तथ्यों का चित्रों तथा ग्राफ के रूप में प्रदर्शन से मस्तिष्क पर अत्यधिक स्थायी प्रभाव पड़ता है। जब

तथ्यों में दो गुणों की एक दूसरे से तुलना करनी हो तो ग्राफ और चित्रों से हमेशा तुलनात्मक रूप का महत्व जितना स्पष्ट होता है उतना किसी अन्य विधि से सम्भव नहीं है। यह तथ्यों के विवरणात्मक अध्ययन में समय और परिश्रम दोनों को बचाता है।

यद्यपि इसके कुछ दुष्परिणाम भी हैं। चरों के अध्ययन में ग्राफ यथार्थ माप नहीं देता है। चित्रों के द्वारा बहुमुखी सूचनाओं का प्रदर्शन सम्भव नहीं होता है। चित्रों के द्वारा सूक्ष्म अन्तर को दिखाना सम्भव नहीं हो पाता तथा संख्यात्मक प्रर्दशन भी असम्भव होता हैं। इसमें माप के लिए उचित निर्णय लेने में कठिनाई होती है। भिन्न-भिन्न माप के स्तर से तथ्यों का उचित (सही) प्रर्दशन करना सम्भव नहीं होता है।

चित्र बनाने के सामान्य नियम

1. चित्र का शीर्षक चित्र के ऊपर या नीचे किसी भी स्थान में हो सकता है परन्तु वह छोटा तथा विषय को सही रूप में स्पष्ट करता हो।
2. चित्रों का निर्माण करते समय उनेमें स्पष्टता, सुन्दरता, आकर्षक तथा यथार्थता होनी चाहिए।
3. चित्र बनाने से पहले स्थान व अंकित सूचना के अनुसार मापदण्ड निश्चित कर लेना चाहिए और उसे कागज की माप के अनुसार होना चाहिए।
4. चित्रों में आवश्यकतानुसार सूचना को प्रदर्शित करने के लिए आकर्षक चिन्हों व रंगों का प्रयोग करना चाहिए जिससे कि तथ्यों के महत्वपूर्ण विशेषताओं पर ध्यान अपने आप आकर्षित हो।
5. चित्रों का चुनाव उचित रीति से करना चाहिए उसके चुनाव से पहले उपयुक्तता पर ध्यान देना चाहिए।
6. चित्र ज्यामितीय रूप से सही होने चाहिए। यह ध्यान रखना चाहिए कि आकड़ों के प्रतिनिधि होते हैं, अतः उनके पारस्परिक अनुपात में अन्तर नहीं होना चाहिए।

21.3 चित्रों के प्रकार

साधारणतः चित्रों को विभिन्न भागों में विभाजित करते हैं:

एक विमा चित्र (One Dimensional Chart)

यह क्षैतिज या उध्र्व रेखाओं या दण्ड के रूप में होती है। रेखा या दण्ड की लम्बाई से ही पदों के मूल्यों को प्रदर्शित किया जाता है। दण्ड चित्र निम्न प्रकार के होते है:

सरल दण्ड चित्र (Simple Bar Chart)

सरल दण्ड चित्र एक विमीय चित्र है। इन चित्र का उपयोग एक चर मूल्यों के समय और भौगोलिक स्थान आदि से तुलना में करते हैं। यह दण्ड चित्रों का सबसे सरल रूप है। इस प्रकार के चित्रों में तथ्यों के परिणामों या माप को केवल सीधी लाइनों द्वारा ही नहीं बल्कि चैड़ाई लिए हुए लम्बी छड़ों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। लम्बाई के साथ-साथ चैड़ाई होने से यह देखने में सुन्दर लगते हैं। इनकी चैड़ाई का निर्धारण चित्र बनाने वाला अपनी कलात्मक दृष्टि से करता है, परन्तु इनकी लम्बाई तथ्यों के परिणाम के अनुसार होती है। दण्डों के मध्य समान स्थान छोड़ना चाहिए। दण्ड रचना का निर्माण करते हुए इच्छानुसार उचित स्थान पर उनकी माप और शीर्षक लिखना चाहिए।

उदाहरण

भारत में चावल उत्पादन को (टन में) दण्ड चार्ट बना कर प्रदर्शित करो:

वर्ष	1978	1979	1980	1981	1982	1983
चावल उत्पादन (टन में)	4500	5700	6100	6500	4300	7800

हल

दिये गये तथ्यों में एक चर मूल्य को प्रदर्शित करता है अतः यहाँ सरल दण्ड चित्र चित्रित होगा जो निम्न है:

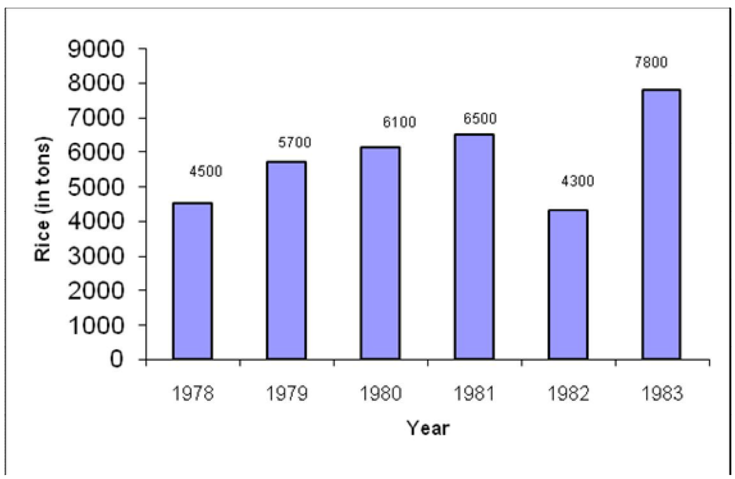

अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र (Intersected Bar Chart)

इसके अन्तर्गत जब एक चर मूल्य विभिन्न भागों में विभक्त हो तो उसे अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं। ये विभिन्न भाग कुल परिणाम के साथ अपना अनुपात प्रकट करते हैं और एक-दूसरे से तुलनीय होते हैं। भिन्न भागों को प्रदर्शित करने के लिए भिन्न चिन्हों या रंगों का प्रयोग करते हैं। परन्तु प्रत्येक भाग के सम्पूर्ण दण्डों के चिन्ह या रंगों को एक समान रखते हैं। चिन्हों या रंगों और प्रयोग किये गये मापों की सूची को चित्र में लगाना चाहिए।

उदाहरण

निम्न सारिणी में कक्षा X के तीन वर्ष का परिणाम दिया गया है:

वर्ष	छात्रों की संख्या			
	प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण	द्वितीय श्रेणी में उत्तीर्ण	तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण	अनुत्तीर्ण
1988	10	35	25	10
1989	15	25	35	15
1990	15	35	40	10

उपरोक्त तथ्यों को अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र के रूप में प्रस्तुत करो।

हल

सर्वप्रथम दिये गये वर्षों में बच्चों की संख्या का सरल दण्ड चित्र बनायेंगे।

वर्ष	:	1988	1989	1990
संख्या	:	80	90	100

अब प्रत्येक को चार भागों में अन्तर्विभक्त करेंगे।

1988 दण्ड का अनुपात 10: 35: 25: 10

1989 दण्ड का अनुपात 15: 25: 35: 15

1990 दण्ड का अनुपात 15: 35: 40: 10

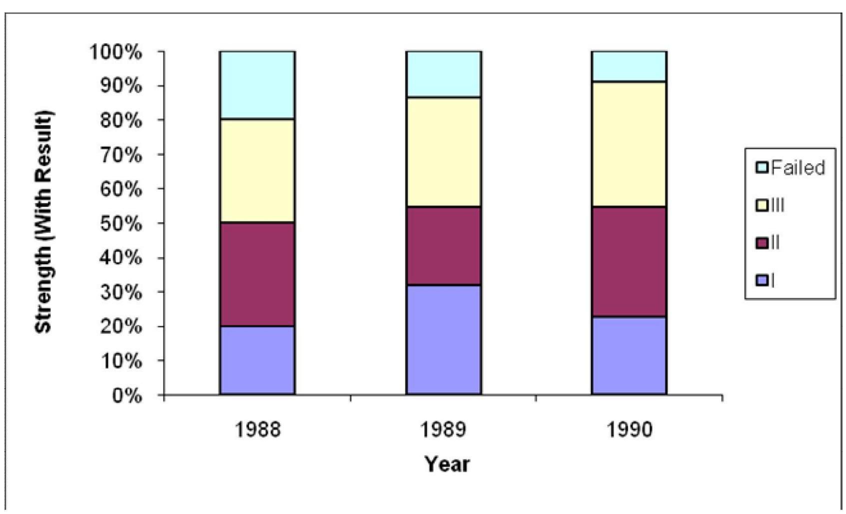

उदाहरण

निम्न आंकड़ों में दो परिवारों का खाना, कपड़ा, शिक्षार, इंधन, मकान का किराया और अन्य आवश्यक वस्तुओं (प्रतिशत में) पर होने वाला व्यय दिखाया गया है:

सामान	**व्यय (प्रतिशत में)**	
	परिवार A	**परिवार B**
खाना	30	40
कपडे	15	20
शिक्षा	20	15
ईंधन	10	10
मकान का किराया	15	10
अन्य	10	5

उपरोक्त आकड़ों को अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र में प्रदर्शित करो?

हल

सर्वप्रथम दो समान लम्बाई और चैड़ाई के आयत एक दूसरे से थोड़ी दूरी पर बनाएंगे।

तब, उसे दिये गये अनुपात में बांटंगे:

प्रथम बार : 30: 15: 20: 10: 15: 10

द्वितीय बार : 40: 20: 15: 10: 10: 5

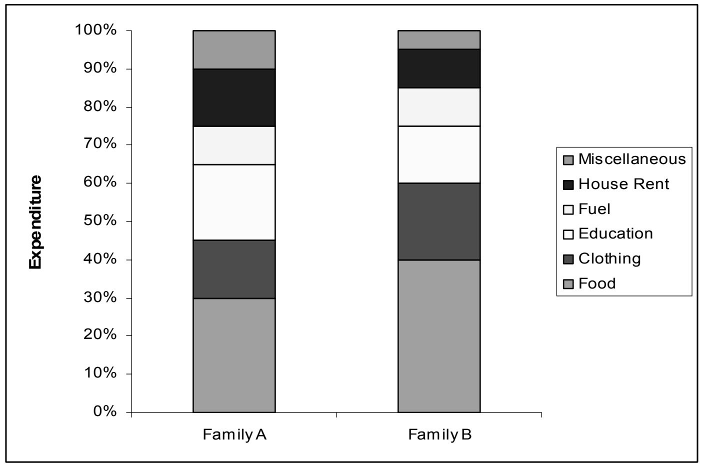

मिश्रित (बहुगुणी) दण्ड चित्र (Mixed Bar Chart)

यह सरल दण्ड चित्र का विस्तृत रूप है। इसमें एक साथ ही एक से अधिक तथ्यों को प्रदर्शित किया जा सकता है। मिश्रित (बहुगुणी) दण्ड चित्र में दो या दो से अधिक तथ्यों को भिन्न दण्डों के द्वारा भिन्न-भिन्न रंगों या चिन्हों के द्वारा प्रदर्शित कर तुलना करने में अत्यधिक उपयोगी है। सारिणी में इन चिन्हों और रंगों का विवरण अवश्य देना चाहिए। तथ्यों के विभिन्न गुणों की तुलना के लिए दण्डों को एक दूसरे से सटाकर बनाया जाता है। इन चित्रों का निर्माण दो या दो से अधिक अन्तःसम्बन्ध तथ्यों जिसमें विभिन्न समय, स्थान आदि की दृष्टि से तुलना करनी हो उनके अध्ययन के लिए बनाये जाते हैं।

उदाहरण

हाईस्कूल में वर्ष 2010-11 की वार्षिक परीक्षा के परिणाम निम्न सारिणी में प्रदर्शित हैं

कक्षा	V	VI	VII	VIII	IX	X
लड़के	80	80	40	90	70	70
लड़कियां	60	70	60	60	80	60

उपर्युक्त तथ्यों को बहुगुणी दण्ड चित्र के रूप में प्रदर्शित करो।

हल

यहाँ पर प्रत्येक कक्षा के लिए लड़के और लड़कियों के अलग-अलग परिणाम दिये गये हैं अतः दो चर मूल्यों का प्रयोग हुआ जिसको निम्न प्रकार प्रदर्शित करते हैं।

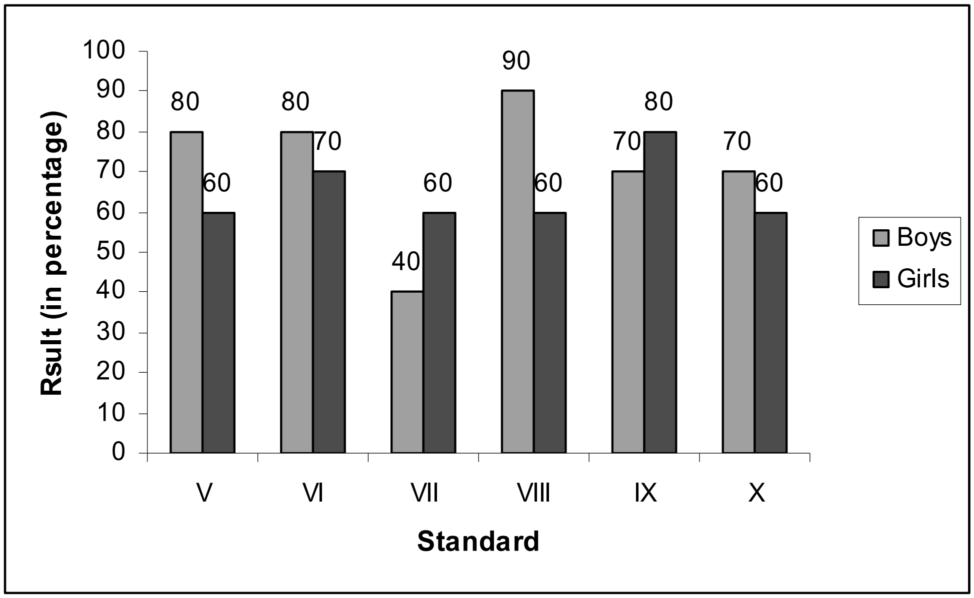

प्रतिशत दण्ड चित्र (Percentage Bar Chart)

यह दण्ड भी अन्तर्विभक्त होते हैं। प्रतिशत दण्ड चित्र में आकड़ों को प्रतिशत में परिवर्तित करके उसके अनुसार दण्ड विभाजित किया जाता है। प्रत्येक दण्ड की लम्बाई चैड़ाई बराबर होती है क्योंकि प्रत्येक दण्ड को 100 के बराबर प्रदर्शित करते हैं। केवल उसके अन्तर्विभाजन में प्रतिशत की भिन्नता के अनुसार अन्तर होता है।

उदाहरण

निम्न तथ्य राज्य में हिन्दू, सिक्ख और मुसलमानों के प्रतिशत को वर्ष 1989 से 1991 के अन्तर्गत प्रदर्शित करते हैं:

Year	Hindu	Sikh	Muslim
1989	30%	45%	25%
1990	35%	55%	10%
1991	25%	55%	20%

इनका प्रतिशत दण्ड चित्र बनाओ?

हल

वर्ष	**(%)**			
	हिन्दू	**सिक्ख**	**मुसलमान**	**कुल**
1989	30	45	25	100

1990	35	55	10	100
1991	25	55	20	100

उपर्युक्त चित्र से यह प्रमाण सामने आता है कि प्रतिशत दण्ड चित्र वास्तव में एक अच्छी प्रक्रिया है। तथ्यों के अंशों को प्रतिशत में व्यक्त करने के कारण इससे तुलना में बड़ी सरलता होती है। ये चित्र सापेक्ष स्थिति को प्रकट करते हैं।

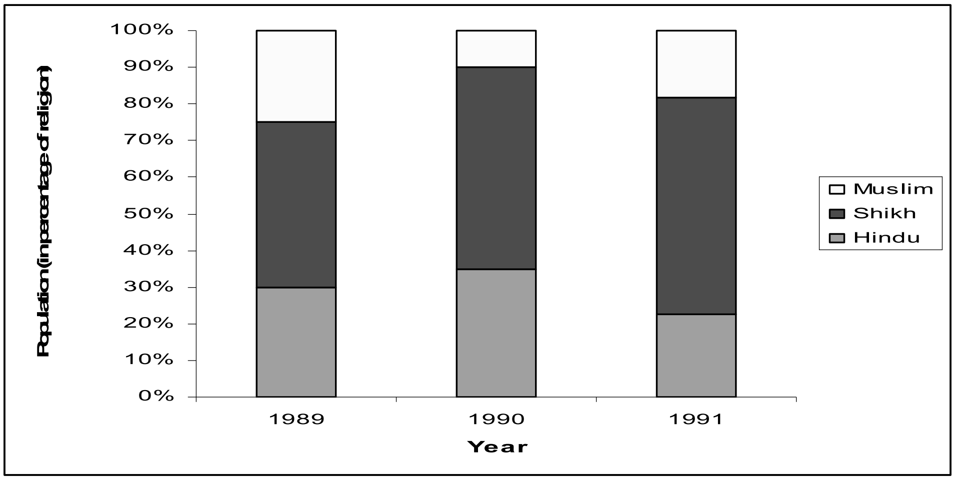

द्विदिशा-दण्ड चित्र (Bi-axial Bar Chart)

द्विदिशा दण्ड चित्र का प्रयोग अधिक या न्यूनता को दिखाने के लिए होता है जैसे कुल लाभ या हानि, आयात या निर्यात आदि। यह दण्ड घनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों मूल्यों में दिखाये जाते हैं। घनात्मक मूल्यों को आधार रेखा के ऊपर की ओर तथा ऋणात्मक मूल्यों को आधार रेखा के नीचे प्रदर्शित करते हैं।

उदाहरण

निम्न तथ्य किसी प्राइवेट औद्योगिक कम्पनी के विक्रय और कुल लाभ को प्रदर्शित करता हैः

वर्ष	विक्रय	कुल लाभ
2010-11	14%	49%
2011-12	10%	-25%
2012-13	13%	-1%

द्विदिशा दण्ड चित्र प्रदर्शित करो?

हलः

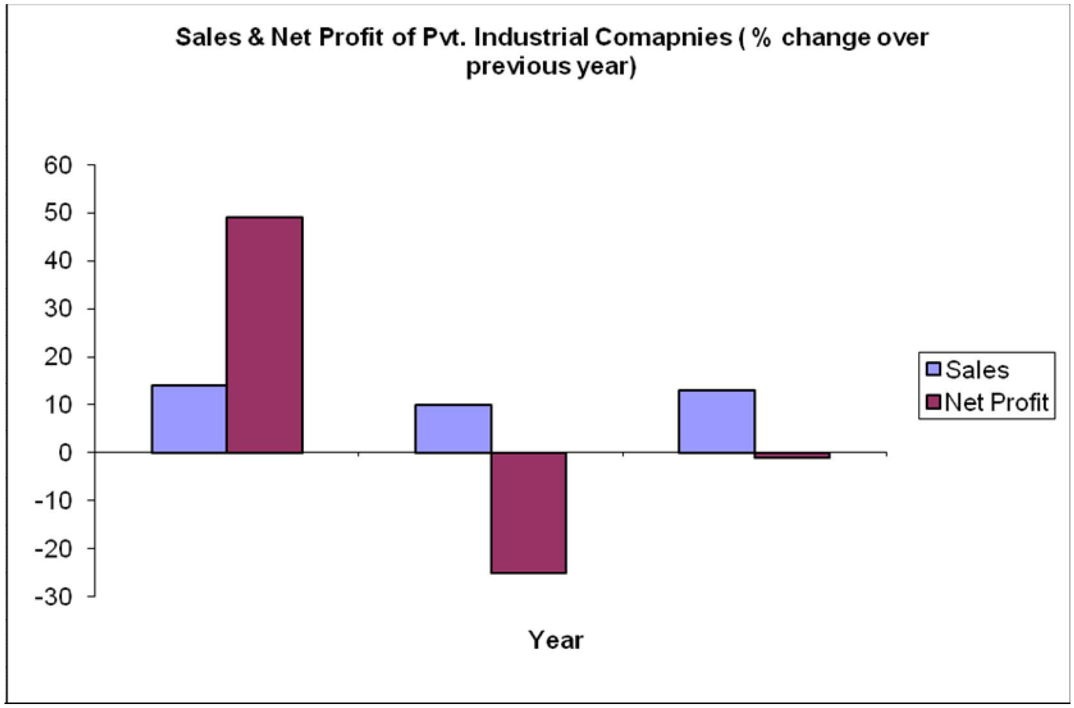

द्विविमा या दो विस्तार वाले चित्र (Two- Dimensional Chart)

यह वृत्त, वर्ग और आयत के रूप में होते है। इसमें लम्बाई और चैड़ाई दोनों मूल्यों का चित्रण किया जाता हैं। इन चित्रों को क्षेत्रफल चित्र भी कहते है क्योंकि क्षेत्रफल पदों के मूल्य के अनुपात में होते हैं। सामान्यतः यह तीन प्रकार के होते है:

1. वृत्त या पाई चित्र (Pie Chart)

यह सरलतम दो विमा चित्र है। प्रत्येक वृत्त को कई भागों में उनके सम्पूर्ण घटकों के अनुसार विभाजित किया जाता है। पूर्ण वृत्त विभिन्न घटकों के पूर्णता को प्रदर्शित करता है। इस अन्तर्विभक्त वृत्त को पाई चित्र भी कहते हैं।

वृत्त का क्षेत्रफल अर्द्धव्यास के वर्गमूल के प्रत्यक्ष अनुपातिक होता है क्योंकि अध्ययन में किसी वृत्त की त्रिज्या चित्र के वर्गमूल के अनुपात में होती है।

वर्ग (Square)

जब चित्र में प्रदर्शित किये जाने वाले आकड़ों में परस्पर बहुत अधिक अन्तर होता है तो उसे छड़ चित्रों द्वारा स्पष्ट प्रदर्शित नहीं किया जा सकता है। इन परिस्थितियों में वर्ग, वृत्त और आयत का उपयोग करते हैं। वर्ग-चित्र आयत दण्डों की तुलना में अधिक अच्छा परिणाम देते हैं, जब दो तथ्यों में अन्तर अधिक होता है। वर्ग चित्र में लम्बाई अथवा चैड़ाई का अधिक महत्व नहीं होता है इसमें

क्षेत्रफल को महत्व दिया जाता है। वर्ग चित्र बनाने में सबसे पहले संख्याओं का वर्गमूल निकाला जाता है फिर उन वर्गमूलों का अनुपात निकालते हैं। यह अनुपात ही वर्ग की भुजा की लम्बाई होती है। चित्र के साथ माप भी लगाते हैं।

आयत चित्र (Rectangular Chart)

सांख्यिकीय तथ्यों की गणना में दण्ड चित्रों का प्रयोग केवल दण्ड की लम्बाई की गणना के लिए होता है उसकी चैड़ाई के लिए नहीं, परन्तु आयत चित्र में लम्बाई और चैड़ाई दोनों को आधार के रूप में उपयोग में लाया जाता है। इस प्रकार के चित्रों का प्रयोग प्रतिशत परिवर्तन को दर्शाने के लिए किया जाता है।

त्रिविमा चित्र या परिमा चित्र (Three-Dimensional Chart)

यह घन, बेलनाकार तथा गोले आदि के रूप में होते हैं। इन चित्रों का प्रयोग तब होता है जब तुलना करने वाले पदों में एक बहुत छोटा और दूसरा पद बहुत बड़ा होता हो कि वर्गमूल लेने पर भी दोनों में अन्तर बहुत ज्यादा हो तो ऐसी संख्या को त्रिविमा चित्रों द्वारा प्रदर्शित करते हैं। इन चित्रों में लम्बाई, चैड़ाई तथा गहराई तीनों की माप ली जाती है। इन चित्रों में तथ्यों या आँकड़ों की तुलना क्षेत्रफल के आधार पर न करके आयतन के आधार पर की जाती है। इन परिमा चित्रों में अन्य की अपेक्षा घन की रचना सरल है। परन्तु सांख्यिकीय रूप में प्रस्तुतीकरण के लिए यह अत्यधिक उपयोगी नहीं है क्योंकि इनके निर्माण में अत्यधिक कठिनाई होती है और इन चित्रों की दृष्टात्मक तुलना में अत्यधिक कमियाँ हैं । व्यवहारिक रूप में इन चित्रों का बनाना अत्यधिक कठिन है अतः सांख्यिकी कार्यों के लिए इस विधि के प्रयोग की सलाह नहीं दी जाती है।

उदाहरण

वर्ष 1995 में सामाजिक अव्यवस्था की संख्या सारिणी में दी हैं। इन तथ्यों को घन चित्र के रूप में प्रदर्शित करो।

क्षेत्र	**जम्मू कश्मीर**	**दिल्ली**	**उत्तर प्रदेश**	**भारत**
अव्यवस्था की संख्या	80	9	26	1521

हल

घन की भुजाएं घनमूलों के अनुपात में होती हैं जैसे

$$\sqrt[3]{80} : \sqrt[3]{9} : \sqrt[3]{26} : \sqrt[3]{1528}$$

$$= 4.31 : 2.08 : 2.96 : 11.5$$

पैमाना: $1cm^3$ = 9 अव्यवस्थाएं

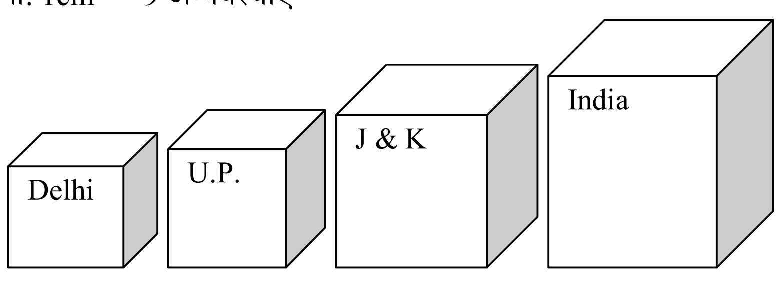

21.4 चित्रलेख (Pictograph)

आजकल (चित्रलेख) चित्रों द्वारा सांख्यिकीय अंकों को प्रदर्शित करने की यह सांख्यिकीय विधि सरकारी संस्था और निजी संस्थाओं में बहुत लोकप्रिय है। इस विधि में तुलना चित्रों के आधार अथवा संख्या द्वारा प्रकट की जाती है। यह विधि अत्यधिक प्रभावशाली है इसमें चित्रों का प्रभाव शीघ्र और स्थायी होता है। इस विधि द्वारा तथ्यों को प्रदर्शित करने पर चित्र अधिक रोचक और आकर्षक लगते हैं।

मानचित्र (Map)

मानचित्र विधि का प्रयोग भौगोलिक तथ्यों के लिए अत्यधिक उपयोगी है, ऐसा विभिन्न भागों में वर्षा, तापमान, उपज, जनसंख्या का घनत्व आदि का प्रदर्शन इस मानचित्र में भिन्न रंग चिन्हों, बिन्दुओं आदि से करते हैं। इसके अत्यधिक उदाहरण भूगोल की पुस्तकों में पाये जाते हैं।

पाई चित्र (Pie Chart)

पाई चित्र वृत्त को कई भागों में उनके वर्ग के आवृत्ति वितरण के अनुसार बाँटता है। हर एक क्षेत्र का क्षेत्रफल उस वर्ग की सापेक्ष आवृत्ति के अनुपात को प्रदर्शित करता है। परन्तु हम जानते हैं कि ज्यामिती में किसी भाग का क्षेत्र उसके वृत्त के केन्द्र से बने कोण के अनुपातिक होता है। इसलिए हम वृत्त के केन्द्र से सापेक्ष आवृत्ति के अनुपात में कोण बनाते हैं।

हम जानते हैं कि वृत्त के केन्द्र पर कोण 3600 होता है, इसी के अनुसार हम सम्पूर्ण को 3600 मानकर उसके विभागों के लिए विभिन्न अंशों से कोणों की गणना करते हैं।

पाई चित्र और अन्तर्विभक्त दण्ड चित्र के सापेक्ष लाभ

पाई चित्र और अन्तविर्भिक्त दण्ड चित्र एक ही सिद्धान्त पर आधारित है इसके उपरान्त भी इनके मध्य कुछ भिन्नता जो कि निम्नलिखित हैं:

1. दण्ड चित्र को बनाना सरल है परन्तु पाई चित्र के निर्माण के लिए किसी कुशल व्यक्ति की आवश्यकता होती है।
2. दण्ड चित्र तथ्यों के मध्य अत्यधिक अन्तर होने पर उनका तुलनात्मक प्रदर्शन करने में असफल है परन्तु पाई चित्र इन्हीं परिस्थितियों के लिए बनाए जाते हैं।
3. पाई चित्रों से तथ्यों के तुलनात्मक प्रदर्शन तथा अन्तः सम्बन्ध को अन्तर्विभिक्त दण्ड चित्रों की अपेक्षा अधिक अच्छे ढंग से प्रदर्शित करता है।

उदाहरण-1

निम्न तालिका में चतुर्थ पंचवर्षीय योजना में होने वाले व्यय को दिखाया गया हैः

मद	कृषि	उद्योग एवं खनिज	सिंचाई और बिजली	संचार	विविध
रूपये(करोड़में)	6000	4000	2500	4500	3000

हल

कुल व्यय = रु. (6000+4000+2500+4500+3000) करोड़

= रु 20,000 करोड़

कोणों के अंश की गणना

मद	रूपये(करोड़में)	कोण
कृषि	6000	$\{600/20000*360)^0=108^0$
उद्योग एवं खनिज	4000	$\{4000/20000*360\}^0=72^0$
सिंचाई और बिजली		
संचार	2500	$\{2500/20000*360\}^0=45^0$
विविध	4500	$\{4500/20000*360\}^0=81^0$
	3000	$\{3000/2000*360\}^0=54^0$
Total	**20000**	**360^0**

पाई चित्र को नीचे प्रदर्शित किया गया है:

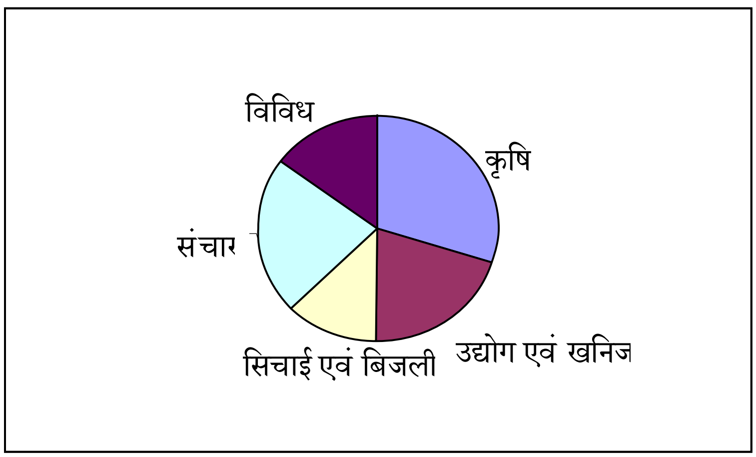

निम्न तालिका में परिवार में होने वाले व्यय दिये गये हैं पाई चित्र बनाइये?
(प्रतिशत में)

भोजन	कपड़ा	किराया	शिक्षा	अन्य	दवा
40	20	10	10	15	5

हल

कोणों के अंश की गणना

मद	**व्यय (प्रतिशत में)**	**कोण**
भोजन	40	$\frac{40}{100} \text{x} 360 = 144^{\circ}$
कपड़ा	20	$\frac{20}{100} \text{x} 360 = 72^{\circ}$
किराया	10	$\frac{10}{100} \text{x} 360 = 36^{\circ}$
शिक्षा	10	$\frac{10}{100} \text{x} 360 = 36^{\circ}$
दवा	5	$\frac{15}{100} \text{x} 360 = 54^{\circ}$
अन्य	15	$\frac{5}{100} \text{x} 360 = 18^{\circ}$

पाई चित्र निम्न है:

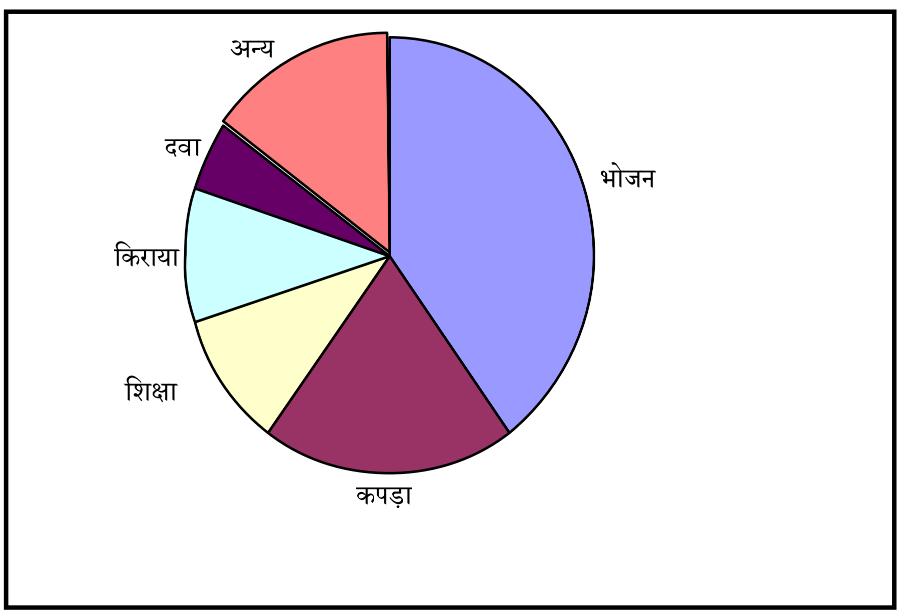

उदाहरण-2

समय श्रेणी ग्राफ (Time Series Graph)

समय श्रेणी ग्राफ में दो चर उपस्थित होते हैं आश्रित चर (dependent variable) और स्वतन्त्र चर (independent variable)। समय श्रेणी तथ्यों में समय सदैव स्वतन्त्र चर होता और इसे क्षैतिज या X - अक्ष पर मापते हैं। जिसको भुजाक्ष कहते हैं, और दूसरे चर को जो आश्रित होता है उसे Y- अक्ष या उदग्र पर मापते हैं जिसको कोटि अक्ष कहते हैं।

रचना

क्षैतिज और उग्र अक्ष एक दूसरे को लम्बवत् काटते हैं और इस कटान बिन्दु मूल-बिन्दु या शून्य बिन्दु को कहते हैं। यहाँ पर चार चरण हैं पहले चरण में x और y दोनों धनात्मक राशियाँ होती हैं, दूसरे चरण में x ऋणात्मक और y धनात्मक होती हैं। इसी प्रकार आगे के चरणों में तीसरे चरण में दोनों ऋणात्मक होती हैं चतुर्थ चरण में x धनात्मक और y ऋणात्मक होती हैं।

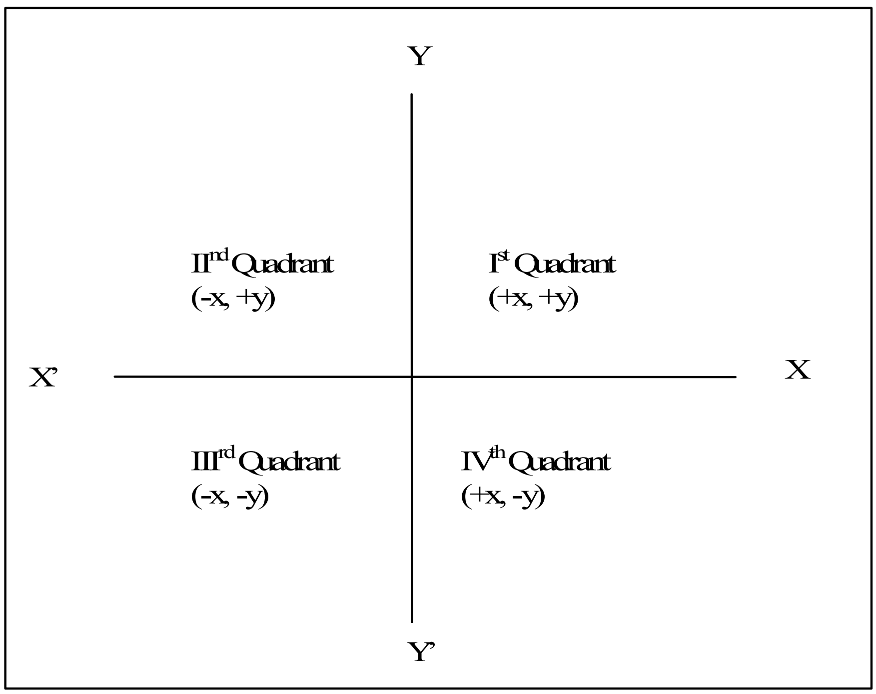

एक चर वाला बिन्दु रेखीय चित्र

जब एक चर ग.अक्ष पर समय की माप और ल.अक्ष पर चरों के मूल्यों को प्रदर्शित करे और विभिन्न बिन्दुओं को प्रांकित करे और जो उन बिन्दुओं को एक सीधी रेखा से जोड़ते हैं। रेखा में होने वाले उतार-चढ़ाव या उच्चावचन चर में होने वाले बदलाव को दिखाता है और आधार-रेखा से होने वाली दूरी प्रांकित करने पर यह ग्राफ के विस्तार को दिखाती है।

दो या अधिक चरों का बिन्दु रेखीय प्रदर्शन

यदि माप की इकाईयाँ सजातीय हों या विजातीय हम उसे समान ग्राफ में दो या अधिक चरों द्वारा प्रदर्शित करते हैं। यह तुलनात्मक रूप में सुविधाजनक होता है। यदि चर संख्या में बड़े हैं और उन सभी को समान ग्राफ में प्रदर्शित किया गया तो चरों के व्यवहार को समझने में कठिनाई होती है क्योंकि विभिन्न रेखाएं एक-दूसरे को काटती हं ै जो ग्राफ के बने चित्र को समझने में भ्रमित करती

है। अतः इस असुविधा से बचने के लिए हमें एक ग्राफ पेपर पर पाँच से अधिक चरों को प्रदर्शित नहीं करना चाहिए। और यदि माप की इकाई समान न हो तो एक ग्राफ पर दो चरों को ही प्रदर्शित करना चाहिए। अतः इसके लिए हम दो पैमाने अलग-अलग कोटि अक्ष पर लेते हैं एक बायें और दूसरा दायें कोटि अक्ष पर लेते हैं। अतः निम्न उदाहरण के द्वारा यह अधिक स्पष्ट हैः

उदाहरण

निम्न तथ्यों के लिए उचित ग्राफ बनाओ?

Year	1920	1921	1922	1923	1924	1925	1926	1927	1928	1929
Quantity	400	450	560	620	580	460	500	540	530	570
Value imported	220	235	385	420	420	380	360	400	290	330

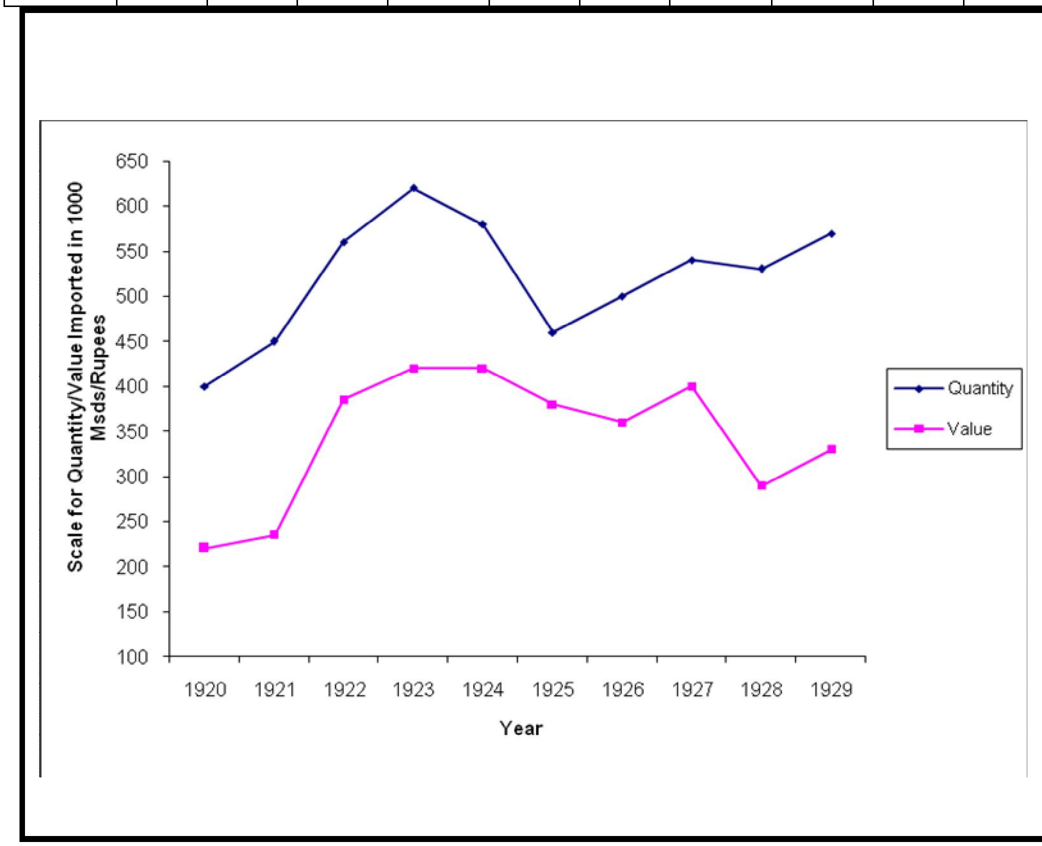

Scale

1cm = 20,000 mds (for Quantity)

1 cm = 20,000 Rs. (for value)

आवृत्ति आयत चित्र

आवृत्ति वितरण को प्रदर्शित करने के लिए कालिक चित्र एक सामान्य विधि है यदि वर्गान्तर या आवृत्ति वितरण अपवर्जी नहीं है तो पहले हम उसे अपवर्जी वितरण में परिवर्तित करते है उसके

पश्चात उसे खैतिज आधार रेखा पर चिन्हित करते है । आवृत्ति आयत चित्र में प्रत्येक वर्ग के लिए एक आयत बनता है। इस प्रकार जितने वर्ग होते हैं उतने आयत एक-दूसरे से सटे-सटे बनाये जाते हैं। आकार को भुजाक्ष पर तथा आवृत्ति को कोटि अक्ष पर प्रदर्शित करते हैं। प्रत्येक आयत का क्षेत्रफल आवृत्ति के अनुपात में होता है। यदि वर्ग-अन्तराल बराबर नहीं होते हैं तो आयत का क्षेत्रफल या ऊँचाई उसके वर्ग की चैड़ाई की आवृत्ति के अनुपात में होती है। इस प्रकार के सभी आयत चित्र आवृत्ति आयत चित्र होते हैं।

आवृत्ति बहुभुज

आवृत्ति बहुभुज का निर्माण असमूहित वितरण के लिए होता है। आवृत्ति बहुभुज के निर्माण के लिए प्रत्येक वर्गान्तर पर बने हुए आयत की ऊपरी भुजा के मध्य बिन्दुओं को सरल रेखाओं द्वारा मिलाते हैं इसके बाद वक्र के दोनों छोरों को भुजाक्ष के दोनों किनारों से मिलाते हैं। यदि वर्ग-अन्तराल के मध्य दूरी छोटी होती है तो बहुभुज एक सरल वक्र होता है। बहुभुज को देखने से स्पष्ट होता है कि जितना क्षेत्रफल आवृत्ति चित्र का है लगभग उतना ही आवृत्ति बहुभुज घेरता है।

उदाहरण

-10 छात्रों के अंकों का विवरण निम्नलिखित है ,इसे चित्र द्वारा प्रदर्शित कीजिए|

Marks	No. Of students
5-10	6
10-15	7
15-20	15
20-25	10

हल:

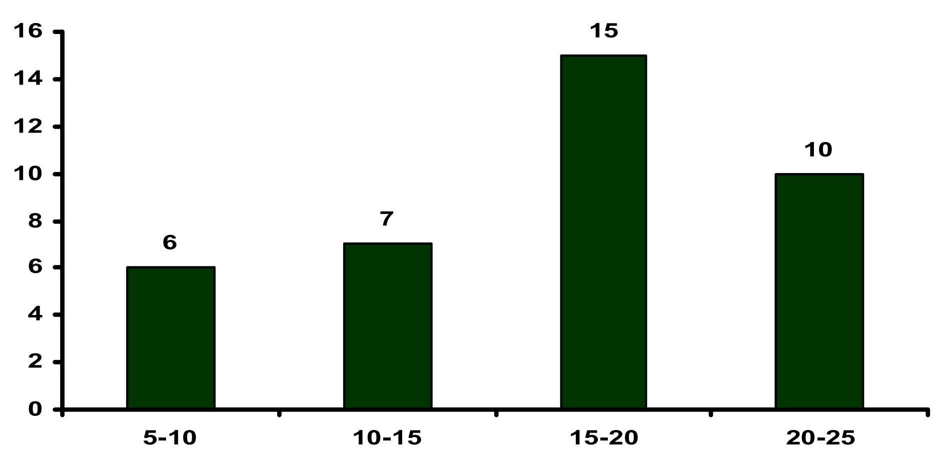

चित्र द्वारा प्रदर्शित करोः

जेब खर्च	**छात्रों की संख्या**
0-5	10
5-10	16
10-15	30
15-20	42
20-25	50
25-30	30
30-35	16
35-40	12

हल :

जेब खर्च	**वर्ग चिन्ह**	**छात्रों की संख्या**
0-5	2-5	10
5-10	7-5	16
10-15	12-5	30
15-20	17-5	42
20-25	22-5	50
25-30	27-5	30
30-35	32-5	16
35-40	37-5	12
40-45	42-5	0

यहाँ वर्ग 0-5 वर्ग चिन्ह 2.5 और आवृत्ति 0 है।

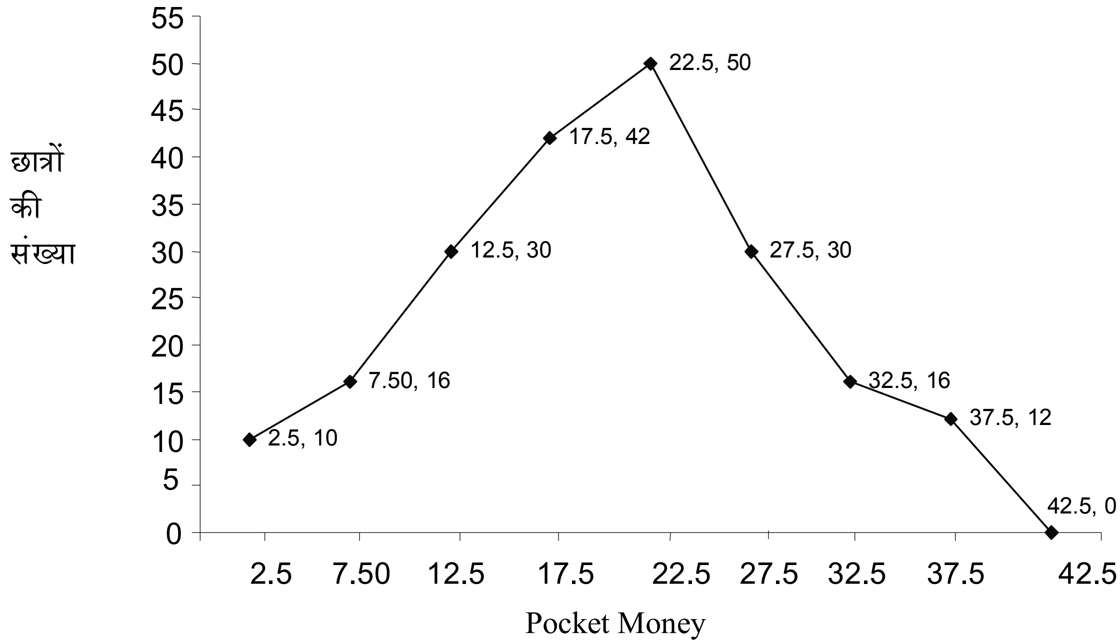

टिप्पणीः

जब आवृत्ति आयत चित्र और आवृत्ति बहुभुज चित्र को समान ग्राफ पर बनाते हैं तो पहले आवृत्ति आयत चित्र और दिये गये तथ्यों के मध्य बिन्दु को आयत के ऊपरी हिस्से पर मध्य में बिन्दु द्वारा प्रदर्शित कर उसे सीधी रेखा से मिला देते हैं।

उदाहरण

किसी शहर के जीवन स्तर को साप्ताहिक अवलोकन के पश्चात दिया गया है।

Cost of Living Index	**Number of Weeks**
140-150	5
150-160	10
160-170	20
170-180	9
180-190	6
190-200	2

आवृत्ति आयत चित्र और आवृत्ति बहुभुज को एक ही पैमाने पर बनाओ?

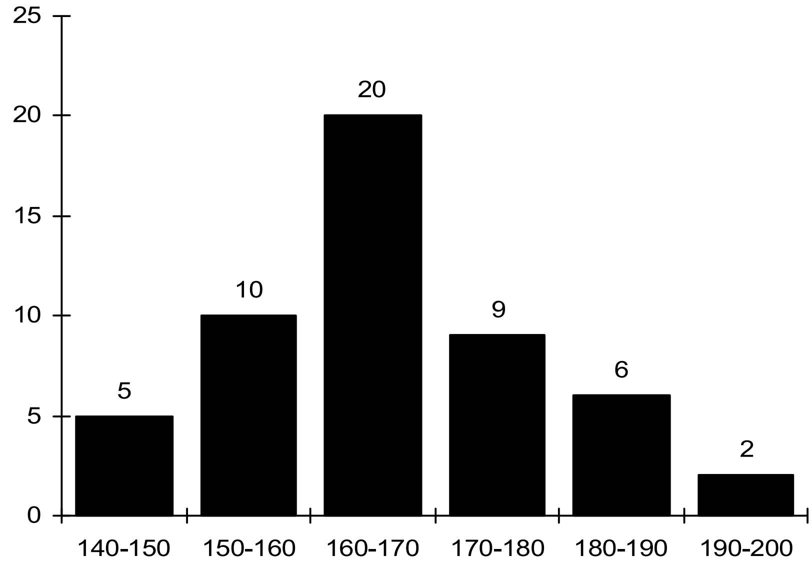

21.5 आवृत्ति वक्र (Frequency Curve)

आवृत्ति वक्र से पहले आवृत्ति आयत चित्र और आवृत्ति बहुभुज बनाना जरूरी है। यदि आवृत्ति आयत चित्र सरल और सहज रूप से बना वक्र आयत चित्र और बहुभुज में प्रत्येक वर्गान्तर के मध्य बिन्दुओं और उसके आस-पास से होकर जाता है। यह वक्र लगभग घण्टाकार होता है। आवृत्ति बहुभुज और वक्र दोनों की सहायता से अविछिन्न श्रेणी में भूयिष्ठिक का निर्धारण किया जाता है। दोनों में शिखर बिन्दु से भुजाक्ष पर लम्ब खींचा जाता है। जिस बिन्दु पर यह लम्ब भुजाक्ष को स्पर्श करता है वही भूयिष्ठिक मूल्य होता है।

- **आवृत्ति वक्र के प्रकार (Types of Frequency Curve)**

आवृत्ति वितरण के बिन्दुरेखीय प्रर्दशन में सामान्यतः कुछ आवृत्ति वक्र दिये गये हैं जो निम्न हैं:

1. समरूप वक्र अथवा घण्टाकार वक्र
2. असमरूप वक्र अथवा विषम वक्र
3. श्र.आकार के वक्र अथवा विपरीत श्र.आकार वक्र
4. न्.आकार के वक्र

समरूप अथवा घण्टाकार वक्र (Symmetrical / Bell Shaped Curve)

यदि वक्र उदग्र रेखा से सममित (समान) आकार का होता है तो उसे सममित वक्र कहते हैं। यह पूर्णरूप से घण्टाकार होता है। आवृत्ति का वितरण इस प्रकार होता है कि धीरे-धीरे शून्य से बढ़ती हुई आवृत्ति एक अधिकतम ऊँचाई पर पहुँच जाती है और फिर वहाँ उसी गति से धीरे-धीरे कम होती हुई समाप्त हो जाती है।

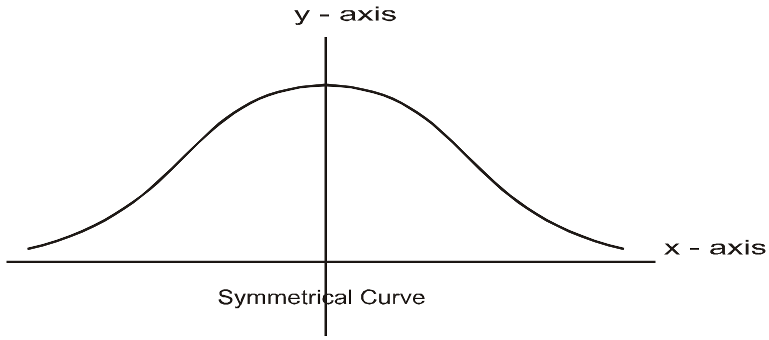

असमरूप वक्र अथवा विषम वक्र (Unsymmetrical Curve)

यदि वक्र में कोई सममिती या समानता नहीं होती है तो उसे विषम वक्र कहते हैं। इस वक्र में वर्ग आवृत्ति अधिकतम से एक तरफ तेजी से घटती है। इस वक्र में सिरा हमेशा दूसरों से बड़ा होता है। यह दो प्रकार का होता है यदि लम्बा सिरा X-axis के धनात्मक तरफ होता है तो उसे धनात्मक विषम (Positively skewed) वक्र कहते है और यदि लम्बा सिरा X-axis के ऋणात्मक तरफ होता है तो उसे ऋणात्मक विषम वक्र(Negatively skewed) कहते हैं।

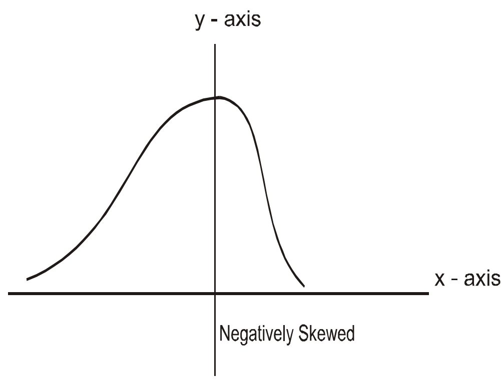

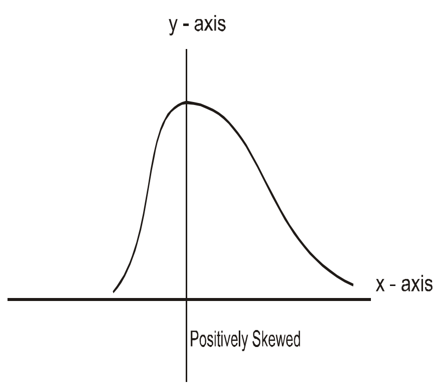

J आकार-वक्र या विपरीत J आकार-वक्र

जब वर्ग आवृत्ति एक सिरे पर आरम्भ से अन्त तक अधिकतम होती है तो वह J-आकार वक्र होता है यह X- अक्ष के प्रत्येक तरफ हो सकता है।

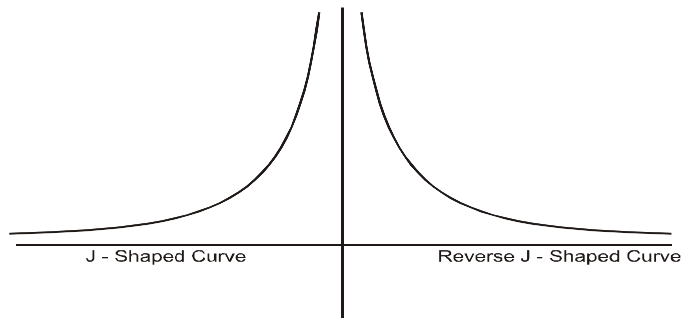

U-आकार वक्र

जब अधिकतम आवृत्ति श्रेणी के आरम्भ व अन्त में होती है। मध्य में कम आवृत्तियाँ होती हैं। तब U के आकार का वक्र बनता है।

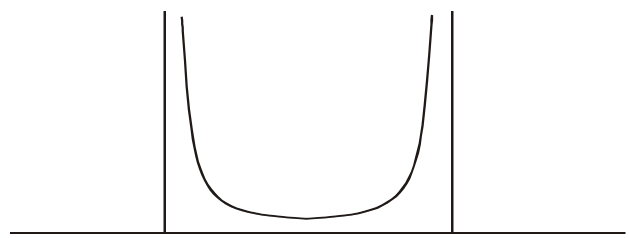

U - Shaped Curve

ओजाइव वक्र या संचयी आवृत्ति वक्र

यदि आवृत्ति वक्र की रचना न करके वर्ग की ऊपरी सीमाओं को भुजाक्ष पर अंकित करके संचयी आवृत्ति को कोटि -अक्ष पर प्रांकित करते हैं और उन्हें सरल रेखाओं से मिला देते हैं। इस प्रकार बने वक्र को ओजाइव वक्र कहते हैं। यदि वक्र की आवृत्ति बढ़ती है और वह हमेशा ऊपर की ओर बढ़ता है तो उसे Less than Ogive curve कहते हैं। और यदि वक्र की आवृत्ति घटती है और वह ऊपर से नीचे की ओर आता है तो उसे More than Ogive curve कहते हैं। संचयी आवृत्ति वक्र की सहायता से हम मध्यांक या माध्यिका एवं चतुर्थक आदि आसानी से निकाल लेते हैं।

उदाहरण

निम्न तथ्यों के लिए ओजाइव वक्र बनाओं

Upper class	**frequency**	**Cumulative frequency**
0-4	4	4
4-8	6	10
8-12	10	20
12-16	8	28
16-20	4	32

हल :

बिन्दुओं को प्रांकित करेगें (4, 4), (8, 10), (12 20), (16, 28) और (20, 32) उसके बाद उसे सहज रूप से सरल वक्र के द्वारा जोड़ेंगे जिससे निम्न ओजाइव वक्र बनेगा।

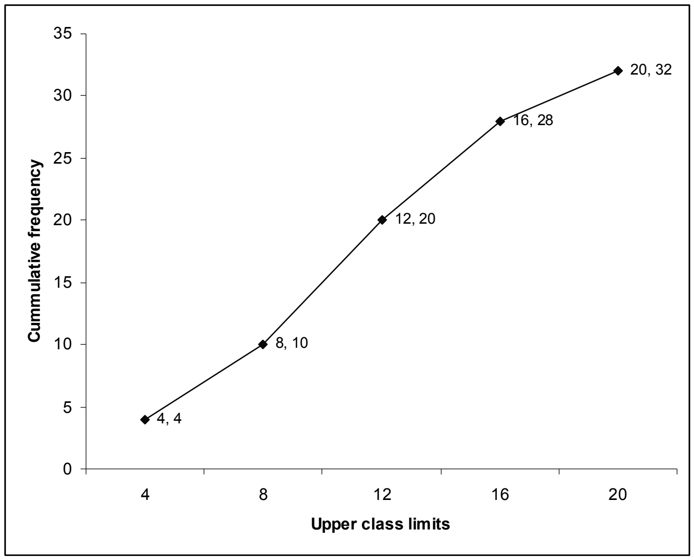

21.6 सारांश

सांख्यिकीय समंकों का चित्रात्मक और बिन्दुरेखीय प्रदर्शन निश्चित रूप से एक साधारण व्यक्ति के सरल और अच्छे ढंग से सांख्यिकीय व्याख्या को समझने के लिए आवश्यक औजार है। तथ्यों का वर्गीकरण और सारिणीयन कर देने से तथ्यों के ढेर को व्यवस्थित व क्रमबद्ध किया जाता है परन्तु इसका स्वरूप शुष्क, भ्रमित और बिखरा हुआ है। यदि तथ्य संख्या व आकार में बड़े हां ◌े तो इनके अध्ययन के लिए अधिक समय और मस्तिष्क पर अत्यधिक जोर देने की आवश्यकता होती है। तथ्यों का चित्रों तथा ग्राफ के रूप में प्रदर्शन से मस्तिष्क पर अत्यधिक स्थायी प्रभाव पड़ता है।

21.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. समंकों के चित्रमय और बिन्दुरेखीय प्रदर्शन के लाभ क्या हैं ?
2. आवृत्ति चित्र क्या हैं? आप इसका निर्माण कैसे करते हैं ?
3. ओजाइव वक्र क्या हैं? समंको के पुनः वर्गीकरण में इसका उपयोग कैसे करते हैं ?
4. चित्रों और ग्राफों के द्वारा सांख्यिकीय समंक के प्रर्दशन की विधियों का वर्णन कीजिए।

21.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Sanchcti D. C. & Kapoor U. K., Statistics (Theory, Methods & Application) Sultan Chand & Sons, 1995.

- CONOVER, W. J., *Practical Nonparametric Statistics,* 2nd ed., New York, NY, John Wirey & Sons, 1980.
- GIBBONS, J. D., *Nonparametric Statistical Inference,* New York, NY, Marcel Dekker, 1985. LEHMANN, E. L., *Nonparametrics: Statistical Methods Based on Ranks,* San Francisco, CA, Holden-Day, 1975.
- Singh, A.N. Statistics, 2007.
- HUFF, D., *How to Lie with Statistics,* New York, NY, W. W. Norton & Co., 1954.

इकाई - 22

सांख्यिकी माध्य: माध्य, माध्यिका एवं बहुलक

इकाई की रूपरेखा :

22.0 उद्देश्य
22.1 प्रस्तावना
22.2 सांख्यिकी माध्य (Statistical Average)
22.3 माध्यज्ञात करने की विधियाँ
22.4 भारित माध्य (माध्यिका)
22.5 बहुलक को ज्ञात करने की विधियाँ
22.6 सारांश
22.7 अभ्यास प्रश्न
22.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

22.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप:

- सांख्यिकी माध्य की अवधारणा को समझ सकेंगे।
- सांख्यिकी माध्य के उद्देश्य एवं कार्य को जान सकेंगे।
- माध्य, माध्यिका एवं बहुलक निकालने के विधियों को जान सकेंगे।

22.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में सांख्यिकी माध्य की अवधारणा, उद्देश्य एवं कार्य, माध्य, माध्यिका एवं बहुलक निकालने की विधि के बारे में बताया गया है। सांख्यिकी विधियों यथा माध्य, माध्यिका तथा बहुलन के द्वारा आंकडों को विश्वसनीय तथा प्रमाणिक बनाने की विश्वसनीय तथा प्रमाणिक बनाने की विधियों के बारे में बताया गया है। सामाजिक विज्ञान में सांख्यिकी का प्रयोग आंकडों को व्यवस्थित, तर्कसंगत तथा विश्वसनीय बनाने के लिये किया जाता है।

22.2 सांख्यिकीय माध्य

सांख्यिकीय माध्य समग्र के विभिन्न पदों की व्यक्तिगत विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए एक ऐसी प्रवृत्ति को इंगित करता है जो समग्र का प्रतिनिधित्व करती हो। इसे केन्द्रीय प्रवृत्ति की माप भी कहा जाता है क्योंकि यह समंकमाला में एक ऐसे बिन्दु को बताता है जिसके चारों ओर समंकमाला की अन्य इकाइयों के केन्द्रित होने की प्रवृत्ति पायी जाती है। सिम्पसन एवं काफ्का के अनुसार, ''केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप एक ऐसा प्रतिरूपी मूल्य है जिसकी ओर अन्य संस्थाएँ संकेन्द्रित होती हैं। इस प्रकार माध्य एक ऐसा सरल व संक्षिप्त मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के

लिए किया जाता है। क्लार्क और शकाडे के मतानुसार, ''माध्य सम्पूर्ण संख्याओं का विवरण प्रस्तुत करने के लिए एकमात्र संख्या प्राप्त करने का प्रयास है।''

क्राक्सटन व काउडेन के अनुसार, ''माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत स्थिर एक ऐसा मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है। चँकि एक माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत ही कहीं होता है, इसलिए कभी-कभी यह केन्द्रीय मूल्य का माप कहा जाता है।'' माध्य को केन्द्रीय मूल्य या प्रवृत्ति का माप कहा जाने का औचित्य स्पर, केलाग एवं स्मिथ के इस कथन से प्रकट होता है: ''माध्य को कभी-कभी 'केन्द्रीय प्रवृत्ति का माप' इसलिए कहा जाता है क्योंकि व्यक्तिगत चर-मूल्य अधिकतर उसके चारों ओर जमा होते हैं।'' ध्यान रहे कि माध्य को उसी इकाई में व्यक्त किया जाता है जिसमें मूल समंक संग्रहीत किये गये हैं। सख्यिकी माध्य को प्रतिरूपी मूल्य सारांश-अंक भी कहते हैं।

सांख्यिकी विश्लेषण में माध्यों की महत्ता फिशर **(Fischer)** ने निम्न शब्दों में स्पष्ट की है:

''संख्यात्मक तथ्यों के विशाल समूह को पूर्णरूपेण समझने की मस्तिष्क की अन्तर्निहित अयोग्यता, हमें अपेक्षाकृत थोड़े ऐसे स्थिर माप उपलब्ध करने को बाध्य करती है जो समंकों की पर्याप्त रूप से व्याख्या कर सके।'' ऐसे स्थिर-मापों में से सांख्यिकीय माध्य एक महत्वपूर्ण माप है।

सांख्यिकीय माध्य के उद्देश्य एवं कार्य

- **सामग्री का सरल एवं संक्षिप्त चित्र प्रस्तुत करना**

माध्य एकत्रित सामग्री का एक संक्षिप्त चित्र प्रस्तुत करता है। एक साधारण व्यक्ति कुछ अंकों को शीघ्रता से व सरलतापूर्वक समझ सकता है जबकि उसके लिए अव्यवस्थित आँकड़ों के ढेर को समझना अत्यन्त कठिन है।

बाउले के मतानुसार, ''माध्यों के प्रयोग से जटिल समूहों तथा विशाल संख्याओं को कुछ महत्वपूर्ण शब्दों या संख्याओं में प्रस्तुत किया जाता है।'' किसी प्रदेश के निवासियों में से प्रत्येक की आय को अलग-अलग समझना व स्मरण रखना असम्भव है किन्तु उनकी औसत प्रति व्यक्ति आय आसानी से समझी व याद रखी जा सकती है। मोरोने के शब्दों में, ''माध्य का उद्देश्य व्यक्तिगत मूल्यों के समूह को सरल व संक्षिप्त रूप में प्रतिनिधित्व करना है किससे मस्तिष्क समूह को सरलता व शीघ्रता से समझ सके।''

- **तुलना करने में सुविधा प्रदान करना**

माध्यों की सहायता से दो या अधिक वर्गों की या समूहों की तुलना सरल हो जाती है। उदाहरण के लिए, भारत और जापान के निवासियों की आय की तुलना औसत के रूप में करना सरल व सुविधाजनक होगा।

- **सम्पूर्ण समूह की जानकारी प्रदान करना**

माध्य सम्पूर्ण समूह की जानकारी प्रदान करने में सहायक होते हैं। केवल एक संख्या (माध्य) से ही उस समूह की रचना के बारे में पर्याप्त जानकारी हो सकती है तथा अनेक तथ्यों का पर्याप्त मात्रा में शुद्ध अनुमान लगाया जा सकता है।

- **भावी योजनाओं व क्रियाओं का आधार**

माध्य के रूप में एक ऐसा मूल्य प्राप्त होता है जो भावी योजनाओं और क्रियाओं के लिए आधाररूप कार्य करता है। उदाहरणार्थ, माध्य से प्रकट होता है कि भारतीय की औसत आयु लगभग 52 वर्ष है और संसार के अन्य देशों की इससे बहुत अधिक है। इससे हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यहाँ के जीवन की दशाओं में सुधार की आवश्यकता है।

- **विश्लेषण का आधार**

सांख्यिकीय विश्लेषण माध्यों की सहायता से सम्भव है। विचलन, विषमता, आदि का मापन इसी से सम्भव होती है।

- **गणितीय क्रियाओं का आधार**

जब दो विभिन्न मालाओं के गणितीय सम्बन्ध को प्रकट करना होता है, तो माध्यों की सहायता अनिवार्य हो जाती है। इन्हीं के आधार पर तुलना की सभी अन्य क्रियाएँ सम्भव होती हैं।

- **निर्णय लेने में सहायक**

शोध एवं प्रयोग कार्य में चर के माध्य मूल्य की सहायता से निर्णय लेने में सरलता होती है। उदाहरणार्थ, किसी बस या रेल मार्ग पर औसत रूप से कितने यात्री यात्रा करते हैं। इसी आधार पर रेलों एवं बसों की संख्या बढ़ायी तथा घटायी जा
सकती है।

22.3 माध्य को ज्ञात करने की विधियाँ (Methods of Calculating Mean)

Case-1

व्यक्तिगत श्रेणी :

जब प्रत्येक पदों की आवृत्ति 1 हो या दूसरे शब्दों में आवृत्ति नहीं दी गयी हो तब

उदाहरण-1

व्यक्तियों की मासिक आय नीचे दी गयी है (रुपये में) 450, 350, 650, 400, 430, 700, 400, 750, 520 माध्य की गणना करो।

हल :

(माध्य)

$$\mathrm{Mean}(\bar{\mathrm{x}}) = \frac{\sum_{\mathrm{i}}^{\mathrm{n}} \mathrm{x_i}}{\mathrm{n}}$$

$$Mean(\bar{x}) = \frac{\sum_{i}^{n} x_i}{n}$$

$$= \frac{450 + 350 + 650 + 400 + 430 + 700 + 400 + 750 + 520}{9}$$

$$= \frac{4680}{9} = \text{Rs.}520$$

उदाहरण-2

(i) प्रथम n प्राकृतिक संख्याओं का माध्य ज्ञात करो।

(ii) प्रथम 10 विषम धनात्मक पूर्णांक का माध्य ज्ञात करो।

हल :

हम जानते हैं कि पितेज श्दश् दंजनतंस दनउइमत है 1, 2, 3, ...,n इसलिए;

$$\text{Mean} = \frac{1+2+3+....+n}{n} = \frac{\frac{n(n+1)}{2}}{n} = \frac{(n+1)}{2}$$

नोट :

(i) (a) n प्राकृतिक संख्या का योग है $= \frac{n(n+1)}{2}$

(b) n प्राकृतिक संख्या के वर्ग का जोड़ है

$$1^2 + 2^2 + ... + n^2 = \frac{n(n+1)(2n+1)}{6}$$

(c) n प्राकृतिक संख्या के घनमूल धन का जोड़ है

$$1^3 + 2^3 + 3^3 + ... + n^3 = \left[\frac{n(n+1)}{2}\right]^2$$

(ii) प्रथम दस विषम पूर्णांक हैं 1, 3, 5, 7, 9, 11, 13, 15, 17, 19

माध्य

$$= \frac{1+3+5+.....+19}{10}$$

$$= \frac{100}{10} = 10$$

Case 2

विछिन्न श्रेणी

प्रत्यक्ष विधि :

उन सभी पदों का माध्य ज्ञात किया जाता है जिनकी आवृत्ति 1 से अधिक है। माना कि i th पद की आवृत्ति f_i है जैसे x तो माध्य;

$$Mean = \frac{\sum_{i=1}^{n} f_i x_i}{\sum_{i=1}^{n} f_i} = \frac{\sum_{i=1}^{n} f_i x_i}{N}; \sum_{i=1}^{n} f_i = N$$

उदाहरण-3

Height(cm)	167	170	172	173	155
f_i	4	3	2	2	1

माध्य ऊँचाई ज्ञात करो।

हल :

Height(cm)	f_i	$f_i \cdot x_i$
167	4	167x4 = 668
170	3	170x3=510
172	2	172x2=344
173	2	173x2=346
155	1	155x1=155
	$\sum f_i = N = 12$	$\sum f_i x_i = 2023$

$$\therefore Mean = \bar{x} = \frac{\sum f_i x_i}{\sum f_i} = \frac{2023}{12} = 168.58 \text{ cm}$$

लघु विधि

जब समंक श्रेणी में पदों की संख्या अधिक हो पद बड़े हो या राशियां दशमलव में हो तब इस विधि का प्रयोग किया जाता है। इसमें दिये हुए तथ्यों में से किसी पद का उचित चुनाव करते हैं, मुख्यतः मध्य पद को लेते हैं इसे कल्पित माध्य A कहते हैं। तब इससे प्रत्येक पद के लिए विचलन ज्ञात करते हैं।

तब माध्य ,

$$\bar{x} = A + \frac{\sum_{i=1}^{n} f_i d_i}{\sum f_i}$$

उदाहरण-4

निम्न तथ्यों से माध्य मजदूरी ज्ञात करो?

Rate(Rs.)	900	950	1000	1100	1260	1440	1500
No, of workers	26	22	18	19	15	3	2

हलः

माना कि कल्पित माध्य A =1100

x_i	f_i	$d_i=(x_i-A)$ $=(x_i-1100)$	f_id_i
900	26	-200	-5200
950	22	-150	-3300
1000	18	-100	-1800
1100	19	0	0
1260	15	160	2400
1440	3	340	1020
1500	2	400	800
	$\Sigma f_i=105$		$\Sigma f_id_i= -6080$

$$\text{Mean} = A + \frac{\sum f_i d_i}{\sum f_i} = 1100 + \left(\frac{-6080}{105}\right) = \text{Rs.}1042.10$$

पद विचलन विधि

दिये गये समंकों में किसी मध्य मूल्य, विशेषकर मध्य वाले को कल्पित माध्य मानकर प्रत्येक माध्य मूल्य का विचलन ज्ञात करते हैं $d_i = (x_i - A)$ इन विचलनों में वर्ग विस्तार से भाग देकर पद-विचलन ज्ञात करते हैं, यथा;

$$d_i^* = \frac{d_i}{h} = \left(\frac{x_i - A}{h}\right)$$;सामान्यतः को 10, 100, 1000 आदि लेते है।

Then, Mean $(\overline{X}) = A + \left(\frac{\sum f_i d_i^*}{\sum f_i}\right).h$

सामान्यतः को 10, 100, 1000 आदि लेते है।
तब

उदाहरण-5

x_i	480	350	650	400	430	700	400	750	520
f_i	10	5	2	2	1	1	4	3	6

हल :
पद विचलन विधि का प्रयोग

x_i	f_i	$d_i^* = \left(\frac{x_i - 500}{10}\right)$	$f_i d_i^*$
480	10	-2	-20
350	5	-15	-75
650	2	+15	+30
400	2	-10	-20
430	1	-7	-7
700	1	+20	+20
400	4	-10	-40
750	3	+25	+75
520	6	+2	+12
	$\sum f_i$=34		$\sum f_i d_i^* = -25$

$$\text{Mean} = A + \left(\frac{\sum f_i d_i^*}{\sum f_i}\right).h = 500 + \left(\frac{-25}{34}\right).10$$

$= 500 - 7.35$

$= 492.65$

Case3

अविछिन्न श्रेणी

अपवर्जी विधि

जब संकलित तथ्य अविछिन्न श्रेणी समूहों के रूप में हां। यह निम्न उदाहरण से स्पष्ट है।

उदाहरण

प्रत्यक्ष और लघु विधियों के द्वारा समान्तर माध्य की गणना करो?

वर्ग	20-30	30-40	40-50	50-60	60-70
आवृत्ति	8	26	30	20	16

हल:

वर्ग	माध्य मूल्य (x_i)	f_i	$f_i x_i$	$d_i = x_i - 45$	$f_i d_i$
20-30	25	8	200	-20	-160
30-40	35	26	910	-10	-260
40-50	45	30	1350	0	0
50-60	55	20	1100	10	200
60-70	65	16	1040	20	320
		$\Sigma f_i = 100$	$\Sigma f_i x_i = 4600$		$\Sigma f_i d_i = 100$

(i) प्रत्यक्ष विधि द्वारा:

$$\text{Mean } (\overline{X}) = \frac{1}{N}\left(\sum_{i=1}^{n} f_i x_i\right) \text{ ; where } N = \Sigma f_i$$

$$= \frac{4600}{100} = 46$$

(ii) लघु विधि द्वारा: $\text{Mean}(\overline{X}) = A + \frac{\sum_{i}^{n} f_i d_i}{\sum f_i}$

$$= 45 + \frac{100}{100} = 46.$$

समावेशी विधि

जब संकलित तथ्य अविछिन्न श्रेणी में न हो वह समावेशी रूप में हो। पहले उनको अपवर्ती रूप में परिवर्तित करते हैं। तब आगे की प्रक्रिया करते हैं।

उदाहरण

107 पेचों के सिरे की व्यास का माप निम्न आवृत्ति सारिणी में दिया है।

व्यास (मि.मी. में)	33-35	36-38	39-41	42-44	45-47
आवृत्ति	17	19	23	21	27

पेंच के सिरे के माध्य की गणना करो?

हल :

सर्वप्रथम यह आवश्यक है कि उपरोक्त सारिणी को अपवर्जी रूप में परिवर्तित करें।

समावेशी रूप व्यास (मि.मी. में)	अपवर्जी रूप व्यास (मि.मी. में)	आवृत्ति (f_i)	(x_i)	$f_i x_i$
33-35	32.5-35.5	17	34	578
36-38	35.5-38.5	19	37	703
39-41	38.5-41.5	23	40	920
42-44	41.5-44.5	21	43	903
45-47	44.5-47.5	27	46	1242
		$\sum f_i=107$		$\sum f_i x_i=4346$

$$\therefore \quad \text{Mean}(\overline{X}) = \frac{\sum f_i x_i}{\sum f_i} = \frac{4346}{107} = 40.61.$$

नोट

(a) यहाँ समान्तर माध्य की गणना की तीन विधियाँ यथा प्रत्यक्ष विधि, लघु विधि और पद विचलन विधि। यह विधियाँ किसी भी प्रकार की श्रेणी पर लागू होती है चाहे असमूहित तथ्य या समूहित तथ्य आदि हो।

(b) पद विचलन विधि के सूत्र में प्रयोग होने वाला वर्ग-विस्तार है चाहे वह समूहित तथ्य हो या असमूहित। इसे प्रश्न की आवश्यकतानुसार 10,100 आदि लेते हैं।

(c) कल्पित माध्य के लिए कोई भी संख्या को ले सकते हैं चाहे व तथ्य (समंकों) में उपस्थित हो या नहीं अन्तिम निष्कर्ष समान आता है। साधारणतः कल्पित माध्य वितरण की केन्द्रीय स्थिति को ध्यान में रखकर ही लेना चाहिए जिससे विचलन कम आये और गणना में सरलता रहे।

विवर्तमुखी वर्ग की स्थिति में माध्य की गणना

विवर्तमुखी वर्ग वे होते हैं जिनके प्रथम वर्ग की निम्न सीमा और अन्तिम वर्ग की ऊपरी सीमा अज्ञात होती है। इस परिस्थिति में समान्तर माध्य ज्ञात नहीं किया जा सकता है जब तक कि इस अज्ञात वर्ग को धारणा के आधार पर निर्धारित न किया जाए। यह निर्धारित धारणा वर्ग अन्तराल के प्रथम वर्ग और अन्तिम वर्ग से पूर्व वर्ग के क्रम पर सामान्यतः निर्भर करती है।

उदाहरण

निम्न सारिणी का माध्य ज्ञात करो?

अंक (प्राप्तांक)	Less than 10	10-20	20-30	30-40	40-50	50 - 60
छात्रों की संख्या	4	6	10	15	8	7

हल :

Marks	No. Of students (f)	मध्य मूल्य x_i	$f_i.x_i$
Less than 10	4	5	20
10-20	6	15	90
20-30	10	25	250
30-40	15	35	525
40-45	8	45	360
50-60	7	55	385

	$\sum f_i = 50$		$\sum f_i.x_i$ =1630

$$\text{Mean}(\overline{X}) = \frac{\sum f_i x_i}{\sum f_i} = \frac{1630}{50} = 32.6.$$

नोट

उपरोक्त सारिणी में वर्ग-अन्तराल में अन्तर एक समान है, अतः इसके अनुसार प्रथम वर्ग की निम्न सीमा के लिए शून्य और अन्तिम वर्ग की ऊपरी सीमा के लिए 60 उचित निर्धारण है।

उदाहरण

पुरुषों और स्त्रियों के सामूहिक समूह में उनकी माध्य उम्र 30 वर्ष है। यदि पुरुषों के समूह में माध्य उम्र 32 वर्ष है और स्त्रियों की उम्र 27 वर्ष है। समूह में पुरुष और स्त्रियों की उम्र का प्रतिशत ज्ञात करो?

हल

माना द1 और द2 क्रमशः पुरुषों और स्त्रियों की संख्या है तथा और क्रमशः पुरुष और स्त्रियों की माध्य उम्र है। अतः इसलिए पुरुष और स्त्रियों की कुल संख्या द त्र द1,द2 है। पुरुष और स्त्रियों का सामूहित माध्य है।

इसलिए $\bar{x} = \frac{n_1\bar{x}_1 + n_2\bar{x}_2}{n_1 + n_2}$

$$30 = \frac{32n_1 + 27n_2}{n_1 + n_2}$$

$$\Rightarrow \quad \frac{n_1}{n_2} = \frac{3}{2}$$

इसलिए, $n_1:n_2 = 3:2$

Therefore, Suppose $n_1 + n_2 = 100$

Therefore Percentage of Male $= \frac{3}{5} x100 = 60\%$

और समूह में स्त्रियों का प्रतिशत

$= \frac{2}{5} x100 = 40\%$

22.4 भारित माध्य

सांख्यिकी माध्य की गणना में, श्रेणी के विभिन्न पदों का सही प्रतिनिधित्व करना अत्यन्त आवश्यक है। श्रेणी के विभिन्न पदों की महत्ता अलग-अलग होती है। अतः महत्व के अनुरूप प्रभाव डालने के उद्देश्य से भारित समान्तर माध्य का प्रयोग किया जाता है। इसे ज्ञात करने के लिए प्रत्येक पद के सापेक्षिक महत्व को ध्यान में रखा जाता है। विभिन्न पदों से सम्बन्धित महत्व को दर्शाने वाले अंक ही भार कहे जाते हैं। भारों के आधार पर निकाला गया माध्य भारित समान्तर माध्य कहलाता है।

यदि w_1, w_2,……,w_n भार द पदों तक है उनके मूल्य क्रमशः अंसनमे ग1एग2ए३३गदए हो तो भारित समान्तर माध्य को निम्न प्रकार व्याख्यित करते हैं :

$$\text{भारित समान्तर माध्य} = \frac{w_1x_1 + w_2x_2 + \ldots\ldots\ldots + w_nx_n}{w_1 + w_2 + \ldots\ldots + w_n}$$

$$= \frac{\sum_{i}^{n} w_1x_1}{\sum_{i=1}^{n} w_i}$$

माध्यिका को ज्ञात करने की विभिन्न विधियाँ

Case1

व्यक्तिगत श्रेणी के लिए माध्यिका

सर्वप्रथम पदों को आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं। उसके पश्चात् सूत्र का प्रयोग करते हैं माना द पदों की कुल संख्या है

(i) यदि द विषम हो, तो माध्यिका

$$Me = \left(\frac{n+1}{2}\right)^{th} \text{ पद}$$

(ii) यदि द सम हो, तो माध्यिका

उदाहरण

क्रिकेट टीम के 9 सदस्यों के रन 35, 37, 15, 91, 50, 45, 0, 05, 88 हैं। मध्यका रन ज्ञात करो।

हल:

सर्वप्रथम तथ्यों को आरोही क्रम में व्यवस्थित करेगें।

0, 05, 15, 35, 37, 45, 50, 88, 91

यहाँ 9 लोगों के रन दिये हैं जो एक विषम संख्या है।

$$\text{इसलिए माध्यिका रन} = \left(\frac{9+1}{2}\right)^{th} \text{observatio n}$$

= 5वां पद

= 37

अतः माध्यिका रन 37 है।

Case 2

विच्छिन्न श्रेणी के लिए माध्यिका

सर्वप्रथम तथ्यों को उनकी दी हुई आवृत्ति के अनुसार आरोही या अवरोही क्रम में व्यवस्थित करते हैं (आवृत्तियाँ एक से अधिक हो सकती है) और उसके पश्चात् संचयी आवृत्ति सारिणी तैयार करते हैं। माना N कुल आवृत्ति है।

(1) यदि N विषम है, तो माध्यिका वर्ग $\left(\frac{N+1}{2}\right)$ होगा। यह माध्यिका संख्या जिस संचयी आवृत्ति में आती है उसके सामने वाला पद ही माध्यिका होता है।

(2) यदि N सम है तो माध्यिका वर्ग $\left(\frac{N}{2}\right)$ और $\left(\frac{N}{2}+1\right)$ तो संचयी आवृत्ति सारिणी और उसके सामने का मूल्य ही माध्यिका होता है।

$$\text{माध्यिका} = \frac{\left(\frac{n}{2}\right)^{th} item + \left(\frac{n}{2}+1\right)^{th} item}{2}$$

उदाहरण

विश्वविद्यालय में प्रतिदिन अनुपस्थित होने वाले शिक्षकों के 147 दिनों की अनुपस्थिति की सारिणी को आवृत्ति सारिणी के रूप में नीचे प्रस्तुत किया गया है।

No. of absentees	**No. of days**	**No. of absentees**	**No. of days.**
5	1	11	10
6	5	12	70
7	11	13	4
8	14	15	1
9	16	18	1
10	13	20	1

माध्यिका की गणना करो:

हल:

यहाँ दिये गये पद आरोही क्रम में पहले से ही व्यवस्थित है।

No. of absentees	No. of days	Cumulative frequency (less than type)
5	1	1
6	5	1+5=6
7	11	1+5+11=17
8	14	1+5+11+14=31

9	16	= 47
10	13	= 60
11	10	= 70
12*	70	=140*
13	4	=144
15	1	=145
18	1	=146
20	1	=147

इसी प्रकार

पदों की कुल संख्या छ = 147 (विषम)

$$\therefore \left(\frac{N+1}{2}\right)^{th} \text{item} = \left(\frac{147+1}{2}\right) = 74^{th} \text{ item}$$

अतः 74जी पद 140 संचयी आवृत्ति वाली पंक्ति में आता है इसलिए मध्यांक=12

Case 3

मूल्यों के अवरोही क्रम में दिये जाने पर माध्यिका

जब समंक वर्ग-अन्तराल के रूप में दिया गया हो तो सर्वप्रथम संचयी आवृत्ति सारिणी बनाते हैं। कुल आवृत्ति संख्या को मानते हैं। तब देखते है कि वां पद संचयी आवृत्ति सारिणी के किस मध्यका वर्ग में हैं। माध्यिका वर्ग से माध्यिका मूल्य प्राप्त करते हैं। इसमें वर्ग-अन्तराल अपवर्जी श्रेणी में होना चाहिए।

माध्यिका = $l_i + \frac{h}{f_1}\left(\frac{N}{2} - c.f\right)$

यहाँ स = माध्यिका वर्ग की निम्न सीमा

छ त्र त्र कुल आवृत्ति

= वर्ग विस्तार(Range)=Class Width = (उच्च सीमा-निम्न सीमा)

= ;स2.स1द्ध

= माध्यिका वर्ग के पूर्व वाले वर्ग की संचयी आवृत्ति

1f◌ = माध्यिका वर्ग की आवृत्ति

उदाहरण

60 छात्रों के किसी पेपर में 75 में से निम्न अंक प्राप्त किये

Marks	15-20	20-25	25-30	30-35	35-40	40-45	45-50	50-55	55-60	60-65
No. of Students	4	5	11	6	5	8	9	6	4	2

माध्यिका की गणना करो:

हल :

Marks	**No. of Students**	**Cumulative Frequency**
15-20	4	4
20-25	5	9
25-30	11	20
30-35	6	26 c.f
35-40 l_i	5 f_i	31
40-45	8	39
45-50	9	48
50-55	6	54
55-60	4	58
60-65	2	60

कुल पदों क संख्या

N=60

$\therefore \frac{N}{2} = 30$

30 संचयी आवृत्ति 31 में आ रहा है

30 [$\because$ 26<30<31]

इसलिए माध्यिका वर्ग

35-40.

$\therefore l_i = 35$, h =(40-35) = 5, N = 60, f_i =5 and c.f = 26

अतः माध्यिका ए $= l_i + \frac{h}{f_1}\left(\frac{N}{2} - c.f\right)$

$$M = 35 + \frac{5}{5}\left(\frac{60}{2} - 26\right) = 39.$$

विभाजन मूल्य

हम जानते है कि मध्यका पदों का वह मूल्य है जो पद श्रेणी को दो भागों में बाँटती हैं जो श्रेणी को बराबर तथा एक भाग में कम या अधिक में बाँटती है।

इसी प्रकार श्रेणी को चार, पाँच, आठ, दस या सौ बराबर भागों में विभक्त किया जाता है। जो निम्न हैः

1) चतुर्थक
2) दशमक
3) शतमक

1) चतुर्थक

चतुर्थक वह मूल्य है जो किसी क्रमबद्ध श्रेणी को उनकी कुल आवृत्ति से भाग चार भागों में बाँटता है। मध्यका वह मूल्य है जो चर मूल्यों को कुल आवृत्ति से भाग देकर दो बराबर भागों में बाँटती है। इसको मध्य चतुर्थक या द्वितीय चतुर्थक कहते हैं और माध्यिका के निम्न आधे भाग को दो बराबर भागों ने बाँटते है जिसे निम्न चतुर्थक या प्रथम चतुर्थक और माध्यिका के उच्च आधे भाग को उच्च चतुर्थक या तृतीय चतुर्थक कहते हैं।

$$Q_1 = l_1 + \frac{\left(\frac{N}{4} - c.f\right)}{f_1}.h$$

$$Q_2 = l_1 + \frac{\left(\frac{N}{2} - c.f\right)}{f_1}.h = \text{ekf/;dk}$$

$$Q_3 = l_1 + \frac{\left(\frac{3N}{4} - c.f\right)}{f_1}.h$$

यहां

l_i = निम्न वर्ग-सीमा

c.f.= $\frac{N}{4}$ या $\frac{N}{2}$ या $\frac{3N}{4}$

से तुरन्त पहले वाले वर्ग की संचयी आवृत्ति

h = वर्ग अन्तराल

2) दशमक

दशमक वह मूल्य है जो श्रेणी को दस बराबर भागों में बाँटता है।
अतः

i^{th} (i = 1,2,3,4,5,6,7,8,9,10)

$$D_i = l_1 + \frac{\left(\frac{iN - c.f}{10}\right)}{f_1}.h$$

यदि हम तीसरे दशमक की गणना करना चाहते हैं तो हम उपरोक्त सूत्र में पत्र3 रखेगें जिससे हमें क्3 प्राप्त होगा

$$D_3 = l_1 + \frac{\left(\frac{3N - c.f}{10}\right)}{f_1}.h$$

इसी प्रकार हम सभी अंकों के दशमक की गणना कर सकते हैं। चिन्हों का अर्थ सामान्य या व्यवहारिक है।

3) शतमक

शतमक वह मूल्य है जो समंक मालों को100 बराबर भागों में बाँटती है।
अत रजी j^{th} (j=1,2,……100) है। शतमक की गणना निम्न सूत्र से कर सकते हैं:

$$P_j = l_1 + \frac{\left(\frac{jN - c.f}{100}\right)}{f_1}.h \quad ; \quad j=1,2,\ldots..,100$$

उदाहरण

11 वां शतमक ज्ञात करना हो तो $P_{11} = l_1 + \frac{\left(\frac{11N - c.f}{100}\right)}{f_1}.h$

चिन्हों का अर्थ व्यवहारिक या सामान्य है।

22.5 बहुलक को ज्ञात करने की विभिन्न विधियाँ

- **व्यक्तिगत श्रेणी द्वारा बहुलक ज्ञात करना**

यदि अवलोकित पदों की संख्या कम तो हम बहुलक ज्ञात करने के लिए निरीक्षण विधि का प्रयोग करते हैं। इस विधि में यह निरीक्षण करना होता है कि कौन सा मूल्य श्रेणी में सबसे अधिक बार आया है वही बहुलक होता है।

यदि पदों की संख्या अधिक हो तो, व्यक्तिगत श्रेणी का विछिन्न श्रेणी में परिवर्तित कर बहुलक ज्ञात किया जाता है।

- **विछिन्न श्रेणी द्वारा बहुलक ज्ञात करना**

इसमें बहुलक निकालने की दो विधियाँ हैं।

1. निरीक्षण द्वारा

जब श्रेणी में नियमितता हो और उसके पद सजातीय हो तो निरीक्षण द्वारा सबसे अधिक आवृत्ति वाले पद बहुलक होता है।

2. समूहीकरण द्वारा

जब श्रेणी में अनियमितता हो या दो या अधिक मूल्यों की आवृत्ति अधिक व आपस में समान हो तो समूहीकरण द्वारा बहुलक ज्ञात किया जाता है। सर्वाधिक आवृत्ति एक होने पर भी समूहीकरण रीति द्वारा बहुलक पद ज्ञात किया जा सकता हैं।

22.6 सारांश

माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत स्थिर एक ऐसा मूल्य है जिसका प्रयोग श्रेणी के सभी मूल्यों का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया जाता है। चूंकि एक माध्य समंकों के विस्तार के अन्तर्गत ही कहीं होता है, इसलिए कभी-कभी यह केन्द्रीय मूल्य का माप कहा जाता है|

22.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. सांख्यिकी माध्य की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए उसके उद्देश्य एवं कार्य बताइये।
2. माध्य निकालने की विभिन्न विधियों पर प्रकाश डालिए।
3. निम्नलिखित श्रेणी से बहुलक ज्ञात कीजिए:

आकार :	0-5	5-10	10-15	15-20	20-25	25-30	30-35
आवृत्ति :	1	2	5	14	10	9	2

4. निम्नलिखित आंकड़ों से माध्य, माध्यिका और बहुलक ज्ञात कीजिए:

प्राप्तांक	विद्यार्थियों की संख्या	प्राप्तांक	विद्यार्थियों की संख्या
10-20	4	10-60	124
10-30	16	10-70	137
10-40	56	10-80	146
10-50	97	10-90	150

5. निम्नलिखित आंकड़ों से माध्य, माध्यिका एवं बहुलक ज्ञात कीजिए:

वर्ग अन्तराल :	1-5	6-10	11-15	16-20	21-25	26-30	31-35	36-40	41-45
आवृत्ति :	7	10	16	32	24	18	10	5	1

22.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

- Sanchcti D. C. & Kapoor U. K., Statistics (Theory, Methods & Application) Sultan Chand & Sons, 1995.
- TUKEY, J. W., *Understanding Robust and Exploratory Data Analysis,* New York, NY, John Wiley & Sons, 1983.
- SCHMID, C. F., *Statistical Graphics: Design Principles and Practices,* New York, NY, John Wiley & Sons, 1983.
- CONOVER, W. J., *Practical Nonparametric Statistics,* 2nd ed., New York, NY, John Wirey & Sons, 1980.
- GIBBONS, J. D., *Nonparametric Statistical Inference,* New York, NY, Marcel Dekker, 1985. LEHMANN, E. L., *Nonparametrics: Statistical Methods Based on Ranks,* San Francisco, CA, Holden-Day, 1975.
- HoGG, R. V., AND A. ELLIOTT, *Probability and Statistical Inference,* 2nd ed., New York, NY, Macmillan Publishing Co., 1983..
- Singh, A.N. Statistics, 2007.
- BEHN, R. D., AND J. VAUPEL, *Quick Analysis for Busy Decision Makers,* New York, NY, Basic Books, Inc., 1982.
- HUFF, D., *How to Lie with Statistics,* New York, NY, W. W. Norton & Co., 1954.